हदीस सौरभ

भाग-5

मौलाना मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

विषय-सूची

रसूल (सल्ल॰) की हदीस और हमारा जीवन

कितने अच्छे रहे

उत्तम चीज़ें

ख़राबी की सूरत

बरज़ख़ (पितर लोक)

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम।

"ईश्वर के नाम से जो बड़ा दयावान, अत्यन्त कृपाशील है।"

प्राक्कथन

हदीस-सौरभ, भाग-5 को, जो हदीस-सौरभ का अंतिम भाग है, पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष हो रहा है। यह अल्लाह की विशेष सहायता और अनुकम्पा है कि इस शुभ-कृति का सम्पादन हो सका। अल्लाह ने अपने धर्म की सेवा का यह सौभाग्य प्रदान किया, इसके लिए हम जितना भी उसका आभार व्यक्त करें, थोड़ा है।

इस भाग में धर्म-आमंत्रण और आह्वान करने के विभिन्न पक्षों से सम्बद्ध हदीसें और उनकी व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। हदीस सौरभ का यह अन्तिम भाग है, इसलिए आवश्यक जान पड़ा कि किताब को समाप्त करते हुए इसके अन्तिम अध्यायों में सम्पूर्ण धर्म और उसकी अपेक्षाओं और उसकी मूलात्मा पर एक बार पुनः दृष्टि डाल ली जाए। अतएव, उन अध्यायों में हदीसों के प्रकाश में मानव के वैचारिक और व्यावहारिक जीवन पर एक गहरी दृष्टि डालते हुए यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि मनुष्य की सफलता और असफलता की धारणा जो हदीसों में प्रस्तुत की गई है, वह हर प्रकार के दोषों और त्रुटियों से मुक्त है। मनुष्य की वास्तविक सफलता इसमें नहीं है कि दुनिया में उसे सुख-सुविधापूर्ण जीवन प्राप्त हो, बल्कि मनुष्य की वास्तविक सफलता इसमें है कि सांसारिक जीवन में वह एक उच्चतम चरित्र का प्रतिरूप हो और अपने विचार और कर्म द्वारा दुनिया को वह मार्ग दिखाए जो सत्य, सफलता और कल्याण का मार्ग है, इसी मार्ग को क़ुरआन ने सिराते-मुस्तक़ीम (सीधा मार्ग) कहा है।

अल्लाह से प्रार्थना है कि वह इस सेवा को स्वीकृति प्रदान करे और अधिक-से-अधिक लोग इससे लाभ उठाएँ।

विनीत
मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ

धर्म की सेवा और इस्लामी आमंत्रण

इस्लाम सम्पूर्ण मानवता के लिए एक संदेश है। वह सीधा मार्ग है जिसपर चलकर मानवता लोक-परलोक की सफलता और कल्याण को प्राप्त हो सकती है और अल्लाह की प्रसन्नता और अनुग्रह की पात्र हो सकती है। इस्लाम वास्तव में अल्लाह के आदेशानुपालन का धर्म है। मुस्लिम वह है जो अल्लाह का आज्ञाकारी हो। इस्लाम हमें अल्लाह की उस योजना से सूचित करता है, जिसके अन्तर्गत उसने जगत् की सृष्टि की है। वह बताता है कि कौन-सी धारणाएँ सत्य हैं और मानवों के लिए कौन-से कर्म उचित हैं। वह हमें इससे सूचित करता है कि किन धारणाओं और आस्थाओं को अल्लाह ने असत्य घोषित किया है और कौन-से कर्म हैं जो उसकी दृष्टि में सत्य और न्याय के विपरीत हैं। इस स्थिति में इस्लाम की शिक्षाओं की उपेक्षा करके किसी व्यक्ति के लिए सम्भव ही नहीं कि वह धर्म के सीधे-सच्चे मार्ग पर चल पड़े। क़ुरआन में स्पष्टतः कहा गया है—

> "आज मैंने तुम्हारे लिए तुम्हारे धर्म को पूर्ण कर दिया और तुमपर अपना अनुग्रह पूर्ण कर दिया और मैंने तुम्हारे लिए धर्म के रूप में इस्लाम को पसन्द किया।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-3)।
>
> एक दूसरे स्थान पर कहा गया है—
>
> "जो इस्लाम के अतिरिक्त कोई और धर्म तलब करेगा तो उसकी ओर से कुछ भी स्वीकार न किया जाएगा और आख़िरत में वह घाटा उठाएगा।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-85)।

ईश्वर की ओर से जितने भी नबी आए, वे सब-के-सब इसी सच्चे धर्म के आमंत्रण-दाता थे। उनका यह दायित्व था कि वे अल्लाह के सन्देश को लोगों तक पहुँचाएँ और उन्हें विनाश और तबाही से बचाने की चेष्टा करें। अल्लाह के अन्तिम रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) किसी विशेष क़ौम के लिए नहीं बल्कि संसार की समस्त क़ौमों और सम्पूर्ण मानवता के लिए रसूल बनाकर भेजे गए। आप (सल्ल.) ने दुनिया को जो सन्देश दिया और जिस धर्म की ओर लोगों को बुलाया वह वही है जिसकी ओर दूसरे समस्त नबी और रसूल आमंत्रित करते रहे हैं। पिछली क़ौमें नबियों की लाई हुई शिक्षाओं और सन्देश को सुरक्षित रखने में असमर्थ रही हैं। नबियों की शिक्षाओं में बहुत-से हस्तक्षेप हुए। जिस रूप में वे शिक्षाएँ पाई जाती हैं, उन्हें प्रमाणिक नहीं कहा जा सकता। अब यह फ़ैसला करना आसान नहीं है कि उनमें सत्य कितना शेष रह गया है और असत्य की मिलावट कितनी हो चुकी है।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) के द्वारा वास्तव में सत्य-धर्म का नवीनीकरण हुआ है। आप (सल्ल.) की रिसालत (पैग़म्बरी) ने सत्य-धर्म को जीवित कर दिया और आज वह पूर्ण और प्रमाणिक रूप में हमारे पास मौजूद है। यह धर्म सम्पूर्ण मानवता की सबसे बड़ी आवश्यकता है। यह धर्म अपनी प्रकृति की दृष्टि से भी किसी विशेष जाति और वंश में सीमित होकर नहीं रहना चाहता। इसकी प्रकृति में व्यापकता एवं सार्वभौमिकता है। यह अपने रहमत के दामन में सम्पूर्ण मानवता को समेट लेना चाहता है। लेकिन इसी के साथ इसकी विशिष्टता यह भी है कि यह ज़ोर-ज़बरदस्ती को पसन्द नहीं करता, यह धर्म संसार के सामने वरदान और दयालुता के रूप में प्रकट होता है और चाहता है कि लोग उसे स्वयं बहुमूल्य धन और शुभ समझते हुए उससे लाभान्वित हों। किन्तु उसे दुनिया के सामने कौन प्रस्तुत करे? उसका सन्देश विभिन्न जातियों और दुनिया में बिखरी हुई

करोड़ों की आबादियों तक कैसे पहुँचे? अल्लाह ने इसी आवश्यकता को देखते हुए एक समुदाय को उठाया जो मुस्लिम समुदाय के नाम से मशहूर है। इस समुदाय का पदीय दायित्व है कि यह ईश्वर के बन्दों तक ईश्वर का सन्देश पहुँचाने में कदापि सुस्ती न दिखाए। क़ुरआन में है—

"तुम एक उत्तम समुदाय हो जो लोगों के सामने लाया गया है। तुम नेकी का हुक्म देते हो और बुराई से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो।"

(क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-110)

एक दूसरे स्थान पर कहा गया है—

"और इसी प्रकार हमने तुमको एक बीच का समुदाय बनाया है ताकि तुम सारे मनुष्यों पर हक़ की गवाही क़ायम करनेवाले बनो और रसूल तुमपर गवाह हो।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, अल-आयत-143)

एक जगह कहा गया—

"और तुम्हें एक ऐसे समुदाय का रूप धारण कर लेना चाहिए जो नेकी की ओर बुलाए और भलाई का आदेश दे और बुराई से रोके। यही सफलता प्राप्त करनेवाले लोग हैं।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले इमरान, आयत-104)

इस समुदाय का दायित्व यह है कि जिस प्रकार अल्लाह के रसूल ने उस तक सन्देश पहुँचाया है उसी प्रकार इस सन्देश के प्रचार-प्रसार के लिए सचेष्ट हो। इसके बिना यह समुदाय किसी तरह भी अपने दायित्व से निवृत्त नहीं हो सकता। दुनिया में जो बिगाड़ और उपद्रव पाया जाता है उसे समाप्त करने के लिए भी आवश्यक है कि सत्य-धर्म की न्याय-संगत स्थापना के लिए लोगों को तैयार किया जाए। संसार मानवों की आविष्कृत व्यवस्थाओं की ख़राबियों से भलीभाँति परिचित हो चुका है। उसे एक ऐसे धर्म और जीवन-प्रणाली

की आवश्यकता है, जो न्याय पर आधारित हो, जिसका अनुपालन हर प्रकार की भलाई की ज़मानत हो।

फिर मानव के प्रति सहानुभूति और नैतिकता की अपेक्षा भी यही है कि मानवों को सबसे बड़े विनाश अर्थात नरक की यातना से बचाने की चिन्ता की जाए। जो चीज़ लोगों को नरक की आग से बचा सकती है वह अल्लाह की बन्दगी और उसके आदेशानुपालन के सिवा कुछ नहीं हो सकता। मुस्लिम समुदाय अपने पदीय कर्तव्य की ओर से ग़ाफ़िल है। धार्मिक निमंत्रण के लिए जो कोशिश होनी चाहिए और जिस तरह होनी चाहिए वह नहीं हो पा रही है, जबकि पदीय दायित्व के पूरा करने से ही मुस्लिम समुदाय की वे समस्याएँ भी हल हो सकती हैं जिनमें यह समुदाय उलझा हुआ है और उसकी ऊर्जा का बड़ा भाग उनमें विनष्ट हो रहा है।

यदि मुस्लिम समुदाय अपने पदीय कर्तव्य को पूरा करने की चिन्ता करता है तो अल्लाह की सहायता और उसका समर्थन उसे अवश्य प्राप्त होगा। अल्लाह आज्ञाकारी बन्दों को कभी भी अपनी सहायता से वंचित नहीं रखता। फिर लोगों के दिल उसी की अंगुलियों के बीच हैं, दिलों को सत्य की ओर फेरनेवाला वही है।

सत्य-धर्म

वह धर्म जिसका आमंत्रण देना है

धर्म का आमंत्रण देना एक अनिवार्य कर्तव्य है, इस कर्तव्य को पूरा करने के लिए आवश्यक है कि हम उस धर्म की वास्तविकता, उसकी प्रवृत्ति और उसकी मूलात्मा से भली-भाँति परिचित हों जिसका निमंत्रण इस दुनिया को देना चाहते हैं। क्योंकि ज्ञान के बिना धर्म का सही परिचय नहीं करा सकते। यह वह धर्म है जिसके द्वारा मनुष्य के स्वयं अपने मूल्य का भी निर्धारण होता है और उस मूल्य की सुरक्षा भी इसी धर्म के द्वारा सम्भव है। धर्म के आमंत्रण का अर्थ व आशय यह है कि मनुष्य को सही अर्थों में अपने मूल्य का ज्ञान और प्रतीति हो जाए और वह जान ले कि धर्म के अनुपालन का अर्थ इसके सिवा और कुछ नहीं कि मनुष्य अपने आपको पहचान ले और अल्लाह ने उसे जो महानता प्रदान की है उसे वह विनष्ट न होने दे। इस धर्म के अनुपालन में मनुष्य का अपना भला और इसके विपरीत आचरण में उसकी अपनी ही हानि है।

धर्म की शिक्षा का उद्देश्य यह है कि मनुष्य को अपनी प्रकृति के अनुसार जीवन व्यतीत करना आ जाए और वह उस जीवन-शैली को अपनाए जिसकी खोज सदैव मनुष्य को रही है। जिस किसी ने इसे अपनाया, अमृत्व और रमणीयता उसकी नियति बन गई। उसके जीवन में प्राकृतिक पवित्रता और उसके अस्तित्व ने यह पात्रता प्राप्त कर ली कि अल्लाह की शाश्वत अनुकम्पाएँ उसके हिस्से में आएँ और वह अशुद्ध अक्षर की तरह कभी मिटाया न जा सके। धर्म के अनुपालन का अर्थ ही यह होता है कि मनुष्य अँधेरों से निकलकर प्रकाश में आ गया। अब वह सब कुछ उसके लिए है जिसकी चाहत

और कामना को जीवन कहते हैं, अर्थात् ख़ुशियाँ, हर्षोल्लास, ईश्वर का सामीप्य और अमृत्व!

धर्म का आमंत्रण देने का अर्थ यह है कि लोगों को ऐसे विचार से परिचित कराया जाए जिससे उच्चतर किसी विचार की हम कल्पना भी नहीं कर सकते और उन्हें उस चीज़ का अभिलाषी बनाया जाए जिससे बढ़कर कोई चीज़ मुनष्य के लिए प्रिय नहीं हो सकती है। धर्म वह जीवन-पद्धति और जीवन-शैली है जो अत्यन्त आकर्षक है, और जो हृदय और दृष्टि दोनों को अपनी ओर आकृष्ट करती है, जिसकी ओर आदमी खिंचे तो खिँचता चला जाए। धर्म का ज्ञान उसके लिए एक सौंदर्य-बोध बन जाए, जिसकी उपेक्षा करना अपनी प्रकृति का अपमान है; यदि कोई उसकी उपेक्षा करता है तो सत्य की दृष्टि में वह अत्याचारी और अपराधी होगा।

धर्म अल्लाह की आज्ञा का पालन भी है और ईश्वर के ख़याल और उसके स्मरण से आनन्दित होना भी। यह धर्म ज्ञान भी है और कर्म भी। यह धर्म मनुष्य को उसके उच्च्य स्थान से परिचित कराता और उसे हर प्रकार की बदहाली और विनाश से सुरक्षित रखता है। धर्म का ज्ञान वास्तव में स्वयं आत्म-ज्ञान से भिन्न कोई चीज़ नहीं है। इसी लिए अल्लामा हमीदुद्दीन फ़राही (रह.) धर्म को अन्तर्विहार से अभिहित करते हैं। इससे उनकी वैचारिक गहराई का अनुमान भली-भाँति किया जा सकता है। धर्म अचेतन का नाम नहीं है, न वह शुष्कता की शिक्षा देता है। धर्म नाम है मन के सूक्ष्म व्यापार का। ईश्वर की प्रशंसा एवं स्तुति और उससे प्रेम ही वास्तव में धर्म का मूलाधार हैं। अल्लाह का गुणगान ही हमारा वास्तविक जीवन है। जैसे फूल का महकना ही वास्तव में फूल का होना है। यह स्तुति और उसकी प्रशंसा प्रेम से ओत-प्रोत होती है। इस ईश-प्रशंसा से इसका भी पता चलता है कि बन्दा अल्लाह का अत्यन्त कृतज्ञ है। अल्लाह ने उसपर अनुकम्पाओं की जो बारिश की है, उसका उसे पूरा एहसास

है। उसने कण को सूर्य की श्रेणी तक पहुँचाया और उसे वह कुछ प्रदान किया जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। उसने मनुष्य के भविष्य को उसके वर्तमान से अधिक विश्वसनीय और उत्तम बनाया, उसने वर्तमान जीवन को उसके भविष्य से सम्बद्ध कर दिया और दोनों के मध्य इतना गहरा सम्बन्ध स्थापित कर दिया कि बन्दा अपने वर्तमान के दर्पण में अपने शानदार और रमणीय भविष्य का अवलोकन कर सकता है। यही वह चीज़ है जो मोमिन के जीवन में ईमान की शक्ति बनकर क्रियाशील होती है और व्यक्ति को सन्देह, दुविधा और अविश्वास के जीवन से मुक्त करती है और बन्दा जीवन ही नहीं, मृत्यु के रहस्य से भी परिचित हो जाता है। वह जान जाता है कि मृत्यु जीवन के अन्त का नाम नहीं है। बल्कि मृत्यु से शाश्वत जीवन का आरम्भ होता है। मृत्यु जिसे जीवन की संध्या कहते हैं, संध्या नहीं, शाश्वत जीवन का प्रभात है।

यह धर्म-नैतिकता भी है और चरित्र भी है। किन्तु नैतिकता वह जो व्यापकता लिए होती है और चरित्र वह जिसमें मानवों ही को नहीं बल्कि संपूर्ण जगत् को वशीभूत करने की शक्ति होती है। यहाँ अनमनापन और शिथिलिता और साहसहीनता नहीं पाई जाती। यहाँ कोई भावरिक्त और उदास संध्या नहीं पाई जाती। यहाँ विश्वास होता है, भरोसा होता है। यहाँ जीवन-रूपी भवन की नींव ईशपरायणता और ईश्वर की प्रसन्नता पर रखी गई होती है, जिससे बढ़कर किसी सुदृढ़ शिला की कल्पना भी नहीं कर सकते। यहाँ निराशा और पराजय नहीं। यहाँ ऐसा कोई दोष नहीं पाया जाता जिसे लोगों की दृष्टि से छिपाने की आवश्यकता हो।

यह वह धर्म है सम्पूर्ण मानवता को जिसकी आवश्यकता है। यह मानव की मानसिक और आध्यात्मिक आवश्यकता भी है और उसकी नैतिक और सामाजिक आवश्यकता भी। यह धर्म जीवन की उलझी हुई समस्याओं का हल भी है और मानव-आत्मा के लिए शान्ति और

आनन्द भी है। इस्लाम के नाम से तो सभी परिचित हैं, किन्तु इस्लाम की अर्थवत्ता और उसके मूल्य से लोगों को परिचित कराना मुस्लिम समुदाय का पदीय दायित्व है। काश! इस ओर ध्यानाकृष्ट कराने का सौभाग्य हमें प्राप्त हो सके।

नैसर्गिक धर्म

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा कि–

> "प्रत्येक बच्चा प्रकृति पर पैदा होता है, फिर उसके माता-पिता उसे यहूदी या ईसाई या मजूसी बना देते हैं। जिस प्रकार पशुओं के बच्चे स्वस्थ और पूर्ण पैदा होते हैं। क्या तुम उनमें कोई अपूर्णता पाते हो?" इसके पश्चात कुरआन की सूरा-30 रूम, आयत-30 का पाठ किया, "अल्लाह की (बनाई हुई) उस प्रकृति का अनुसरण करो जिसपर उसने लोगों को पैदा किया। अल्लाह की बनाई हुई संरचना बदली नहीं जा सकती। यही सीधा और ठीक धर्म है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि इस्लाम एक नैसर्गिक धर्म है। मनुष्य का प्रत्येक नवजात शिशु जिस प्रकृति पर जन्म लेता है और जो क्षमता लेकर दुनिया में आता है, इस्लाम की उसके साथ आत्यान्तिक अनुकूलता पाई जाती है। बच्चे की प्रकृति वास्तव में जिस मार्गदर्शन की अपेक्षा करती है, वह इस्लाम के अतिरिक्त कोई और धर्म नहीं हो सकता। किन्तु होता यह है कि बच्चे के अभिभावक या उसके माता-पिता इस्लाम के अतिरिक्त यदि किसी अन्य धर्म के अनुयायी हैं, तो वे अपने बच्चे को उसी धर्म के साँचे में ढाल देते हैं। इसलिए बच्चा मुस्लिम होने के बजाय यहूदी, ईसाई या मजूसी या किसी और अन्य धर्म का अनुयायी बन जाता है और उसकी वास्तविक प्रकृति विकृत होकर रह जाती है। विचार,

धारणा और चरित्र की दृष्टि से उसे अल्लाह का वफ़ादार और आज्ञाकारी बन्दा बनकर दुनिया में रहना चाहिए था, लेकिन इसके बिलकुल विपरीत वह अल्लाह का अवज्ञाकारी और अपनी प्रकृति का विरोधी मात्र बनकर रह जाता है। नबी (सल्ल॰) ने इस तथ्य को स्पष्ट करने के लिए चौपायों अर्थात् भेड़, बकरी या ऊँटनी का उदाहरण प्रस्तुत किया कि ये पशु अपनी माँ के पेट से ठीक-ठाक पैदा होते हैं। उनके शरीर में कोई ऐब नहीं होता। वे अपने ठीक-ठाक शरीर के साथ बड़े होते हैं, यह और बात है कि किसी दुर्घटना के कारण उनका कोई अंग नष्ट हो जाए। ठीक इसी प्रकार बिगाड़ मनुष्य में उस समय पैदा होता है जब उसे उसकी मूल-प्रकृति से फेरकर गुमराही के पथ पर चला दिया जाता है। नबी (सल्ल॰) ने अपनी बात की पुष्टि में सूरा रूम की उस आयत का पाठ किया जिसमें अल्लाह ने अपनी बनाई हुई प्रकृति का उल्लेख करते हुए कहा है कि मनुष्य को उस प्रकृति का अनुसरण करना चाहिए जिसपर उसे अल्लाह ने पैदा किया है। अल्लाह की संरचना और उसकी बनाई हुई प्रकृति में किसी प्रकार का परिवर्तन वैध नहीं हो सकता। मुनष्य के लिए उचित नीति यही हो सकती है कि वह मनगढ़त पंथों और धर्मों को त्यागकर उस धर्म को अपनाए जो अल्लाह की ओर से अवतरित हुआ है और जो उसकी उस प्रकृति के अनुकूल है जिसपर उसे अल्लाह ने पैदा किया है।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि मेराज की रात 'ईलिया' के स्थान पर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सेवा में दो प्याले लाए गए, एक शराब का और दूसरा दूध का। आप (सल्ल॰) ने उन दोनों की ओर देखा, फिर दूध को ले लिया। इसपर हज़रत जिबरील (अलै॰) ने कहा, "अल्लाह को धन्यवाद जिसने आपका प्रकृति की ओर मार्गदर्शन किया। यदि आप शराब का प्याला ले लेते तो आपका समुदाय पथभ्रष्ट हो जाता।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में नैसर्गिक धर्म की उपमा दूध से दी गई है और गुमराही और पथभ्रष्टता को मदिरा से अभिहित किया गया है। दूध पूर्ण आहार है। इसके विपरीत मदिरा चरित्र ही को भ्रष्ट नहीं करती, बल्कि शारीरिक स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है। इन उपमाओं से भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम मानव-जाति के लिए दूध की तरह शुभ-दायक ईश्वरीय अनुग्रह है। इस्लाम की बरकतों की गणना करना सम्भव नहीं; उसके मुक़ाबले में ग़ैर-इस्लामी तरीक़े और ग़ैर-इस्लामी विचार और धारणाएँ मानव-जीवन के लिए मात्र यातना है। उनके द्वारा न वैचारिक और ज्ञानात्मक विकास सम्भव है और न उनके द्वारा मानव-समाज में सही अर्थों में न्याय की स्थापना हो सकती है।

(3) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"मैंने एक रात देखा, जिस दशा में कि सोया हुआ व्यक्ति देखता है कि जैसे हम उक़बा-बिन-राफ़ेअ के घर में हैं और हमारे पास इब्ने-ताब की नर्म और तर खजूरें लाई गईं। मैनें इसका यह अर्थ निकाला कि दुनिया में हमारे लिए उच्चता और आख़िरत में अच्छा परिणाम है, और यह कि हमारा धर्म अत्यन्त उत्तम और विशुद्ध है।"

(हदीस : मुस्लिम, अबू-दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि दुनिया में वास्तविक सफलता और उच्चता अल्लाह के रसूल और उसके अनुयायियों के लिए ही रखी गई है और क़ियामत के दिन जिसमें लोगों के अन्तिम परिणाम के विषय में निर्णय किया जाएगा तो सुख-परिणाम भी आप (सल्ल॰) के और आप (सल्ल॰) के अनुयायियों के हिस्से में आएगा। अल्लाह के अवज्ञाकारी, सरकश और विद्रोही लोगों का उस दिन बुरा परिणाम होगा। फिर उनके लिए इसका कोई अवसर न होगा कि वे अपने अपराधों का प्रायश्चित कर सकें। अपमानित दशा और अल्लाह के

अज़ाब से वे कभी भी मुक्त न हो सकेंगे। सत्य-धर्म अर्थात् इस्लाम के विषय में कहा कि यह एक उत्तम और सुखद धर्म है जो हमें प्रदान किया गया है। इस धर्म में जो उत्तमता, निर्माल्य, सुन्दरता और आकर्षण पाया जाता है, वह इसका प्रमाण है कि यह धर्म अपने अनुयायियों की सफलता, उच्चता और आख़िरत में उनके सुखद परिणाम का कारण है। नबी (सल्ल०) ने इन तथ्यों को अपने एक स्वप्न के अर्थ के रूप में व्यक्त किया।

(4) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने कहा—

> "प्रकृति पाँच चीज़ें हैं या पाँच चीज़ें प्रकृति में से हैं : ख़तना करना, नाभि के नीचे के बाल मूँडना, नाख़ून काटना, बग़ल के बाल उखेड़ना और मूँछ कतरना।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् व्यक्ति यदि अच्छी रुचि और पाक व सुथरे स्वभाव का है तो अनिवार्यतः इन पाँच चीज़ों को पसन्द करेगा। और इस तरह पसन्द करेगा कि मानो ये चीज़ें जन्मजात उसकी प्रकृति के अनुकूल हैं। इनके लिए किसी पुष्टि और शिक्षा की कुछ अधिक आवश्यकता नहीं। ये पाँचों चीज़ें ऐसी हैं जिनसे पवित्रता और सुथराई प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त इनसे स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभ भी प्राप्त होते हैं। अतएव कुछ डॉक्टरों का शोध है कि जिन लोगों के ख़तने हुए होते हैं, वे गुप्तांग के कैंसर (Panis Cancer) से सुरक्षित रहते हैं।

मूँछें कतरवाने से सफ़ाई के अतिरिक्त स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभ यह होता है कि ऊपर के होंठ की ग्रंथि (Gland) में ऐसे हार्मोंस पैदा होते हैं जिनके लिए बाह्य प्रभाव और पानी अति आवश्यक है। मूँछें पानी और हवा को रोकती हैं, इसलिए उनका कतरवाना स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभदायक रहता है। कुछ लोगों की दृष्टि में मूँछें यहाँ तक कतरवाना चाहिए कि होंठ का किनारा खुल जाए।

एक दूसरी हदीस में नबी (सल्ल॰) ने इन पाँच चीज़ों के अतिरिक्त पाँच अन्य चीज़ों को भी प्रकृति में सम्मिलित किया है। वे हैं : सिर में माँग निकालना जिसके सिर पर बाल हों (अर्थात् बाल उलझे हुए हों यह ठीक नहीं), कुल्ली करना, नाक साफ़ करना, दातून करते रहना और मल-मूत्र त्याग करने के पश्चात गुप्तेन्द्रियों को पानी से धोना। ये पाँच चीज़ें भी प्राकृतिक और शुद्ध अभिरुचि के ठीक अनुकूल हैं। नबी (सल्ल॰) के कथन से भली-भाँति इसका अनुमान किया जा सकता है कि शुद्धता और सफ़ाई-सुथराई को इस्लाम कितना पसन्द करता है।

(5) हज़रत सौबान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "तीन काम ऐसे हैं जो किसी के लिए वैध नहीं। जो व्यक्ति इमाम हो उसके लिए वैध नहीं कि लोगों को छोड़कर केवल अपने ही लिए दुआ करे, दूसरे यह कि (किसी के द्वार पर जाए) इजाज़त लिए बिना घर के अन्दर झाँके। यदि कोई यह हरकत करता है तो समझो कि इजाज़त लिए बिना घर के भीतर चला गया, (जो उसके लिए वैध नहीं)। तीसरे यह कि पेशाब या पाख़ाने की तीव्र हाजत होने पर कोई व्यक्ति इससे पहले कि उनसे निवृत्त हो नमाज़ पढ़नी शुरू कर दे, उसके लिए यह वैध नहीं।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या

इस हदीस में जो बातें बताई गई हैं वे अत्यन्त स्वाभाविक और उच्च सभ्यता की हैं। इमाम जब दुआ कर रहा हो तो यह निर्दयता और विरक्तता की बात होगी कि वह केवल अपने लिए दुआ माँगे, जमाअत में सम्मिलित दूसरे लोगों की उपेक्षा कर दे। उसे चाहिए कि जब दुआ माँगे तो सभी के लिए माँगे। इसका एक लाभ यह होगा कि उसका अपने पीछे नमाज़ पढ़नेवालों के साथ सम्बन्ध बढ़ेगा।

सामाजिकता की दृष्टि से देखा जाए तो इसके महत्व से कोई इनकार नहीं करेगा।

अनुमति के बिना किसी के घर में झाँकना अत्यन्त अशिष्ट बात है। नबी (सल्ल०) कहते हैं कि यह भीतर झाँकना ऐसा है मानो अनुमति के बिना घर में प्रवेश कर गया। यह बात भी जान लेनी ज़रूरी है कि पेशाब-पाख़ाने की तीव्र हाजत हो तो इससे निवृत्ति होने से पहले नमाज़ न पढ़े। क्योंकि इस स्थिति में एकाग्रता के साथ नमाज़ अदा नहीं कर सकते। और आदमी के स्वास्थ्य पर भी इसका बुरा प्रभाव पड़ता है। ये शिक्षाएँ कितनी प्राकृतिक हैं और हमारी आसानी और भलाई का कितना ध्यान रखा गया है। इसे हर व्यक्ति सहज ही समझ सकता है।

(6) हज़रत मिक़दाम-बिन-मादीकरिब (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने कहा--

"जो खाना तुम खाओ वह तुम्हारे लिए सदक़ा (दान) है, और जो खाना तुम अपने बच्चों को खिलाओ वह भी तुम्हारे लिए सदक़ा है। और जो तुम अपनी पत्नी को खिलाओ वह भी तुम्हारे लिए सदक़ा है, और जो खाना तुम अपने सेवक को खिलाओ वह भी तुम्हारे लिए सदक़ा है।"

(हदीस : अहमद)।

व्याख्या : नबी (सल्ल०) के इस कथन के बाद इस्लाम के नैसर्गिक धर्म होने में किसको सन्देह हो सकता है। यह हदीस बताती है कि मुस्लिम के लिए केवल वही ख़र्च करना सदक़ा नहीं है जो वह दूसरों की ज़रूरत पूरी करने में और दीन-दुखियों पर ख़र्च करता है। बल्कि जो माल वह अपने परिवार और बाल-बच्चों पर ख़र्च करता है और जो खाना वह अपनी पत्नी या अपने बच्चों और अपने सेवकों को खिलाता है, उसकी गणना भी अल्लाह के यहाँ सदक़ों में होती है। सच तो यह है कि मुस्लिम के हर कर्म से, चाहे उसका सम्बन्ध

उसकी व्यक्तिगत आवश्यकताओं ही से क्यों न हो, उसके आज्ञाकारी और सच्चा बन्दा होने का प्रदर्शन होता है।

(7) हज़रत उसमान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

> "जिस किसी ने इशा की नमाज़ जमाअत के साथ अदा की उसने मानो अर्धरात्रि तक इबादत की, और जिसने प्रातः काल की नमाज़ (फ़ज्र) जमाअत के साथ अदा की उसने मानो पूरी रात्रि इबादत में गुज़ारी।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह एक महत्वपूर्ण हदीस है। जो बात इस हदीस में बयान हुई है, वह एक विशेष अवसर की है। रिवायत में है कि एक बार नबी (सल्ल॰) रात्रि-जागरण और रात में नमाज़ में खड़े होने की महत्ता बयान कर रहे थे। इसपर कुछ लोगों ने कहा कि हम श्रमिक लोग हैं। दिन भर हम मेहनत-मज़दूरी करते हैं। रात में तहज्जुद के लिए उठना हमारे लिए सम्भव न होगा। (तहज्जुद उस नमाज़ को कहते हैं जो रात्रि की बेला में उठकर पढ़ी जाती है।) इस अवसर पर आप (सल्ल॰) ने कहा कि जिसने इशा की नमाज़ जमाअत के साथ अदा की उसने मानो अर्धरात्रि तक इबादत में गुज़ारी और जिसने जमाअत के साथ फ़ज्र की नमाज़ अदा की उसने मानो पूरी रात नमाज़ में गुज़ारी। सारांश यह है कि तुम्हारे लिए यह रात में उठकर नमाज़ पढ़ना है कि तुम जमाअत के साथ इशा और फ़ज्र की नमाज़ अदा करते रहो। विचार करने से मालूम होता है कि जागरण की अवस्था में नमाज़ अदा करके जो व्यक्ति अपना सम्बन्ध अपने रब से व्यक्त करता है, तो इस सम्बन्ध का निद्रा की अवस्था में भी विच्छेद नहीं होता, बल्कि यह सम्बन्ध शेष रहता है। श्रमिक के लिए क्योंकि रात में उठना अत्यन्त कठिन है, इसलिए यदि वह अपने ईमान और विश्वास में सच्चा है तो उसका सोना और विश्राम करना भी उपासना में शामिल है। अलबत्ता जो लोग रात्रि में उठ सकते हों उन्हें रात में उठकर इबादत करने का संकल्प करना चाहिए। उनका यह आचरण

इस बात का प्रमाण होगा कि निद्रा ही नहीं, रात में उठकर उपासना करना भी उनके लिए सुखद कीर्ति है। उन्हें आनेवाले क़ियामत के दिन का इतना ख़याल रहता है कि वह रात में उन्हें अल्लाह के आगे खड़े होने पर विवश करता है। रातों में उठ-उठकर वे अपने रब को राज़ी करने में व्यस्त हो जाते हैं और यह उनके लिए शक्ति-भाव के परितोष का साधन भी होता है।

(8) हज़रत हकीम-बिन-हिज़ाम (रज़ि॰) से उल्लिखित है, वे बताते हैं कि उन्होंने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! उन कामों के बारे में हमें बताएँ जो मैं अज्ञानकाल में करता था। नाते-रिश्ते को जोड़ना, गर्दन छुड़ाना और सदक़ा आदि। क्या मुझे इन कामों का प्रतिफल मिलेगा, अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम उन भलाइयों ही पर मुस्लिम हुए जो गुज़रे हुए समय में कर चुके हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मालूम हुआ कि नाता-रिश्ता जोड़ना, गर्दन छुड़ाना (ग़ुलाम को आज़ाद कराना) और सदक़ा आदि इस्लाम ही है। इस्लाम इन नेकियों ही को विकसित करने के लिए आया है। इस्लाम को अपनाने का अर्थ ही यह होता है कि आदमी इन नेकियों को अपनाए और इनकी ओर से कदापि बेपरवाह न हो। इन नेकियों का इतना महत्व है कि यदि कोई व्यक्ति इस्लाम स्वीकार करने से पहले भी इस तरह की नेकियाँ करता रहा है तो उसकी ये नेकियाँ कदापि नष्ट न होंगी। मानो इन नेकियों की सीमा तक उसके जीवन में इस्लाम पहले से मौजूद था। इन नेकियों का उसे बदला भी दिया जाएगा।

(9.) हज़रत इब्ने-आइद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ उमर! तुमसे (मूल रूप से) लोगों के कर्मों के विषय में नहीं पूछा जाएगा, बल्कि तुमसे प्रश्न प्रकृति (इस्लाम) के विषय में होगा।" (हदीस : अल-बैहक़ी)

व्याख्या : यह एक महत्वपूर्ण हदीस है। रिवायत में है कि नबी (सल्ल.) एक जनाज़े (शव) के साथ गए। जब जनाज़ा रखा गया तो उमर (रज़ि.) ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! आप इसके जनाज़े की नमाज़ न पढ़ें। यह व्यक्ति फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी) था। (जनाज़े की नमाज़ वह नमाज़ है, जिसमें विशेष रूप से मृतक के लिए प्रार्थना की जाती है।) नबी (सल्ल.) ने लोगों की ओर देखा और कहा कि क्या किसी ने इस व्यक्ति को इस्लाम का कोई काम करते देखा है? एक व्यक्ति ने कहा, हाँ, ऐ अल्लाह के रसूल! एक रात अल्लाह की राह में इसने पहरा दिया था। अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने उसके जनाज़े की नमाज़ पढ़ी। अपने हाथ से मिट्टी भी दी और हज़रत उमर से वह बात कही जो इस हदीस में उद्धृत की गई है। आप (सल्ल.) के कथन का अर्थ यह है कि आदमी चाहे कर्म में कितना ही पीछे हो, किन्तु यदि वह मोमिन है तो उसकी कोताहियों के कारण उसके ईमान की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। ईमान ही वह मूल प्रकृति है जो जीवनात्मा, जीवन का सार और सारी चीज़ों में सबसे बढ़कर मूल्यवान है। मोमिन होने के नाते से किसी व्यक्ति का जो हक़ होता है, उसे अदा करने में झिझक नहीं होनी चाहिए। दिवंगत मोमिन की क्षमा-याचना के लिए प्रार्थना करनी चाहिए और उसके विषय में सदाशा से काम लेना ही अधिक उचित है। किसी के विषय में फ़ैसला करने के लिए उस चीज़ को देखना चाहिए जो उसके दीन और ईमान का प्रतीक हो। जहाँ तक कर्मों का सम्बन्ध है, तो यह नहीं भूलना चाहिए कि अल्लाह की दया बहुत व्यापक है।

इस हदीस में हमें सावधान किया गया है कि किसी मृत व्यक्ति के बुरे कर्मों और उसकी ज़ाहिरी अवज्ञा की चर्चा नहीं करनी चाहिए बल्कि उसकी अच्छी बातों को सामने लाना चाहिए। एक जगह आप (सल्ल.) ने कहा भी है कि "तुम अपने मुर्दों की चर्चा भलाई के साथ करो।"

सहज धर्म

(1) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) कह रहे थे—

> "जब क़ियामत के दिन काफ़िर को लाया जाएगा तो उससे कहा जाएगा कि बताओ यदि तुम्हारे पास धरती भर सोना होता तो क्या तुम (यातना से छुटकारा पाने के लिए) उसे फ़िदिये (अर्थदण्ड) के रूप में दे देते? वह कहेगा कि हाँ। इस पर उससे कहा जाएगा कि तुमसे तो इससे बहुत ही हलके और कम की माँग की गई थी (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात् अपनी अवज्ञा और सरकशी के कारण आज तुम्हें जिस यातना को भुगतना पड़ रहा है उससे तुम्हें हमारे नबियों ने सांसारिक जीवन में सावधान किया था। और जिस यातना से छुटकारा पाने को आज तुम धरती भर सोना, यदि तुम्हारे पास हो तो उसे भी, फिदिये में देने पर राज़ी हो। लेकिन दुनिया में जो तुमसे माँग की गई थी वह बहुत हलकी थी। और वह माँग इसके अतिरिक्त कुछ न थी कि शिर्क (बहुदेववाद) और अल्लाह की अवज्ञा से बचो और एक अल्लाह के सच्चे बन्दे बनकर रहो और सामर्थ्य हो तो कुछ अल्लाह के मार्ग में भी ख़र्च करो। तुम यदि सांसारिक जीवन में अपने अपराध की जघन्यता को समझ लेते तो यह दिन तुम्हें न देखना पड़ता।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है, वे बयान करते हैं कि एक बदवी (ग्रामीण) मस्जिद में पेशाब करने लगा तो उसे मारने के लिए लोग उसकी ओर दौड़े। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उन लोगों से कहा—

> "उसे छोड़ दो, उसके पेशाब पर दो-एक डोल पानी बहा दो। इसलिए कि तुम आसानी पैदा करनेवाले बनाकर भेजे गए हो, कठिनाई के लिए तुम्हें नहीं भेजा गया।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अभिप्राय यह है कि धर्म में कट्टरता नहीं है। इस्लाम के अनुयायियों को सख़्ती करने से बचना चाहिए। तुम्हारी ज़िम्मेदारी है कि तुम आसानियाँ पैदा करो। लोग अज्ञान के कारण जिन कठिनाइयों में पड़े हैं, उन कठिनाइयों को दूर करो। इस्लाम आया ही है लोगों को कठिनाइयों और मुसीबतों से छुटकारा दिलाने के लिए। इसलिए यदि इस व्यक्ति ने नादानी से पेशाब कर दिया तो क्या क़ियामत खड़ी हो गई। इसपर सख़्ती न करो, इसे छोड़ दो। पेशाब पर एक-दो डोल पानी डाल दो ताकि गन्दगी साफ़ हो जाए। छोटी-सी बात को बड़ी बनाकर अपना और दूसरों का समय और शक्ति नष्ट करना कोई बुद्धिमानी की बात नहीं है।

(3) हज़रत जरीर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) रिवायत करते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) को सुनने, आज्ञापालन करने और प्रत्येक मुस्लिम के हित चाहने का वचन दिया तो आप (सल्ल॰) ने मुझे समझाया कि मैं यह भी कहूँ कि जितनी मुझमें सामर्थ्य होगी। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : "यह भी कहो कि जितनी मुझमें सामर्थ्य होगी," यह वाक्य बताता है कि मनुष्य किसी चीज़ का उसी हद तक उत्तरदायी है, जितनी उसमें सामर्थ्य हो। यह बात यदि आदमी के सामने रहे तो वह कभी भी निराश नहीं हो सकता। वह अल्लाह का आभारी होगा कि उसने उसपर बस उतना ही बोझ डाला है जिसको वह उठा सकता है। वह दीन और धर्म को ईश-अनुग्रह समझने के बदले कभी भी उसे अपने लिए मुसीबत नहीं समझेगा और न दीन में कट्टरता और अति में पड़कर अपने आप को मुसीबत में डालेगा।

(4) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) कहते थे—

> "उतना ही कर्म करो जितने की तुममें शक्ति हो। अल्लाह तो नहीं उकताता, अलबत्ता तुम उकता जाओगे।"
> और सबसे प्रिय नमाज़ नबी (सल्ल॰) की दृष्टि में वह थी

जिसे बराबर अदा किया जाए यद्यपि वह थोड़ी ही क्यों न हो। और आप (सल्ल॰) जब कोई नमाज़ पढ़ते तो उसे बराबर पढ़ते रहते। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि दीन में यह कदापि अभीष्ट नहीं है कि तुम अपनी शक्ति से बढ़कर कर्म करो, अलबत्ता जो कर्म करो उसे बराबर करते रहो। वह कर्म तुम्हारी नैतिकता और चरित्र का प्रतीक हो, किसी सामयिक आवेश या आवेग का फल न हो। उदाहरणार्थ इस हदीस में बताया गया है कि नबी (सल्ल॰) जब कोई नमाज़ पढ़ते थे तो उसे त्यागते न थे, बल्कि उसकी बराबर पाबन्दी करते, जो इस बात का प्रमाण होता कि उस नमाज़ का अपनी जगह एक स्थायी महत्व है।

(5) हज़रत जाबिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"यात्रा की दशा में रोज़ा रखना कुछ नेक काम नहीं।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) यात्रा पर थे। देखा कि एक व्यक्ति मुर्छित होकर गिर पड़ा है और लोगों ने उसपर छाया कर रखी है। आप (सल्ल॰) ने पूछा कि उसे क्या हो गया है? लोगों ने कहा, यह रोज़े से है। इसपर आप (सल्ल॰) ने वह बात कही जो इस हदीस में बयान हुई है।

सफ़र में रोज़ा रखना यूँ भी कठिन होता है और मौसम यदि भीषण गर्मी का हो तो सफ़र में रोज़ेदार निढाल होकर रह जाता है। प्रत्येक अच्छा कर्म धर्म है, किन्तु धर्म मनुष्य के लिए मुसीबत बनकर नहीं उतरा है। उसका काम आसानियाँ पैदा करना और कठिनाइयों को दूर करना है। इसी लिए आप (सल्ल॰) ने कहा कि सफ़र में रोज़ा रखना कोई नेक काम नहीं है। अर्थात् अकारण अपने आपको कठिनाई में डालना अभीष्ट नहीं है। अलबत्ता किसी व्यक्ति में इतनी

शक्ति है कि रोज़ा रखकर आसानी से सफ़र कर सकता है, तो उसको इसकी इजाज़त है। वह सफ़र में भी रोज़ा रख सकता है। हदीस में मूलतः इस तथ्य को व्यक्त करना अभीष्ट है कि कठिनाई और श्रम एवं कष्ट अपने-आप में कोई नेक काम नहीं है। कठिनाइयों और कष्टों को धर्म समझना वास्तव में वैराग्यवाद से प्रभावित धारणा की देन है, और इस्लाम ने वैराग्यवाद को नितान्त अवैध ठहराया है। वैराग्यवाद मानव-प्रकृति के प्रतिकूल है। और जो चीज़ प्रकृति के प्रतिकूल हो वह हमारा दीन और धर्म कैसे हो सकता है। दीन को तो सदैव मानव-प्रकृति का प्रदर्शक होना चाहिए, न यह कि उसकी नींव हमारी प्रकृति की अपेक्षाओं के विरोध पर रखी गई हो।

(6) हज़रत अबू-बक्र-बिन-अब्दुर्रहमान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) के कुछ सहाबियों ने कहा—

> "मैंने नबी (सल्ल॰) को, जिस वर्ष मक्का पर विजय प्राप्त हुई थी, देखा कि आप (सल्ल॰) ने लोगों को सफ़र में रोज़ा न रखने का आदेश दिया और कहा, 'अपने शत्रुओं से मुक़ाबले के लिए शक्ति प्राप्त करो।'" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : सफ़र में लोग रोज़े से थे, रमज़ान का महीना था। दुश्मनों से मुक़ाबला होना था। नबी (सल्ल॰) ने रोज़ा तोड़ देने का आदेश दे दिया, ताकि यदि शत्रुओं से युद्ध हो तो मुसलमान पूरी ताक़त से उनका मुक़ाबला कर सकें। रोज़े से व्यक्ति में कमज़ोरी आ ही जाती है। इसलिए जिहाद के अवसर पर रोज़ा तोड़ देने की अनुमति ही नहीं, आदेश दिया कि शत्रुओं से मुक़ाबला करने में कठिनाई न हो। इससे ज्ञात होता है कि धर्म में हमारी समस्त आवश्यकताओं का ध्यान रखा गया है, इसी लिए धर्म को आसान कहा गया है।

(7) नबी (सल्ल॰) की धर्म-पत्नी हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जो व्यक्ति भी रात में नमाज़ पढ़ता रहा हो, फिर यदि किसी रात उसपर निद्रा प्रभावी हो (और वह उठ न सके) तो अनिवार्यतः उसके लिए नमाज़ का पुण्य-फल लिखा जाएगा और उसकी निद्रा सदक़ा होगी।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : अर्थात् रात में उठकर नमाज़ पढ़नी किसी की नित्य क्रियाओं में से है और किसी रात निद्रा के कारण वह नमाज़ के लिए न उठ सका तो भी उसे रात में उठकर नमाज़ पढ़ने का पुण्यफल मिलेगा। क्योंकि यदि नमाज़ के लिए नहीं उठा तो वह उचित कारणवश नहीं उठा। इसका कारण लापरवाही और असावधानी कदापि न था। उसे रात में उठने का पुण्यफल भी मिला और निद्रा से आराम भी। यह अल्लाह का अनुग्रह है कि उसकी निद्रा को सदक़ा ठहरा दिया गया। यह हदीस भी इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इस्लाम में अनुचित कष्ट और कठिनाई वैध नहीं, यह एक प्राकृतिक और सरल धर्म है।

(8) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"निस्सन्देह यह धर्म (इस्लाम) सरल एवं सहज है, और धर्म से जब भी कोई मुक़ाबला करेगा तो वह-उसे पराजित कर देगा। अतः तुम सीधे मार्ग पर चलो, कट्टरता और अति से बचो और प्रसन्न रहो, (तुम्हें मुक्ति मिलेगी) और कुछ प्रातः को चल लो, कुछ संध्या को और कुछ रात्रि में चलकर सहायता प्राप्त करो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : ज्ञात हुआ कि कर्म के लिए यह धर्म अत्यन्त सहज है। इसमें मनुष्य पाबन्द है तो उसी का जिसकी सामर्थ्य उसे प्राप्त है। इसी लिए सख़्ती और धर्म में अति से रोका गया है। धर्म को सख़्ती की ज़रूरत नहीं। सख़्ती अपनानेवाला अंततः थक-हारकर और शिथिल होकर रह जाता है। जितना वह धार्मिक कर्म कर सकता था

वह उससे भी वंचित रह जाता है। इसलिए मनुष्य के लिए उचित यह होगा कि वह धर्म के सीधे-सादे मार्ग को अपनाए। हर प्रकार की सख़्ती और अति से बचे। अपनी मुक्ति की आशा रखे और प्रसन्न रहे। हमें उस यात्री की नीति पर चलना चाहिए जो ठण्डे समय प्रातः और संध्या काल में यात्रा करता है और कुछ रात में भी चल लेता है और लम्बी-से-लम्बी यात्रा पूरी करके सकुशल आराम के साथ अपनी मंज़िल पर पहुँच जाता है। इसके विपरीत जो यात्री आवश्यकता से अधिक जल्दी मचाता और चलने में रात-दिन एक कर देता है, अन्ततः वह थक-हारकर रह जाता है और मंज़िल उससे दूर ही रहती है। इस हदीस में नबी (सल्ल.) ने मुसाफ़िर की जो मिसाल दी है वह अत्यन्त अर्थपूर्ण है। इस मिसाल में यह संकेत दिया गया है कि यह दुनिया एक यात्रा है, हमारी मंज़िल या गंतव्य संसार नहीं बल्कि परलोक की सफलता है। इस मंज़िल को पाने के लिए आवश्यक है कि हमारा सफ़र जारी रहे और हमारा रुख़ मंज़िल की विपरीत दिशा में कदापि न हो। यह जीवन अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी बन्दगी में व्यतीत हो। प्रातः बेला और संध्या समय और कुछ रात के अन्तिम भाग में अनिवार्य नमाज़ों (फ़र्ज़ नमाज़ों) के अतिरिक्त कुछ तदाधिक नमाज़ पढ़ लिया करें। 'इशराक़' और 'तहज्जुद' इत्यादि वास्तव में इसी के व्यावहारिक रूप हैं, जिनको नबी (सल्ल.) ने निर्धारित किया है।

(9) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि.) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल.) जब सूर्य ढलने से पहले यात्रा के लिए प्रस्थान करते तो ज़ुहर को अस्र के समय तक टाल देते, फिर इन दोनों को एक साथ मिलाकर पढ़ते, और जब सूर्य ढलने के बाद यात्र करते तो फिर आप ज़ुहर की नमाज़ पढ़कर (यात्रा के लिए) सवार होते।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इससे अनुमान किया जा सकता है कि इस्लाम के अनुयायियों के लिए उनके धर्म में आसानी का कितना ध्यान रखा गया है। यात्रा की दशा में ज़ुहर और अस्र की नमाज़ें इकट्ठा करके

पढ़ने में यात्री के लिए कितनी आसानी होती है। व्यवहारतः इसका भली-भाँति अंदाजा होता है। वास्तव में धार्मिक आदेशों के जो उद्देश्य हैं, वही अस्ल हैं। वे उद्देश्य बदले नहीं जा सकते। कर्मों के बाह्य रूप में आवश्यकता पड़ने पर कुछ परिवर्तन किया जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि हम खड़े होकर नमाज़ अदा नहीं कर सकते तो बैठकर अदा करें, किन्तु नमाज़ या अल्लाह की हम्द से वंचित रहने की अनुमति किसी दशा में नहीं दी जा सकती। अल्लाह की याद और उससे सचेत रहना ही जीवन है, इसे त्यागने की अनुमति कैसे दी जा सकती है।

(10) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "अल्लाह ने मेरी उम्मत के लोगों के उन ख़यालों को क्षमा कर दिया जो उनके दिलों में पैदा हों, जब तक कि उसे व्यावहारिक रूप न दें या उसकी बातें न करें।"
>
> (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मन में अनुचित प्रकार के ख़याल या विचार स्वतः आते हैं तो चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं। अल्लाह उनके कारण पकड़ेगा नहीं। ऐसे विचारों की हैसियत मात्र वसवसों की है। शैतान दिलों में वसवसे डाल सकता है। हमें उनपर ध्यान नहीं देना चाहिए। अल्लाह वसवसों को माफ़ कर देता है। किन्तु यदि हम उनको महत्व देते हैं, उनको व्यवहार में लाते या बातचीत में उनका प्रचार करते हैं तो निश्चय ही इसपर पकड़ होनी चाहिए। जिसपर हमारा अपना कोई अधिकार नहीं उसपर हमारी पकड़ न होगी। धर्म कितना सहज और सरल है। काश हम इसका पूर्ण रूप से मूल्यांकन कर सकते!

धर्म जो सर्वथा दयालुता है

(1) हज़रत मूसा-बिन-अनस अपने पिता अनस (रज़ि॰) से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने (एक ज़िहाद के

अवसर पर) कहा–

"तुम मदीना में ऐसे लोगों को छोड़ आए हो जो तुम्हारे चलने में और तुम जो कुछ ख़र्च करते हो उसमें और जो घाटी भी तुम पार करते हो अनिवार्यतः वे इन सब में तुम्हारे साथ शरीक हैं।" लोगों ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! वे हमारे साथ कैसे हो सकते हैं, जबकि वे मदीना में हैं? आप (सल्ल.) ने कहा, "वे कारणवश रुक गए हैं।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : अल्लाह लोगों के इरादों और उनकी नीयतों को देखता है यदि कोई अल्लाह के मार्ग में निकलना और प्रयास करना चाहता है और उसकी यह इच्छा होती है कि अल्लाह के धर्म के विकास, प्रचार और उसकी स्थापना के सम्बन्ध में वह अपना धन भी ख़र्च करे किन्तु कुछ विवशताओं और कुछ कारणवश न तो वह जिहाद के लिए निकल पाता है और न इस सिलसिले में उसे अपना माल ख़र्च करने के अवसर प्राप्त होते हैं, फिर भी अल्लाह के यहाँ उसे ईश्वरीय मार्ग में जिहाद करनेवाला घोषित किया जाता है और उसकी गणना उन लोगों में होती है जो अल्लाह के मार्ग में अपना माल ख़र्च करके इसका प्रमाण देते हैं कि वे अल्लाह के सच्चे बन्दे हैं और उसकी प्रसन्नता के लिए वे अपना सब कुछ क़ुरबान करने की भावना रखते हैं। अल्लाह के यहाँ ऐसे निष्ठावानों की गणना उन्हीं लोगों में होगी जिनमें सम्मिलित होने की ऐसे लोगों की कामना रही होगी।

जब हम अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के इस कथन पर विचार करते और देखते हैं कि सच्चे दीनदारों पर अल्लाह की कितनी अधिक रहमत और अनुग्रह है तो इस धर्म के सर्वथा रहमत और दयालुता होने में कोई संदेह शेष नहीं रहता।

(2) हज़रत अबू-मूसा (रज़ि.) से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि

मैंने नबी (सल्ल०) को कई बार, कोई एक-दो बार नहीं, यह कहते हुए सुना—

"जब बन्दा कोई अच्छा कर्म करता है, फिर वह बीमारी या यात्रा के कारण उस काम के करने से रुक जाता है तो उसके लिए वैसी ही नेकी लिखी जाती है, जैसी वह स्वस्थ होने और घर पर रहने की दशा में करता रहा है।"

(हदीसः अबू-दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस भी इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि इस्लाम दयालुता का धर्म है। बीमारी, यात्रा या किसी उचित रुकावट के कारण यदि कोई व्यक्ति वह अच्छा कर्म नहीं कर पाता जो वह स्वस्थ होने की हालत में या घर पर रहकर करता रहा है, तो अल्लाह बिना कर्म के ही उसे कर्मफल प्रदान करता है। उसका कर्म न करना भी कर्म ठहरता है, क्योंकि कर्म न करने का कारण अवज्ञा और ग़फ़लत नहीं बल्कि बंदे की कुछ मजबूरियाँ हैं जिनके कारण नेक कर्म करने में रुकावट आई है।

(३) हज़रत जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि०) से उल्लिखित है। वे कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने मुझे एक काम से भेजा। फिर मैं लौटकर आप (सल्ल०) तक पहुँचा। आप (सवारी पर) चल रहे थे। क़ुतैबा की रिवायत में है कि आप (सल्ल०) नमाज़ पढ़ रहे थे (नफ़्ल नमाज़ सवारी पर पढ़ सकते हैं)— मैंने आप (सल्ल०) को सलाम किया। आप (सल्ल०) ने इशारे से जवाब दिया। आप जब नमाज़ से निवृत्त हुए तो मुझे बुलाया और कहा, "तुमने मुझे अभी सलाम किया था और मैं नमाज़ पढ़ रहा था, (इसलिए सलाम का उत्तर न दे सका)" हालांकि मुख आप (सल्ल०) का पूर्व की ओर था। (जबकि काबा पूर्व की ओर न था।) (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम हुआ कि नफ़्ल नमाज़ ऊँटनी या किसी और सवारी पर इस दशा में पढ़ सकते हैं जबकि सवारी ठहरी

हुई न हो। इसमें काबा की ओर मुँह करने का भी आदमी पाबन्द नहीं होता। अतएव, इस हदीस में बताया गया है कि आप (सल्ल.) चलती ऊँटनी पर नमाज़ पढ़ रहे थे और आप (सल्ल.) का मुख काबा की ओर न था। बल्कि दूसरी ओर था। इससे ज्ञात हुआ कि सवारी पर जब नमाज़ में काबा की ओर मुख करना सम्भव न हो तो किसी भी दिशा में मुख करके नमाज़ अदा कर सकते हैं। इसलिए कि वास्तविक उद्‌देश्य तो अल्लाह की ओर रुख़ करना है जो किसी विशेष दिशा में अवरुद्ध नहीं है। किन्तु काबा की ओर रुख़ करने को अपनी जगह मौलिक महत्व प्राप्त है। इसलिए अनिवार्य नमाज़ों में काबा की ओर रुख़ करना अनिवार्य है। नफ़्ल नमाज़ों में इसकी गुंजाइश रखी गई है कि काबा की ओर रुख़ करना यदि सम्भव न हो तो नफ़्ल नमाज़ त्यागे नहीं, बल्कि आदमी जिस दिशा में भी रुख़ करके नमाज़ पढ़ सकता हो पढ़े। बन्दा नमाज़ में अल्लाह से सबसे अधिक निकट होता है, उसे चाहिए कि यह सामीप्य यथासम्भव बना रहे। ईश्वर अपने सामीप्य का आँचल बन्दों के लिए नित्य फैलाए रखता है। इसे उसकी दयालुता के अतिरिक्त किसी और चीज़ से अभिहित नहीं किया जा सकता।

(4) हज़रत नाफ़ेअ (रह.) से उल्लिखित है कि इब्ने-उमर (रज़ि.) ने एक रात नमाज़ की अजान दी, यह रात सर्दी और आँधी की थी, तो (अज़ान के बाद पुकारकर) कहा कि अपने-अपने घरों में नमाज़ पढ़ लो। फिर कहा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) जब रात सर्दी और वर्षा की होती तो अज़ान देनेवाले को आदेश देते कि अज़ान के बाद पुकारकर कह दिया करो कि अपने घरों में नमाज़ पढ़ लो।

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से भली प्रकार समझा जा सकता है कि इस्लाम में कठोरता और कट्टरवाद नहीं पाया जाता। रात अत्यन्त ठण्डी है, इसके अतिरिक्त वर्षा भी हो रही है। ऐसी दशा में मस्जिद जाना आसान नहीं था, इसलिए अज़ान के साथ यह घोषणा कराई

गई कि नमाज़ का समय हो गया है किन्तु मौसम ऐसा है कि इसमें घर से निकलना तुम्हारे लिए कठिन होगा, इसलिए नमाज़ अपने घरों में अदा कर लो।

इस्लाम के जितने भी आदेश हैं, चाहे उनका सम्बन्ध उपासनाओं से हो या उनका सम्बन्ध सामाजिक मामलों से या राजनीतिक और धार्मिक समस्याओं से हो, आपको हर मामले में अल्लाह की दयालुता ही स्पष्टतः दिखाई देगी।

बुद्धि-संगत धर्म

(1) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"एक व्यक्ति है जो नमाज़ भी पढ़ता है, रोज़ा भी रखता है, ज़कात भी देता है और वह हज और उमरा भी करता है —यहाँ तक कि आप (सल्ल०) ने सभी नेक कामों का नाम लिया— लेकिन उसे क़ियामत के दिन उसकी बुद्धि के अनुसार बदला दिया जाएगा।" (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : यह हदीस इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि बुद्धि और समझ को इस्लाम में मौलिक महत्व प्राप्त है। मनुष्य में जितनी चेतना, बुद्धि-विवेक और समझ होगी उतना ही वह इबादतों और अच्छे कर्मों की मूलात्मा और उद्देश्य से परिचित होगा और उतना ही वह इबादत, भक्ति और बन्दगी का हक़ अदा कर सकेगा और फिर उसी के अनुसार वह पुण्यफल का पात्र होगा।

(2) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"ऐ अबू-ज़र उपाय जैसी कोई बुद्धि नहीं, बचने और सावधानी के समान कोई संयम नहीं और सुशीलता के सदृश कोई श्रेष्ठता और कोई वंश नहीं।"

(हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : कितनी अच्छी शिक्षा इस हदीस में दी गई है, जो देखने में संक्षिप्त है लेकिन अपने अर्थों की दृष्टि से भलाई की एक बड़ी ख़ूबसूरत दुनिया इसमें दिखाई देती है। इससे बढ़कर बुद्धिमत्ता की बात और क्या हो सकती है कि बुद्धि वही है जो मुअत्तल होकर न रहे। बुद्धिमान वास्तव में वही है जो सोच-विचार से काम लेता है और जीवन में कितनी ही जटिल समस्याएँ क्यों न खड़ी हो गई हों, किन्तु वह उनके हल करने के उपाय में शिथिलता न दिखाए। कर्म पर जितना पैग़म्बरों ने ज़ोर दिया है, उतना ज़ोर दार्शनिक और चिंतक नहीं दे सके हैं। नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि अनिष्ट और बुरी बातों से अपने आप को बचाए रखने से उत्तम किसी संयम और धर्मपरायणता की कोई कल्पना नहीं की जा सकती है। सच यह है कि अपनी इच्छाओं को नियंत्रित रखते हुए और अनिष्ट से बचते हुए नेक कामों में लगे रहना ही इस्लाम है। नबी (सल्ल॰) की यह बात कि सुशीलता के सदृश कोई श्रेष्ठता और वंश नहीं, मानव-जीवन के लिए वह आदर्श वाक्य है, जिसे लिखकर हर दीवार और द्वार पर लटका देने की आवश्यकता है। इससे न केवल यह कि हर प्रकार के पक्षपात और श्रेष्ठता की ग़लत धारणाओं का निषेध होता है, बल्कि मानव-जीवन एक ऐसी चीज़ से परिचित होता है जो जीवन की मूलात्मा, बल्कि वही जीवन है।

(3) हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) उनसे एक बार मिले तो आप (सल्ल॰) हुज़ैफ़ा की ओर (मिलने या हाथ मिलाने के लिए) झुके तो उन्होंने (हुज़ैफ़ा ने) कहा कि मैं नापाक हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा, "मुसलमान नापाक नहीं होता।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : यदि कोई नापाक है। पत्नी से सम्भोग करने के कारण उसे स्नान करने की ज़रूरत थी, लेकिन वह स्नान नहीं कर सका है, तो इससे वह नापाक नहीं हो जाता। यह नापाकी मात्र हुक्मी (क़ानूनी) है, इसलिए उसके साथ बैठने और उससे हाथ मिलाने में

कोई दोष नहीं है। फिर मोमिन होना तो वास्तव में एक ऐसी गन्दगी और नापाकी से पाक होने का नाम है जिससे बढ़कर नापाकी और गन्दगी दूसरी नहीं हो सकती वह है शिर्क की गन्दगी। इसलिए मोमिन के लिए नजिस या नापाकी के शब्द का प्रयोग करना उसकी श्रेष्ठता और पद के अनुकूल नहीं है। बहुदेववादी या मुशरिक की गन्दगी और नापाकी वास्तव में उसके विचार और धारणा की अपवित्रता (नापाकी) है। अपने शरीर से वह भी नजिस व नापाक नहीं होता। इसलिए उसके पास बैठने और उससे हाथ मिलाने से उसकी कोई गन्दगी हम तक नहीं पहुँचती।

(4) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"जब प्रातः बेला आती है तो मनुष्य के शरीर के प्रत्येक पोर पर एक सदक़ा अनिवार्य होता है। फिर वह जिससे मिले और उसे सलाम करे तो यह एक सदक़ा (दान-कृति) है। भलाई का आदेश देना एक सदक़ा है और बुराई से रोकना एक सदक़ा है। मार्ग से तकलीफ़ देनेवाली चीज़ का हटा देना एक सदक़ा है और अपनी पत्नी से सम्भोग करना एक सदक़ा है और चाश्त (दिन चढ़े) की दो रकअतें इनमें से प्रत्येक का बदल हो जाती हैं।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : मनुष्य का शरीर और उसके प्राण ईश्वर प्रदत्त महान अनुग्रह हैं। मानव-शरीर का हर अंग बल्कि उसके शरीर का प्रत्येक पोर और जोड़ ईश्वरीय अनुकम्पा है। आधुनिक खोज से पता चलता है कि जिह्वा (Tongue) में स्वाद से सम्बन्धित तीस हज़ार ट्यूब (Taste tube) पाए जाते हैं। कान में श्रवण से सम्बन्धित तंत्रों की संख्या एक लाख है। और नेत्र में प्रकाश ग्रहण करने में सहायक तंत्रों (Light Acceptators) की संख्या 130 मिलियन है। इससे हम समझ सकते हैं कि हमारे अस्तित्व के साथ ईश्वर का कितना अनुग्रह है।

हर प्रातः को जब मनुष्य स्वस्थ अपने बिस्तर से उठता है तो उसके शरीर के हर पोर की अपेक्षा होती है कि इसके लिए ईश्वर का आभार प्रकट करने में एक सदक़ा किया जाए। अब सदक़ों (दान-कृतियों) की संख्या इतनी अधिक होती है कि उनका अदा करना मनुष्य के सामर्थ्य से बाहर है। किन्तु यह ईश्वर की विशेष कृपा है कि हमारा प्रत्येक अच्छा कर्म ईश्वर के यहाँ सदक़ा समझा जाता है। मिलनेवाले से सलाम करना, कष्टदायक चीज़ों को रास्ते से हटा देना, यहाँ तक कि अपनी पत्नी के पास जाने की गणना भी सदक़ा में होती है।

इस हदीस में एक विशेष बात कही गई है कि चाश्त अर्थात् दिन चढ़े की दो रकअत नफ़्ल नमाज़ जब कोई पढ़ता है तो यह नमाज़ कोई साधारण चीज़ नहीं है। यह नमाज़ यदि ईश्वर के यहाँ स्वीकृत हो जाए तो मानो बन्दे ने अपने प्रभु के अनुग्रहों के प्रति कृतज्ञता प्रकट कर दी। इससे यह भी ज्ञात होता है कि नमाज़ तमाम नेकियों का सार है और समस्त नेकियाँ नमाज़ का विस्तार और उसकी अपेक्षाएँ हैं।

सर्वथा हिकमत या तत्त्वदर्शिता

(1) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "उस (ईश्वर) की सौगन्ध जिसके हाथ में मुहम्मद के प्राण हैं, लोगों में से प्रत्येक व्यक्ति जन्नत में अपने घर को दुनिया के अपने घर से अधिक पहचानेगा।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मनुष्य अपने घर को इसलिए पहचानता है कि वह उसमें रहता है। उसमें रहने के कारण वह उससे भली-भाँति परिचित होता है, यहाँ तक कि उसका घर उसके जीवन और उसके एहसासों का एक हिस्सा बन जाता है। मुसलमानों को जन्नत में जो घर प्रदान

किया जाएगा वह उस घर को दुनिया के घर के मुक़ाबले में अधिक पहचानेगा। उसको वहाँ पहुँचने और पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होगी। मानो वह उस घर में अपने दुनिया के घर के मुक़ाबले में अधिक रह चुका है। और सच भी यही है कि सच्चे मुस्लिम दुनिया में रहकर भी आख़िरत (परलोक) का जीवन व्यतीत करते हैं। दुनिया के घर को वे एक अस्थायी पड़ाव से अधिक महत्व नहीं देते। वे उस परदेसी की तरह होते हैं जिसका मन परदेस में रहकर भी अपने घर की ओर खिंचा रहता है।

यही कारण है कि हम देखते हैं कि नबी (सल्ल॰) ने दुनिया के घर को अधिक सजाने और सँवारने को ज़्यादा पसन्द नहीं किया। इसलिए कि यह इस बात का लक्षण होगा कि मनुष्य अपने अस्थायी घर से असाधारण लगाव रखता है। यह चीज़ उसे अपने असली घर से बेपरवाह कर सकती है। दुनिया का घर तो बस ऐसा होना चाहिए कि स्पष्टतः मालूम हो रहा हो कि उसमें रहनेवाला कहीं और जाने की चिन्ता में है। इस स्थिति में स्पष्ट है कि वह उस घर से जिसे वह त्यागनेवाला है असाधारण रुचि कैसे रख सकता है।

हम देखते हैं कि आदमी के घर और उसके अपने कमरे से उसकी रुचि, शौक़ आदि का पता चलता है। विलासप्रिय व्यक्तियों के यहाँ विलासिता की सामग्री प्रचुर मात्रा में दिखाई देगी। संगीत से प्रेम रखनेवालों के यहाँ आपको संगीत से सम्बन्धित उपकरण आदि रखे हुए दिखाई देंगे। इन चीज़ों को देखकर उस व्यक्ति का पूरा चरित्र आपके सामने आ जाएगा।

मुसलमानों की अभिरुचि और उनके भाव और भावनाएँ अल्लाह और आख़िरत से बेपरवाह लोगों से बिलकुल भिन्न होती हैं। उनके एहसास और उनकी रुचि और शौक़ का लिहाज़ तो जन्नत ही में सम्भव है। दुनिया में अप्रिय बातें तो सामने आती ही रहती हैं। जन्नत के विषय में क़ुरआन में कहा गया है कि—

"उसमें वे व्यर्थ और झूठी बात नहीं सुनेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-78 नबा, आयत-35)

एक जगह कहा गया है—

"जन्नत में कोई व्यर्थ बात न सुनेंगे।"

(क़ुरआन, सूरा-88 ग़ाशियह, आयत-11)

अर्थात् जन्नत का वातावरण हृदय की पवित्रता के समान पवित्र होगा। वहाँ वह जीवन अपने पूर्ण रूप में उपलब्ध होगा जिसके निर्माण में मुसलमानों ने सांसारिक जीवन में प्रयास किया होगा। संसार में मोमिन व्यक्ति पारलौकिक जीवन जीने का प्रयास करते हैं। नमाज़, ईश-स्मरण, क़ुरआन-पाठ और अच्छे कर्मों के द्वारा वे अपने आपको आख़िरत का अर्थात् उस जीवन से आच्छादित रखते हैं जिससे बढ़कर पवित्रतम और सुखद जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। किन्तु शैतानों की कोशिश यह होती है कि मनुष्य जीवन की मात्र खण्डित धारणा पर संतुष्ट हो जाए।

मुसलमान दुनिया में पारलौकिक जीवन व्यतीत करने का प्रयास किस प्रकार करते हैं? पारलौकिक जीवन की एक मौलिक विशिष्टता यह है कि वह सर्वथा ईश्वरीय सामीप्य है। संसार में भी मुस्लिम सजदों और आज्ञापालन में ईश्वर का सामीप्य तलाश करते हैं। परलोक में साँस की तरह ईश-स्मरण का इलहाम (दैवी-प्रेरणा) किया जाएगा। ईश-स्मरण, उसका अनुभव और उसका प्रेम साँस की तरह जीवन में सम्मिलित होगा। संसार में भी इस अनुग्रह को पाने के लिए शिक्षा दी गई है कि ईश्वर को प्रत्येक क्षण याद करो। कहा गया है : "अल्लाह को ख़ूब-ख़ूब याद करो।" अर्थात् उसे कभी भी विस्मृत न करो। ईश्वर की प्रशंसा और उसके गौरव-वर्णन में यदि उसके प्रेम का समावेश न हो तो उसे ईश्वर की स्तुति और उसका महिमागान नहीं कह सकते।

संसार में अपने रब को पहचानने का आदेश दिया गया है कि संसार में फैली हुई उसकी निशानियों और अपने अन्तर में निहित

स्मारक-चिह्नों में उसके अनुग्रहों के अवलोकन का प्रयास करो। परलोक में तुम उसे अनावृत्त देखोगे। संसार में हम उससे बातें करते हैं किन्तु उसे हम देख नहीं पाते। किन्तु परलोक में हमें उससे वास्तविक वार्तालाप का श्रेय भी प्राप्त होगा और उसे हम देख भी सकेंगे। संसार में यदि अच्छे और नेक लोग तुम्हारे साथी और सहचर थे तो परलोक में भी अच्छों का तुम्हें सहचर्य प्राप्त होगा। मुसलमानों के लिए संसार में सबसे प्रिय स्थान मस्जिदें होती हैं। मस्जिदें वास्तव में संसार में परलोक का प्रति-रूप हैं। परलोक में राज्य-शासन केवल ईश्वर का होगा, यही स्थिति मस्जिदों की भी है। मस्जिदों में केवल ईश्वर की बड़ाई की जाती है। बड़े और छोटे, धनवान और निर्धन सब ईश्वर के समक्ष एक ही पंक्ति में खड़े होते हैं। बन्दे का मस्जिद में ईश्वर से मिलन होता है। परलोक ईश-मिलन ही का दूसरा नाम है। सारांश यह है कि लोक-परलोक में मुस्लिम का घर उसकी भावना, अनुभव और कामनाओं के ठीक अनुकूल होगा। हमारे लिए आवश्यक है कि हम संसार ही पर संतुष्ट होकर न रहें। हमारी आत्मा परलोक ही को अपना निकेतन बनाए।

(2) हज़रत उक़बा-बिन-आमिर (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना कि—

> "क़ियामत के दिन लोगों के मध्य फ़ैसला होने तक हर व्यक्ति अपने सदक़े की छाया में रहेगा।"

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : एक रिवायत में है : "क़ियामत के दिन मोमिन की छाया उसका सदक़ा होगा।" (हदीसः अहमद) मालूम हुआ कि मोमिन का सदक़ा क़ियामत के दिन उसके लिए छाया का काम करेगा। सदक़ा देकर उसने दुनिया में ज़रूरतमन्दों की मुसीबत दूर की थी, उस दिन सदक़ा के प्रभाव से उसकी मुसीबत दूर रहेगी। सदक़ा को समस्त अच्छे कामों में मौलिक महत्व प्राप्त है। सदक़ा करनेवाले का हृदय

विशाल होता है। दानशीलता उसका मौलिक गुण होता है। इसलिए यह आशा नहीं की जा सकती कि वह दूसरे अच्छे कामों से जी चुराएगा।

इस हदीस से ज्ञात हुआ कि परलोक कई पहलुओं से इस लोक से भिन्न है। यहाँ आवश्यकता की चीज़ें पहले से ही उपलब्ध कर दी हैं। व्यक्ति उनसे लाभ उठाता है किन्तु वहाँ का मामला यहाँ से भिन्न होगा। वह परीक्षालय नहीं, निवास-स्थान होगा। उस निवास-स्थान में ईमान, कर्म, सुशीलता और चरित्र जिनके साथ संसार से हमने प्रस्थान किया होगा वही हमारे साधन-सामग्री सिद्ध होंगे। यहाँ भौतिक कार्य-कारण को स्पष्ट स्थान प्राप्त है, वहाँ ईमान, नैतिकता और चरित्र मौलिक रूप से संसाधनों के समान अपना प्रभाव रखते होंगे।

धरती पर हमारी आवश्यकता की चीज़ें ऑक्सीजन, जल आदि पहले से मौजूद हैं। लेकिन चाँद पर अगर कुछ वक़्त के लिए ठहरना हो तो ऑक्सीजन और खाने-पीने और पहनने की चीज़ें साथ ले जानी पड़ेंगी। इसलिए इन चीज़ों की ज़रूरत चाँद पर पहुँचने के पश्चात ख़त्म नहीं हो जाती। इनका प्रबन्ध करना पड़ेगा और यह प्रबन्ध धरती ही से करना होगा। अगर हम यह प्रबन्ध न करें तो चाँद की दुनिया हमें स्वीकार नहीं कर सकती। हम विनष्ट होकर रह जाएँगे। इसी प्रकार परलोक के लिए व्यवस्था हमें इसी वर्तमान लोक ही में करनी होगी। जो लोग परलोक की तैयारी कर लेते हैं उनको परलोक का वातावरण बिलकुल अनुकूल मिलेगा। उनकी वहाँ सभी कामनाएँ भी पूरी होंगी।

मुस्लिम जिस प्रकार परलोक में फ़ैसले से पहले और जन्नत में प्रवेश करने से पहले सदक़ा की छाया में होगा, उसी तरह उसे इस दुनिया में भी विशिष्टता प्राप्त है। वह यहाँ मूलतः ईमान और कर्म ही की छाया में जीता है। दूसरी भौतिक वस्तुएँ ऐसी नहीं हैं कि जो उसे तृप्त कर सकें। ईमान और कर्म के कारण उसे ईश्वर का साथ और

मदद प्राप्त होती है। इसकी पुष्टि विभिन्न हदीसों से होती है। उदाहरणार्थ सदक़ा बुरी मौत से बचाता है (हदीस : तिरमिज़ी)। एक हदीस में है कि जो मुस्लिम व्यक्ति किसी मुस्लिम को कपड़ा पहना दे तो वह ईश्वर के संरक्षण में रहेगा (हदीस : अहमद, तिरमिज़ी) यह और इस तरह की रिवायतें इसकी साक्षी हैं कि वर्तमान लोक में भी मुस्लिमों को सदक़ा की छाया उपलब्ध होती है। ईमान और कर्म वास्तव में ईश्वर से सम्बन्ध स्थापित करने का दूसरा नाम है। ईश्वर से सम्बन्ध अपने प्रभाव की दृष्टि से किसी सुखद छाया से कम नहीं हो सकता। यह एक ऐसी सच्चाई है जिसे महसूस करने की आवश्यकता है।

(3) हज़रत ज़ैद-बिन-ख़ालिद जुहनी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जिस किसी ने किसी भटके हुए पशु को रख लिया वह स्वयं भटक गया है, जब तक कि उसकी पहचान न कराए।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : जिस व्यक्ति को कोई भटका हुआ जानवर मिल जाए तो उसके लिए अनिवार्य है कि इसकी व्यापक रूप से घोषणा कराए ताकि वह जिसका जानवर हो उसे सूचना मिल सके और वह उसे अपने घर ले जा सके। किन्तु यदि भटके हुए जानवर को कोई व्यक्ति अपने घर में बाँधे रखता है और चुप रहता है कि उसके मालिक को ख़बर न हो सके और वह उस जानवर से लाभ उठाए तो नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि भटका हुआ पशु तो पशु था, उसे बाँधे रखनेवाला व्यक्ति स्वयं भटक गया। जानवर के असल मालिक का तो केवल जानवर गुम हुआ था, यहाँ उस व्यक्ति ने तो स्वयं को खो दिया। ऐसे व्यक्ति का ईश्वर की दृष्टि में कोई मूल्य नहीं हो सकता। जन सामान्य भी उसका आदर नहीं कर सकते। इससे बढ़कर घाटे की बात और क्या हो सकती है!

यथार्थवादिता

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि लोगों ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! लोगों में सबसे बढ़कर प्रतिष्ठित कौन है? आप (सल्ल॰) ने कहा–

"जो तुममें सबसे अधिक (अल्लाह का) डर रखता है।" उन्होंने कहा कि हम यह आपसे नहीं पूछते। आप (सल्ल॰) ने कहा, "तो सबमें प्रतिष्ठित हज़रत यूसुफ़ हैं, जो अल्लाह के नबी और नबी के बेटे और अल्लाह के घनिष्ट मित्र के पोते हैं।" लोगों ने कहा कि यह हम नहीं पूछते। आप (सल्ल॰) ने कहा कि "तुम अरब के खदानों (अर्थात् क़बीलों) के विषय में मुझसे पूछ रहे हो। उनमें जो अज्ञानकाल में अच्छे थे, वही इस्लाम में भी अच्छे हैं, जबकि वे (धर्म में) समझ प्राप्त कर लें।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम हुआ कि लोगों और कबीलों की मिसाल ख़दानों की-सी है। कुछ खदानें सोने की होती हैं, कुछ खदानें लोहे और कुछ कोयले की होती हैं। ठीक यही दशा मानवों और वंशों और क़बीलों की भी होती है। कुछ वंशों में वीरता, दान-शीलता जैसे गुण जन्मजात पाए जाते हैं। अरब में क़ुरैश ख़ानदान का यही हाल था। क़ुरैश के लोग अज्ञान और इस्लाम दोनों में उभरे हुए रहे। जो मानवीय नैतिकता की दृष्टि से कुफ़्र की दशा में अच्छा था, इस्लाम में भी अच्छा सिद्ध हुआ। मानवीय और नैतिक गुणों को इस्लाम ने तद्धिक ऊर्जा प्रदान की। अतएव इस्लाम में प्रवेश करके उन लोगों ने, जो मानवीय गुणों से सुसज्जित थे, ऐसे महान कर्म किए जिन्हें देखकर बुद्धि चकित रह जाती है। व्यक्तिगत गुण जब धर्म और ईमान के साथ एकमत हो जाते हैं तो ऐसा दृश्य सामने आता है मानो प्रकाश ने प्रकाश का आलिंगन कर लिया हो। किसी जाति या व्यक्ति की व्यक्तिगत श्रेष्ठता का धर्म और ईमान के बिना ईश्वर की दृष्टि में कोई मूल्य नहीं हो सकता।

प्रेम का धर्म

(1) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने कहा—

"कोई व्यक्ति ईमान की मिठास नहीं पाएगा जब तक कि ऐसा न हो कि वह किसी से प्रेम करे तो अल्लाह ही के लिए करे। और आग में डाल दिया जाना उसे इससे अधिक प्रिय हो कि कुफ़्र की ओर पलटे, जबकि ईश्वर ने इससे उसे छुटकारा दिलाया है और जब तक कि अल्लाह और उसका रसूल उसे दूसरी सभी चीज़ों से बढ़कर प्रिय न हो जाएँ।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि ईमान एक स्वादिष्ट चीज़ है। शायद यह दुनिया की हर चीज़ से बढ़कर स्वादिष्ट है। किन्तु ईमान का यह स्वाद उस समय प्राप्त होता है जब किसी का ईमान इस दर्जे का हो जाए कि ईश-प्रेम ही उसके जीवन में मौलिक रूप से क्रियाशील हो। यही उसके जीवन में मूल वस्तु हो। यहाँ तक कि वह यदि किसी से प्रेम करता है तो यह प्रेम भी ईश्वर ही के लिए हो और ईश्वर और रसूल उसे सबसे अधिक प्रिय हों।

इस हदीस से ज्ञात हुआ कि ईश्वर और रसूल पर ईमान लाने से अभीष्ट मात्र उनपर विश्वास करना नहीं बल्कि उनसे अधिक प्रेम का सम्बन्ध रखना है। क्योंकि इसके बिना न ईमान की मिठास प्राप्त हो सकती है और न इसके बिना वास्तविक ईमान का आविर्भाव सम्भव है। अतएव, एक रिवायत में स्पष्ट रूप से नबी (सल्ल०) ने हज़रत उमर (रज़ि०) को सम्बोधित करके कहा भी है कि ऐ उमर! तुम मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि मैं तुम्हें तुम्हारे अपने प्राण से बढ़कर प्रिय न हो जाऊँ।

(हदीस : बुख़ारी)

(2) हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने कहा—

"आदमी उसके साथ होगा जिससे वह प्रेम करता है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : एक रिवायत में है कि एक व्यक्ति ने नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित होकर कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! क़ियामत कब क़ायम होगी? आप (सल्ल॰) ने कहा, "तुझ पर अफ़सोस कि तूने क्या सामान कर रखा है?" उसने कहा कि कोई सामान नहीं किया है सिवाए इसके कि मैं ईश्वर और उसके रसूल से प्रेम करता हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा, "निश्चय ही तू उसके साथ होगा जिससे तू प्रेम करता है।" सहाबा को जब मालूम हुआ कि यह बात आप (सल्ल॰) ने प्रत्येक के लिए कही है कि वह उसके साथ होगा जिससे वह प्रेम करता है, तो उस दिन उन्हें जो ख़ुशी प्राप्त हुई इससे पहले यदि प्राप्त हुई थी तो सिर्फ़ उस समय जब वे ईमान लाए थे। (हदीस : मुस्लिम)

यहाँ यह बात समझ लेने की है कि साथ होने का यह अर्थ नहीं होता कि सबका दर्जा और पद बिलकुल एक हो जाएगा, बल्कि साथ होने का अर्थ यह है कि वे परस्पर एक-दूसरे से दूर नहीं होंगे। उन्हें एक-दूसरे का साथ और सहचारिता प्राप्त होगी। लेकिन यह चमत्कार सच्चे प्रेम का होगा। यदि कोई ईश्वर और उसके रसूल के प्रेम का दावा तो करता है किन्तु ईश्वर और उसके आदेशों की उसे कोई परवाह नहीं, ईश्वर और उसके रसूल की अवज्ञा ही में उसका जीवन व्यतीत होता है, तो उसका जीवन झूठा समझा जाएगा।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"क़ियामत के दिन ईश्वर कहेगा कि कहाँ हैं वे लोग जो मेरे प्रताप के कारण परस्पर एक-दूसरे से प्रेम करते थे। आज मैं उन्हें अपनी छाया में स्थान दूँगा। आज मेरी छाया के सिवा कोई छाया नहीं है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : आख़िरत में ईश्वर की दया और उसके अर्श (राज-सिंहासन) के अतिरिक्त कोई छाया न होगी। आख़िरत वास्तव में

प्रतिफल पाने का स्थल है। यह छाया जिन लोगों को उपलब्ध होगी उनमें वे लोग भी सम्मिलित होंगे जो सांसारिक जीवन में परस्पर प्रेम-भाव रखते थे। वे जानते थे कि ईश्वर की महानता इस बात की अपेक्षा करती है कि हम उसके बन्दों की उपेक्षा कभी न करें। उनके हित और भलाई का भाव हममें पाया जाए और इस भाव में कभी भी कमी न आने पाए और संसार में ईश्वर के जो निष्ठावान और आज्ञाकारी बन्दे हैं, जो ईश्वर को प्रिय हैं, वे हमारे भी प्रिय हों। उनसे हमें भी प्रेम एवं स्नेह हो। और इस प्रेम एवं सम्बन्ध के पीछे कोई व्यक्तिगत स्वार्थ काम न कर रहा हो, बल्कि वह केवल ईश्वर की प्रसन्नता के लिए हो। यह हदीस बताती है कि ईश्वर अपने बन्दों से कितना गहरा सम्बन्ध रखता है। और इस्लाम को जीवन सम्बन्धी मामलों में मौलिक रूप से निःस्वार्थ प्रेम अभीष्ट है।

इस्लाम ईश्वरीय अनुग्रह एवं सुखसाध्य है

(1) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा— "मैंने (स्वप्न में) देखा कि लोग मेरे सामने पेश किए जा रहे हैं और उन (के शरीर) पर क़मीज़ें हैं। कुछ क़मीज़ें तो केवल छातियों तक ही हैं और कुछ उनसे नीचे हैं। और उमर-बिन-ख़त्ताब भी मेरे सामने पेश किए गए। उनके शरीर पर जो कमीज़ है (वह इतना लम्बा है कि) वे उसे खींचते हुए चलते हैं।" लोगों ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) इस स्वप्न का क्या अर्थ है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "धर्म"।

व्याख्या : यह हदीस और दूसरी कितनी ही ऐसी हदीसें हैं जिनसे स्पष्ट होता है कि वह धर्म जिसकी ओर ईश्वर के रसूल को लोगों को आमंत्रित करने का आदेश हुआ है, उसकी एक स्पष्ट हैसियत सुखसाध्य, ईश्वर की दया और उसके अनुग्रह की है। धर्म को इस दृष्टि से भी समझना और समझाना चाहिए कि धर्म मात्र एक दायित्व

ही नहीं है, बल्कि वह एक महा सुख-साधन भी है। इसी लिए धर्म को किसी हदीस में दूध से अभिहित किया गया है तो कहीं उनके लिए खाने के दस्तरख़ान पर बुलाए जाने की मिसाल पेश की गई है। इस सम्बन्ध में यहाँ हम केवल एक हदीस उद्धृत करना चाहेंगे जिसमें धर्म को कई पहलुओं से ईश्वर के नबी ने ईश-अनुग्रह और सुख-साध्य ठहराया है। नबी (सल्ल॰) कहते हैं—

"मैंने रात्रि में स्वप्न में देखा कि मैं मानो उक़बा-बिन-राफ़ेअ के घर में हूँ और हमें रुतुब-बिन-मताब की खजूर (जो अत्यन्त उत्तम प्रकार की खजूर है) प्रदान की गई। तो मैंने इसका अर्थ यह किया कि उच्चता संसार में हमारे लिए है और अच्छा परिणाम भी परलोक में हमारे लिए निश्चित है और निस्सन्देह हमारा धर्म उत्तम है।"

(हदीस : अबू दाऊद)

हदीस में यदि धर्म को क़मीज़ से अभिहित किया है तो यह एक उत्तम अभिव्यंजना है। क़मीज़ से शरीर की सुरक्षा ही नहीं होती, बल्कि वह शरीर के लिए शोभा भी है। उपर्युक्त अबू-दाऊद की हदीस में तो स्पष्ट शब्दों में आप (सल्ल॰) ने कहा है कि धर्म हमारे लिए उच्चता का कारण है, जिसे कोई चुनौती नहीं दे सकता। परलोक की सफलता का भी सम्बन्ध नबी (सल्ल॰) के लाए हुए धर्म से ही है। विचार कीजिए कि यह धर्म कितनी बड़ी निधि और हमारी श्रेष्ठता और सम्मान का कारण है। स्वप्न का यह अर्थ नबी (सल्ल॰) ने 'उक़बा-बिन-राफ़ेअ के घर और "हमें रुतुब-बिन-मताब" जैसे शब्दों के प्रकाश में किया है। उक़बा में परलोक का और राफ़ेअ में उच्चता का और रुतुब-बिन- मताब में उत्तमता का भाव पाया जाता है।

सुशीलता और चरित्र

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुममें सबसे अच्छा वह व्यक्ति है जो शील और स्वभाव की दृष्टि से सबसे अच्छा है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : किसी व्यक्ति के अच्छा होने की असल पहचान यह है कि शील-स्वभाव की दृष्टि से वह अच्छा हो। नैतिक दृष्टि से वह जितना अच्छा होगा धर्म के दृष्टिकोण से भी वह उतना ही अच्छा समझा जाएगा। धर्म वास्तव में सुशीलता और चरित्र ही का दूसरा नाम है। अलबत्ता इस्लाम ने नैतिकता की जो धारणा प्रस्तुत की है वह अत्यन्त व्यापक है। इसके क्षेत्र में मनुष्य का पूरा जीवन आ जाता है। इस्लाम की दृष्टि में यह नैतिकता और चरित्र ही है कि हम एक ईश्वर पर ईमान लाएँ और उसकी कृपाओं पर हम उसके कृतज्ञ हों और उसके निर्धारित किए हुए जीवन के सीधे मार्ग पर चलने का प्रयास करें।

(2) हज़रत ज़ाबिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"ईश्वर ने मुझे नैतिक विशेषताओं और अच्छे कर्मों को पूर्णता प्रदान करने के लिए भेजा है।"(हदीस : शरहुस्सुन्ना)

व्याख्या : अर्थात् यह जान लेने की ज़रूरत है कि पैग़म्बर संसार में कोई चमत्कार दिखाने के लिए नहीं भेजा जाता, वह मानव-जगत् में केवल इसलिए आता है कि वह लोगों के शील-स्वभाव और कर्मों को सँवारे और नैतिकता और चरित्र की दृष्टि से उन्हें उच्च-से-उच्च स्थान तक पहुँचाए।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उन्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"मुझे सुशीलता और नैतिकता को पूर्णता प्रदान करने लिए भेजा गया है।" (हदीस : अहमद)

व्याख्या : इस हदीस में भी यही बात कही गई है कि पैग़म्बर संसार में मौलिक रूप से जिस कार्य के लिए आता है वह नैतिकता

को पूर्णता प्रदान करना है। नैतिकता ही धर्म है और धर्म ही नैतिकता है। धर्म जिस व्यक्ति का नैतिक आचरण न बन सका वह वास्तव में धर्म से बहुत दूर है, संसार में लोग उसे भले ही सबसे बढ़कर धार्मिक व धर्मात्मा समझते हों।

इस्लाम में संसार-त्याग नहीं

(1) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसमान-बिन-मज़ऊन को बुलाया और कहा—

> "ऐ उसमान, क्या तुम्हें मेरा तरीक़ा अप्रिय है?" वे बोले नहीं, ऐ अल्लाह के रसूल! मैं तो आप ही के तरीक़े को पसन्द करता हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा, "मैं सोता भी हूँ और नमाज़ भी पढ़ता हूँ। रोज़ा रखता हूँ और नहीं भी रखता। स्त्रियों से विवाह भी करता हूँ। अतः ऐ उसमान, ईश्वर से डरो। तुम्हारी पत्नी का भी तुमपर हक़ है, तुम्हारे अतिथि का भी तुमपर हक़ है, और तुम्हारा भी तुमपर हक़ है। अतः रोज़ा रखो भी और नहीं भी रखो, नमाज़ भी पढ़ो और सोया भी करो।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : मालूम हुआ कि आत्म-दमन, त्याग और इबादत में अति की नीति अपनाना इस्लाम के विरुद्ध है। बस उतनी इबादत और त्याग धर्म में अभीष्ट है जिसकी पुष्टि नबी (सल्ल॰) के आचरण से होती है। यह कदापि ठीक नहीं है कि मनुष्य अपने परिवार और स्वयं अपने हक़ की ओर से बिलकुल बेपरवाह हो जाए और अपने आप को त्याग और तपस्या की भेंट चढ़ा दे। इस सम्बन्ध में नबी (सल्ल॰) का तरीक़ा ही हमारे लिए वास्तविक मार्गदर्शक है। आप (सल्ल॰) के तरीक़े से हटकर जो तरीक़ा भी अपनाया जाएगा, इस्लाम की दृष्टि में उसका कोई मूल्य और महत्व न होगा।

यह तरीक़ा प्रकृति के कितना अनुकूल है कि मनुष्य सोए भी और रात्रि में नमाज़ भी पढ़े। अनिवार्य रोज़े के अतिरिक्त तद्धिक

(नफ़्ल) रोज़े भी रखे और कभी न भी रखे। ऐसा न करे कि सदैव रोज़ा ही रखता रहे। आदमी पर उसके बीवी-बच्चों का भी हक़ है और आनेवाले अतिथियों का भी हक़ है और सबसे बढ़कर अपने पर स्वयं का भी हक़ है। इबादत और तपस्या बस इस सीमा तक उचित है कि आदमी पर जो लोगों के और उसके स्वयं अपने हक़ होते हैं, उनके कारण उनसे वे उपेक्षित होकर न रह जाए। ऐसा न हो कि वह इबादत और तपस्या ही को सबकुछ समझ ले। आदमी को यह समझ लेना चाहिए कि जीवन की रंगीनियों में एक ही सत्य की छवियाँ क्रियाशील हैं, इनमें से किसी एक की भी उपेक्षा अपराध है।

(2) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

> "अपनी जानों पर सख़्ती न करो अन्यथा तुमपर सख़्ती होगी, क्योंकि कुछ लोगों ने अपने ऊपर सख़्ती की तो अल्लाह ने भी उनपर सख़्ती की। उन्हीं के अवशेष हैं गिरजाओं में और घरों में। (ईश्वर ने कहा है) संसार-त्याग (की रीति) उन्होंने स्वयं आविष्कृत की थी। हमने उनके लिए इसे अनिवार्य नहीं किया था।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : इस हदीस ने स्पष्ट कर दिया कि इस्लाम में ऐसी दरवेशी की कोई गुंजाइश नहीं है जिसका अर्थ संसार-त्याग, सुख-त्याग हो। यह रहबानियत और ऐसा संन्यास है जो इस्लाम की प्रकृति और उसके उद्देश्यों के विपरीत है। अपने ऊपर सख़्ती को अनिवार्य करना ही अगर धर्म ठहरा तो फिर धर्म तो मनुष्य के लिए एक मुसीबत होगा। उसे मानव-जीवन का व्याख्याकार और स्पष्टीकरण नहीं कहा जा सकता, और न जीवन के लिए उससे कोई मार्गदर्शन प्राप्त किया जा सकता है। बुद्धिष्टों के मठों और ईसाइयों के गिरजाघरों या किसी ख़ानकाह में यदि रहबानियत की शिक्षा दी जाती है तो यह वही चीज़ है जिससे क़ौमों को सदैव रोका गया है। जब लोगों ने स्वयं अपने

ऊपर सख़्ती को अनिवार्य कर लिया तो ईश्वर ने भी उन्हें उनके हाल पर छोड़ दिया कि वे अपने विचार और भ्रम में कठिनाई और रहबानियत ही को मुक्ति का साधन समझते रहें। इस्लाम ने रहबानियत या संसार-त्याग को ईश्वरीय इच्छा के विपरीत बताया और अपने अनुयायियों को संसार-त्याग से दूर रखा। रहबानियत और संन्यास के अवशेष आज भी गिरजाओं और सन्यासियों के निवास-गृहों में देखे जा सकते हैं कि किस प्रकार कुछ लोग संसार की सुख-सामग्रियों को अपने ऊपर त्याज्य निश्चित कर लेने ही को वास्तविक धार्मिकता और धर्म समझते हैं, जबकि धर्म वास्तव में त्याग से बढ़कर पाने का नाम है।

तथ्यपरक-धर्म

(1) हज़रत जरीर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम क़ियामत के दिन अपने प्रभु को उसी तरह देखोगे जैसे इस (चन्द्रमा) को देखते हो। लोगों की भीड़ से इसके देखने में कोई रुकावट पैदा नहीं होगी। यदि सम्भव हो तो सूर्य निकलने से पहले की और उसके अस्त होने से पहले की नमाज़ की हिफ़ाज़त करो। फिर आप (सल्ल॰) ने यह आयत पढ़ी— "अपने प्रभु का गुणगान करो सूर्य उदय होने से पहले और उसके अस्त होने से पूर्व।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : आकाश में पूर्णिमा का चाँद चमक रहा था, उसे देखकर प्यारे नबी (सल्ल॰) ने कहा कि क़ियामत के दिन तुम्हें अपने प्रभु के दर्शन इसी तरह प्राप्त होंगे, जिस तरह इस चाँद को एक साथ कितने ही लोग देखते हैं लेकिन इससे किसी को देखने में कोई कठिनाई नहीं होती। ठीक इसी प्रकार लोग क़ियामत के दिन अपने रब को बग़ैर किसी रुकावट के देखेंगे। फ़ज्र और अस्र की नमाज़ों की

पाबन्दी करनेवाले अपने प्रभु के दीदार के पात्र हैं। सूर्योदय होनेवाला है किन्तु वे सूर्य को नहीं, ईश्वर को याद करते हैं। सूर्यास्त होने जा रहा है किन्तु वे जानते हैं कि जिसको उन्होंने अपना रब ठहराया है उसका पतन नहीं। वे उसी को सजदा करते हैं, अलबत्ता दुनिया में सूर्य का एक स्पष्ट लक्षण है। इसके उदय होने पर हमें दिन प्राप्त होता है और इसके अस्त पर रात होती है, और मनुष्य को दिन-रात दोनों ही की आवश्यकता है। और यह सूर्य के उदय-अस्त पर निर्भर करते हैं, किन्तु मोमिन व्यक्ति जानता है कि सूर्य और चन्द्र सभी एक ईश्वर के चाकर हैं। उसी के आदेश से ये हमारी सेवा में लगे हुए हैं। पूजा का पात्र ईश्वर के अतिरिक्त कोई नहीं हो सकता।

(2) हज़रत अबू-क़तादा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि लोग सो गए और (भोर की) नमाज़ का समय निकल गया, तो नबी (सल्ल.) ने कहा—

> "ईश्वर ने जब चाहा तुम्हारी आत्मा को ग्रस्त कर लिया और जब चाहा वापस कर दिया।"
>
> अतएव लोग अपनी ज़रूरतों से निवृत्त हुए और वुज़ू किया। यहाँ तक कि सूर्य उदित होकर पूर्ण रूप से प्रकाशित हो गया, तो आप (सल्ल.) खड़े हुए और नमाज़ पढ़ी।
>
> (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : क़ुरआन में भी है कि ईश्वर निद्रा की दशा में हमारी आत्माओं को ग्रस्त कर लेता है। अतएव कहा गया, "अल्लाह ही प्राणों को उनकी मृत्यु के समय ग्रस्त कर लेता है, और जिसकी मृत्यु नहीं आई उसे उसकी निद्रा की दशा में ग्रस्त कर लेता है। फिर जिसकी मृत्यु का फ़ैसला कर दिया है उसे रोक रखता है और दूसरों को एक निश्चित काल तक के लिए छोड़ देता है।" (क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-42) अर्थात् ईश्वर मृत्यु का अनुभव प्रत्येक को कराता है कि मनुष्य समझ ले कि ईश्वर जब चाहे उसे अपने क़ब्ज़े में

ले ले और उसकी सारी स्वतंत्रता समाप्त होकर रह जाए। मृत्यु के पश्चात् मनुष्य तो मौजूद होता है किन्तु स्वतंत्र नहीं, ईश्वर के अधिकार में होता है। मरने के पश्चात् मनुष्य जिस लोक में रहता है उसे समझने के लिए हमारा यह स्वप्न-लोक पर्याप्त है। मनुष्य की नींद जब टूट जाती है तो मानो उसे पुनः संसार में भेज दिया गया। उसे फिर संकल्प और कर्म के अवसर प्राप्त हो गए। किन्तु अन्ततः वास्तविक मृत्यु से तो उसे एक दिन दोचार होना ही पड़ेगा। तत्पश्चात् दुनिया में वापसी का अवसर शेष नहीं रहता।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जब क़ियामत निकट होगी तो मोमिन का स्वप्न झूठा न होगा, और मोमिन का स्वप्न नुबूवत के छियालीस भागों में से एक भाग है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : क़ियामत वह दिन है जब सारे रहस्य खुल जाएँगे और सभी तथ्य पूर्ण प्रकाश में आ जाएँगे तो किसी के लिए सम्भव न होगा कि वह सत्य का इनकार कर सके। नबी (सल्ल॰) के इस कथन से ज्ञात होता है कि क़ियामत के निकट के समय की यह विशिष्टता होगी कि मोमिन सच्चा स्वप्न देखेगा। वह स्वप्न में जो कुछ देखेगा, उसका फल स्पष्ट रूप से सामने आ जाएगा। यह वास्तव में क़ियामत के प्रभाव के कारण होगा जो दूर नहीं, बहुत निकट होगी।

इस हदीस में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण विचारणीय बात कही गई है। मोमिन का स्वप्न नुबूवत के छियालीस भागों में से एक भाग होता है। मोमिन के सच्चे स्वप्न को नुबूवत से एक प्रकार की समरूपता प्राप्त होती है। स्वप्न में आदमी का अपना कोई हस्तक्षेप नहीं होता। वह वही देखेगा जो उसे दिखाया जाएगा। यही हाल नुबूवत का भी है, उसमें नबी का अपना कोई दख़ल नहीं होता। सम्पूर्ण अनुग्रह ईश्वर का होता है। स्वप्न के द्वारा मनुष्य को कुछ ऐसी बातें मालूम हो

जाती हैं जिनके जानने का कोई भौतिक साधन नहीं होता। इसलिए स्वप्न को प्रकाशना और नुबूवत से किसी हद तक समरूपता प्राप्त है। किन्तु फिर भी प्रकाशना और नुबूवत एक और ही चीज़ हैं, जिसका अनुभव सिर्फ़ एक नबी ही को प्राप्त होता है। किन्तु मोमिन के सच्चे स्वप्न इसका प्रमाण अवश्य हैं कि भौतिक साधनों के अतिरिक्त ज्ञान का ऐसा साधन भी सम्भव है जो भौतिक न हो किन्तु भौतिक माध्यमों से कहीं अधिक सुदृढ़ और विश्वसनीय हो। वह साधन है— नुबूवत और ईश-प्रकाशना। अल्लाह जब किसी व्यक्ति को नुबूवत प्रदान करता है। तो अभौतिक माध्यम और अभौतिक तरीक़े से उस तक अपना संदेश पहुँचाता है। इसको धर्म की परिभाषा में वह्य या रिसालत या नुबूवत कहते हैं।

धर्म का एक ही होना

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना—

> "मैं मरयम के बेटे (हज़रत ईसा) के निकट सब लोगों से अधिक हूँ। समस्त नबी परस्पर 'अल्लाती भाई' (के सदृश) हैं और मेरे और ईसा के मध्य कोई नबी नहीं है।"
>
> (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) के कथन का अर्थ यह है कि मैं हज़रत ईसा (अलै॰) के बहुत निकट हूँ। मेरे और उनके मध्य कोई नबी नहीं हुआ है। वैसे तो जितने नबी हुए हैं वे सब एक-दूसरे से अत्यन्त निकट हैं। क्योंकि वे परस्पर अल्लाती भाई के सदृश हैं। अल्लाती भाई वे होते हैं जिनकी माताएँ तो अलग-अलग होती हैं किन्तु उन सबका पिता एक होता है। इसी प्रकार सभी नबी ईश्वर की ओर से जो धर्म लेकर आते रहे हैं, वह धर्म अपने मूल और मौलिक शिक्षाओं और धारणाओं की दृष्टि से एक ही रहा है। अलबत्ता चूँकि नबी विभिन्न कालों और परिस्थितियों और विभिन्न जातियों में आए हैं,

इसलिए आनुषांगिक और गौण समस्याएँ भी भिन्न रही हैं। इसलिए उनके यहाँ आनुषांगिक आदेश भी भिन्न पाए जाँएगे। यह एक बिलकुल स्वाभाविक बात है, ऐसा होना ही चाहिए।

इस हदीस ने इस धारणा का बिलकुल खंडन कर दिया कि धर्म कई हो सकते हैं और सभी धर्म सत्य होते हैं। सर्व धर्म सत्यम् की यह धारणा भी बिलकुल असत्य है। मौलिक मतभेदों ही के कारण विभिन्न धर्मों के आविर्भाव की सम्भावना होती है। यदि उन धर्मों में मौलिक मतभेद सिरे से न पाया जाता हो तो उन्हें विभिन्न धर्म कहना ही ग़लत होगा, वे सब एक ही धर्म होंगे। इसलिए ऐसी स्थिति में सर्व धर्म सत्यम् का नारा लगाने के बदले एकम् धर्म की बात करनी चाहिए।

विभिन्न धर्मों के मध्य यदि मौलिक धारणाओं और मूलभूल शिक्षाओं में मतभेद पाया जाता है तो इस दशा में उन सब धर्मों को सत्य कहना ग़लत होगा, क्योंकि सच्चाइयाँ परस्पर टकराएँ इसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

मुस्लिम समुदाय का पदीय उत्तरदायित्व

(1) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जिसको तुमने अच्छा कहा, उसके लिए जन्नत अनिवार्य हो गई। और जिसको बुरा कहा, उसके लिए नरकाग्नि अनिवार्य हो गई। तुम धरती में ईश्वर के गवाह हो, तुम धरती में ईश्वर के गवाह हो, तुम धरती में ईश्वर के गवाह हो।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : उल्लेखों से ज्ञात होता है कि नबी (सल्ल॰) ने यह बात एक विशेष अवसर पर कही थी, जबकि आप (सल्ल॰) के साथियों (सहाबा) ने एक गुज़रते हुए जनाज़े (अरथी) की प्रशंसा की थी और एक जनाज़े के सम्बन्ध में बुरा मत प्रकट किया था। हदीस का यह

वाक्य मौलिक महत्त्व रखता है। "तुम धरती में ईश्वर के गवाह हो।" इससे सर्वप्रथम सहाबा सम्बोधित हैं। किन्तु सत्य यह है कि क्रमशः सभी मुसलमान या मुस्लिम समुदाय की हैसियत इस धरती पर अल्लाह के गवाह की अर्थात् अल्लाह की ओर से नियुक्त गवाह या सत्य के साक्षी की है। सत्य की गवाही देना मुसलमानों का पदीय दायित्व होता है। इस दायित्व की ओर से असावधान रहना किसी प्रकार भी वैध नहीं है। मुसलमानों का कर्तव्य है कि ईश्वर ने उन्हें जिस महत्वपूर्ण पद पर खड़ा किया है उससे असावधान न हों। वे संसारवासियों के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नेतृत्व का कर्तव्य निभाएँ। उन्हें व्यावहारिक और वैचारिक हर प्रकार की पथ भ्रष्टताओं और गुमराहियों से निकालकर सत्य से परिचित कराएँ। सत्य की गवाही देने के इस पदीय दायित्व का उल्लेख क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में किया गया है। उदाहरणार्थ एक जगह आया है—

"ऐ ईमान लानेवालो, अल्लाह के लिए गवाह होकर दृढ़तापूर्वक इनसाफ़ की रक्षा करनेवाले बनो।"

(क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-8)

एक दूसरी जगह कहा गया है—

"और इसी प्रकार हमने तुम्हें बीच का उत्तम समुदाय बनाया है ताकि तुम समस्त मनुष्यों पर गवाह हो, और रसूल तुम पर गवाह हो।" (क़ुरआन, सूरा-2 अल-बक़रा- आयत-143)

एक आयत में ये शब्द आए हैं—

"ताकि रसूल तुमपर गवाह हो और तुम समस्त मनुष्यों पर गवाह हो।" (क़ुरआन, सूरा-22 हज्ज, आयत-78)

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) बयान करते हैं कि मेरे ज्ञान और विश्वास के अनुसार अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"ईश्वर इस समुदाय के लिए हर शताब्दी के सिरे पर ऐसा व्यक्ति पैदा करेगा जो उसके लिए उसके धर्म की पुनर्स्थापना करेगा।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : अर्थात् धर्म को ताज़ा करेगा। उसकी मलिनता को दूर करेगा। लोगों में एक नया प्राण डालेगा। उनमें नया संकल्प और साहस जगाएगा। इस्लाम धर्म की दृष्टि से हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) अल्लाह के अन्तिम नबी हैं। आप (सल्ल०) के पश्चात अब कोई नबी आनेवाला नहीं है और न किसी नबी के आने की आवश्यकता ही पाई जाती है। अब इसके पश्चात् क़ियामत ही आएगी, जिसमें लोगों के विषय में यह निर्णय किया जाएगा कि उनमें कौन व्यक्ति ईश्वर की अपार दयालुता का पात्र है और कौन ईश्वर की दृष्टि में अपराधी है। अपराधियों के हिस्से में ईशप्रकोप के सिवा और कुछ भी न आएगा।

मानवों के मार्गदर्शन और उनकी शिक्षा के लिए क़ुरआन पर्याप्त है और फिर क़ुरआन के बाद नबी (सल्ल०) की शिक्षाएँ हमारे लिए मार्गदर्शन हैं। इसके अतिरिक्त नबी (सल्ल०) से प्रत्यक्षतः लाभान्वित होनेवाले सहाबा का जीवन भी हमारे लिए प्रकाशमान मीनार की हैसियत रखता है।

इसमें संदेह नहीं है कि समय बदल जाता है और समय के चाल-ढाल में परिवर्तन आ जाता है, किन्तु यह सब होने पर भी मनुष्य की नैतिक, आध्यात्मिक और मानसिक आवश्यकता अपरिवर्तनीय ही रहती है। इसलिए क़ियामत तक के लिए इनसान के मार्गदर्शन के लिए क़ुरआन और नबी (सल्ल०) की शिक्षाएँ पर्याप्त हैं। इससे इनकार नहीं कि समय बीतने के साथ-साथ परिस्थितियों में स्पष्टतः परिवर्तन आता है और नई-नई समस्याएँ और मामले दुनिया के सामने आते हैं। किन्तु इसके लिए ज़रूरी नहीं कि मूल धर्म में परिवर्तन किया जाए और उसकी शिक्षाओं पर पुनरावलोकन की आवश्यकता महसूस की जाए। आवश्यकता होती है तो केवल इसकी कि धर्म की पुनर्स्थापना होती रहे, अर्थात् नई परिस्थितियों और नवीन पृष्ठभूमि में धर्म, उसकी अपेक्षाओं, उसके व्यावहारिक रूपों और उसकी

प्रासंगिकता को समझा जाए, ताकि नई परिस्थितियों में धर्म की सुदृढ़ता और उसकी स्थापना की अपेक्षाएँ पूरी हो सकें। यह वह महान उद्देश्य है जिसे दृष्टि में रखते हुए इस हदीस में यह वादा किया गया है कि प्रत्येक शताब्दी के सिरे पर मुस्लिम समुदाय में ऐसे मुजद्दिद (धर्म के पुनर्स्थापक) पैदा होंगे, जो धर्म के पुनर्स्थापना का कर्तव्य निभाएँगे। वे धर्म की सुदृढ़ता के लिए पूर्ण प्रयास करेंगे। विचार और कर्म की दृष्टि से लोगों में जो ख़राबी पैदा हो गई होगी वे उन ख़राबियों और उन कुरीतियों से जो धर्म के नाम पर पैदा की गई होंगी, धर्म को मुक्त करेंगे और मुस्लिम समुदाय की कठिनाइयों को दूर करेंगे। वे दुनिया के समक्ष सामान्य रूप से और मुस्लिम समुदाय के समक्ष विशेष रूप से धर्म को निखारकर प्रस्तुत करेंगे। सत्य धर्म में उनके द्वारा तरो-ताज़गी बनी रहेगी और उसमें किसी प्रकार की जीर्णता न आने पाएगी। वे उन सन्देहों का भी निवारण करेंगे जो परिस्थितियों और समय के कारण उभरे होंगे। वे अपने ज्ञानात्मक, विचारात्मक और व्यावहारिक कामों से यह सिद्ध कर देगें कि इस्लाम कोई जामिद (जड़) और अप्रगतिशील धर्म नहीं है बल्कि इसके विपरीत इस्लाम एक गतिशील धर्म है, जिसमें विकासशीलता का गुण पाया जाता है। मनुष्य का ज्ञान सम्बन्धी और वैचारिक स्तर कितना ही उच्च क्यों न हो जाए, और उसके शोधों और अनुभवों में असाधारण अभिवृद्धि क्यों न हो जाए ईश्वरीय मार्ग-दर्शन की आवश्यकता उसे सदैव रहेगी। धर्म उन्नति के मार्ग में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करता। चरित्र निर्माण धर्म के मौलिक उद्देश्यों में से है। इसके अतिरिक्त जीवन के सभी क्षेत्रों में चाहे उसका सम्बन्ध समाज से हो या आर्थिक विषयों और राजनीति से, इस्लाम मनुष्य का सम्यक् मार्गदर्शन करता है।

इतिहास साक्षी है कि नबी (सल्ल॰) का वादा पूरा होकर रहा। प्रत्येक काल में मुस्लिम समुदाय में ऐसे मुजद्दिद पैदा हुए जिन्होंने

धर्म के पुनर्स्थापन की महान सेवा का कार्य किया और भविष्य में भी ऐसे मुजद्दिद पैदा होंगे जो यह सेवा-कार्य करेंगे। नबी (सल्ल॰) की एक महत्वपूर्ण भविष्यवाणी यह भी है कि मुस्लिम समुदाय में अनिवार्यतः एक गरोह सदैव सत्य पर सुदृढ़ और सत्य के लिए प्रयासरत रहेगा। ऐसा कभी न होगा कि पूरा-का-पूरा समुदाय सत्य मार्ग से फिर जाए और सत्य मात्र विगत का अफ़साना बनकर रह जाए। सत्य धर्म (इस्लाम) सदैव अपने पूर्ण और प्रामाणिक रूप में मौजूद रहेगा। कल ईश्वर के यहाँ किसी की यह बात कदापि नहीं सुनने के योग्य न होगी कि उसे तो सत्य की खोज थी किन्तु दुनिया में सत्य का वुजूद कहीं शेष ही नहीं रह गया था। इसमें सन्देह नहीं कि आज इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्म अप्रामाणिक होकर रह गए हैं। उनमें ऐसी परस्पर विरोधी, ज्ञान के विरुद्ध और बुद्धि और न्याय के विपरीत बातें पाई जाती हैं जो इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि वे न तो प्रमाणित हैं और न उनका अनुसरण ही किया जा सकता है, वे लोगों को सत्य का परिचय क्या कराते, वे लोगों को सत्य से विमुख करने का कार्य कर रहे हैं। किन्तु इस्लाम के रूप में सत्य आज भी सत्य के अभिलाषियों के लिए स्पष्ट और प्रकाशमान है। असत्यवादियों को यदि भय है तो इसी से है। वे इसकी शत्रुता में अत्यन्त दुस्साहस के साथ नैतिक मर्यादा तक को रौंदते दिखाई देते हैं।

यहाँ इस पहलू से भी विचार कर लें। समय बीतने के साथ-साथ परिस्थितियों में गहरे परिवर्तन आते हैं। नए-नए प्रकार की समस्याओं का लोगों को सामना करना पड़ता है। क़ुरआन एक विशेष समय में अवतरित हुआ है। नबी (सल्ल॰) की शिक्षाएँ और निर्देश भी देखने में एक विशेष युग और विशेष प्रकार के वातावरण से सम्बन्ध रखते हैं। अतएव, क़ुरआन और नबी (सल्ल॰) की शिक्षाओं में भी समय की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। यहाँ यह प्रश्न उठता है कि इस्लाम के

मुजद्दिद या विद्वान उनसे विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों में, जिनमें क़ुरआन अवतरित हुआ है और जिनमें नबी (सल्ल॰) ने अपने अनुयायियों का मार्गदर्शन किया है, कैसे ईश्वरीय आशय को समझने में सफल होंगे और न केवल यह कि वे मुस्लिम समुदाय का सम्यक मार्गदर्शन करेंगे बल्कि व्यवहारतः दुनिया को यह दिखा देंगे कि इस्लाम कोई जड़ धर्म नहीं है कि वह समय का साथ न दे सके। वह सदैव और हर युग में मानव का मार्गदर्शन करेगा और उसे कभी भी मात्र विगत समय का वृत्तान्त नहीं कहा जा सकता। अगली हदीस यही बताती है कि परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही क्यों न बदल जाएँ मानव के मार्गदर्शन के लिए इस्लाम पर्याप्त है। आवश्यकता केवल इसकी होगी कि धर्म में चिन्तन, सोच-विचार और इज्तिहाद (गहरे चिन्तन एवं मीमांसा) से काम लिया जाए। यदि ऐसा हुआ तो इस्लामी शिक्षाओं की संग्रिहकता और उसके विचार और धारणाओं की गहराइयाँ सदैव हमारा मार्गदर्शन करती रहेंगी।

(3) हज़रत मुआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उन्हें यमन भेजा तो पूछा, "जब तुम्हारे सामने कोई मामला और विवाद प्रस्तुत होगा तो उसका फ़ैसला किस प्रकार करोगे?" उन्होंने कहा कि मैं अल्लाह की किताब के अनुसार फ़ैसला करूँगा। आप (सल्ल॰) ने कहा, "यदि अल्लाह की किताब में (स्पष्टतः) तुम्हें उसके सम्बन्ध में कोई आदेश न मिले?" उन्होंने कहा कि फिर मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सुन्नत (तरीक़ा) के अनुसार फैसला करूँगा। आप (सल्ल॰) ने कहा, "और यदि अल्लाह के रसूल की सुन्नत में भी तुम्हें उसके विषय में कोई आदेश या निर्देश न मिल सके?" उन्होंने कहा कि फिर मैं अपनी सम्मति और अनुमान से काम लेकर इज्तिहाद करूँगा और इसमें कोई कोताही नहीं करूँगा। इसपर अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उनके सीने को ठोकते हुए शाबाशी दी और कहा, "प्रशंसा और शुक्र है उस ईश्वर के लिए जिसने अल्लाह

के रसूल के दूत को इस बात की तौफ़ीक़ (प्रदान) दी जो अल्लाह के रसूल को प्रिय है।" (हदीस : तिरमिज़ी, अबू-दाऊद, दारमी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि मनुष्य के विचार और उसकी बुद्धि को भी धर्म में विशेष स्थान प्राप्त है। धर्म की मौलिक शिक्षाओं और उसके सिद्धान्तों के प्रकाश में समझ-बूझ से काम लेकर ज्ञानवान उन समस्याओं को आसानी से हल कर सकते हैं और उन मामलों और विवादों के फ़ैसले भी कर सकते हैं जो नए प्रकार के होंगे। उनका उल्लेख क़ुरआन और सुन्नत में स्पष्ट रूप में न किया गया है और न किया जा सकता था। हज़रत मुआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) को क़ुरआन और सुन्नत के ज्ञान और दीन की समझ-बूझ में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त था। वे इस बात को भलि-भाँति जानते थे कि फ़ैसले के लिए यदि कोई मामला सामने आता है तो सबसे पहले क़ुरआन और सुन्नत की ओर रुजूअ करना चाहिए। यदि वहाँ हमें कोई स्पष्ट आदेश न मिल सके तो फिर क़ुरआन और सुन्नत के प्रकाश में 'इज्तिहाद' और 'क़ियास' अर्थात् गहरे चिन्तन और सोच-विचार से काम लेकर उसके विषय में कोई फ़ैसला किया जाएगा। हज़रत मुआज़-बिन-जबल (रज़ि॰) ने नबी (सल्ल॰) के प्रश्नों के जो उत्तर दिए हैं वे धर्म के अभिप्राय और इस्लामी प्रवृति के अत्यन्त अनुकूल थे। इसलिए नबी (सल्ल॰) ने अपनी प्रसन्नता प्रकट की।

मुहद्दिसों अर्थात, हदीस-शास्त्र के विद्वानों की दृष्टि में इस हदीस की सनद मज़बूत नहीं। किन्तु अपने भाव और अर्थ की दृष्टि से इस हदीस के सत्यानुकूल होने से किसी को इनकार नहीं हो सकता। प्रत्येक युग में मुस्लिम समुदाय के धर्मशास्त्री और इज्तिहाद करनेवालों ने इस हदीस के आधार पर ऐसे हज़ारों प्रश्नों के उत्तर दिए हैं जिनके सम्बन्ध में क़ुरआन और सुन्नत में कोई आदेश नहीं पाया जाता था।

सत्य धर्म का आमंत्रण

धर्म के आमंत्रण का महत्त्व

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रजि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल.) ने फ़रमाया—

"मेरी ओर से (लोगों तक) पहुँचाओ चाहे वह एक आयत हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात नबी (सल्ल॰) के अनुयायियों की ज़िम्मेदारी है कि वे आप (सल्ल॰) के सन्देश को जनसामान्य तक पहुँचाएँ। और इस सिलसिले में प्रत्येक व्यक्ति को हिस्सा लेने की कोशिश करनी चाहिए। यदि किसी को एक ही आयत का ज्ञान है तो वह उससे ही दूसरों को अवगत कराए। इसकी प्रतीक्षा न करे कि जब उसके पास ज्ञान का भण्डार एकत्र हो जाएगा उस समय वह धर्म-प्रचार का काम शुरू करेगा। जिसके पास दीन-धर्म की जो बात भी हो। वह उसे छिपाकर न रखे, बल्कि उसकी कोशिश यह हो कि वह लोगों तक पहुँचे ताकि अधिक-से-अधिक लोग उससे लाभ उठा सकें।

आज हम मुसलमानों के पास एक ही आयत नहीं पूरा क़ुरआन और दीन (धर्म) अपने पूर्ण रूप में मौजूद है। फिर यह नबी (सल्ल॰) के आदेश की कितनी बड़ी अवहेलना होगी कि हमें उसे दूसरों तक पहुँचाने की चिन्ता न हो। जब हमारे पास क़ुरआन की एक ही आयत (वाक्य) हो उसे भी छिपाकर अपने पास रखना ठीक नहीं है, बल्कि उसे दूसरों तक पहुँचाना ज़रूरी है, तो क़ुरआन जिसमें 6666 आयतें हैं, यदि हम उसे अपने ही पास सुरक्षित रखें और उसे दूसरों तक न पहुँचाएँ, तो यह कितना बड़ा अन्याय होगा, इसे प्रत्येक व्यक्ति समझ सकता है।

(2) हज़रत इब्ने साद (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा : "अल्लाह की क़सम 'अल्लाह यदि तुम्हारे मार्गदर्शन से एक व्यक्ति को सत्यमार्ग पर लगा दे, तो यह तुम्हारे लिए लाल रंग के ऊँट से उत्तम है।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : इस हदीस में धर्म के आमंत्रण के लिए प्रेरित किया गया है और बताया गया है कि कोई व्यक्ति इस कार्य को निम्न कोटि का कार्य कदापि न समझे। यदि हमारी कोशिशों से एक व्यक्ति सत्य मार्ग को पा ले, इसमें हमारे लिए जो लाभ है, वह लाल रंग के ऊँटों से कहीं अधिक है। लाल रंग के ऊँटों का उदाहरण नबी (सल्ल०) ने इसलिए दिया कि अरबों में लाल रंग के ऊँट बहुत क़ीमती समझे जाते थे। ऐसे ऊँट उन्हें बहुत प्रिय थे।

फिर एक और पहलू से देखें। मनुष्य का जो मूल्य है संसार की कोई भी चीज़ उसके मुक़ाबले में नहीं पेश की जा सकती चाहे देखने में वह कितनी ही क़ीमती क्यों न हो। इस धरती की उस मूल्यवान चीज़ जिसे मनुष्य कहते हैं उसे विनष्ट और पथभ्रष्ट होने से बचाकर सत्यमार्ग पर लगाना कितने बड़े सौभाग्य की बात है, इसका अन्दाज़ा प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है।

(3) हज़रत अनस (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल० ने कहा –

"अल्लाह के मार्ग में प्रातः या सन्ध्या को निकलना संसार और संसार में जो कुछ है, सबसे उत्तम है।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में भी सत्य-मार्ग में प्रयास रत होने की श्रेष्ठता का उल्लेख किया गया है। सत्य-धर्म के प्रचार और प्रसार और उसके उच्च एवं प्रतिष्ठित होने के लिए जो प्रयास भी किया जाएगा उस सबकी गणना सत्य-मार्ग के प्रयासों में होगी। धर्म के प्रचार एवं प्रसार के कार्य-सेवा का सौभाग्य जिसे प्राप्त हो गया, समझ

लीजिए उससे बढ़कर सौभग्यशाली कोई दूसरा नहीं हो सकता। संसार और संसार की समस्त चीज़ें अस्थायी और नाशवान हैं, किन्तु धर्म के लिए मोमिन (आस्थावान) की कोशिश और प्रयास का शाश्वत मूल्य है। सत्य-धर्म के आमंत्रण सम्बन्धी चरित्र और कार्य के कारण मोमिन को परलोक में जो कुछ प्राप्त होनेवाला है वह कभी समाप्त होनेवाला नहीं।

(4) हज़रत अबू-अबस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल सल्ल॰ ने कहा —

"जिस बन्दे के क़दम (पाँव) अल्लाह की मार्ग के धूल से अट (भर) गए उसे नरक की आग न छुएगी।

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात् यदि हम चाहते है कि नरक की आग हमें न छू सके और अल्लाह की यातना से हम सुरक्षित रहें, तो फिर हमें अल्लाह के मार्ग में प्रयत्नशील और प्रयासरत होना पड़ेगा, सत्य-मार्ग की कठिनाइयों को सहन करना-पड़ेगा। अल्लाह के मार्ग में हमें थकावट भी आएगी। हमारे पाँव धूल से अट सकते हैं और हमारे कपड़े मैले भी हो सकते हैं। यह और इस तरह की दूसरी चीज़ों की परवाह किए बिना हमें अल्लाह के मार्ग में प्रयत्नशील होना पड़ेगा। यही वह वास्तविक और विश्वसनीय कर्म-मार्ग है जिसपर चलकर हम जन्नत के अधिकारी हो सकते हैं और अपने आप को नरक से बचा सकते हैं।

(5) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा —

"वह व्यक्ति नरक में नहीं जाएगा जो अल्लाह के डर से रोया हो जब तक कि दूध थनों में वापस न चला जाए और किसी बन्दे पर अल्लाह के मार्ग की धूल और नरक का धुवाँ एकत्र नहीं हो सकते।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस में मोमिन के अन्तर अर्थात उसके हृदय की भाव-दशा व्यक्त की गई है और यह भी बताया गया है कि कर्म-लोक में उसके जीवन की दिशा क्या होती है। उसके हृदय की भाव-दशा यह होती है कि जब अल्लाह का भय उसपर छा जाता है तो वह चिल्ला उठता है और रोने लग जाता है। उसके आँसू जो ईश-भय से आँखों से बह पड़ते हैं, अत्यन्त मूल्यवान होते हैं। जिस तरह थन से निकला हुआ दूध थन में वापस नहीं जाता ठीक उसी तरह नरक में जाने की संभावना उसके रोने और चीख़ मारने के कारण शेष नहीं रहती। अल्लाह का डर रखनेवालों के लिए यह कितनी बड़ी शुभ सूचना है।

कार्य-क्षेत्र में मोमिन अल्लाह का सिपाही होता है। वह अल्लाह के मार्ग में प्रयासरत रहता है। अल्लाह के मार्ग की धूल और थकान को वह उस आराम और सुख की अपेक्षा अधिक पसन्द करेगा जो आराम और सुख उसे अपनी कार्य-चेष्टाओं से दूर रखे और फिर उसे ईश्वरीय धर्म की स्थापना और अल्लाह का बोल-बाला हो इसकी कोई चिन्ता न हो।

इस हदीस की समानार्थक हदीस की किताबों में और हदीस भी मिलती हैं। नसई की एक हदीस में ये शब्द भी आए हैं : "किसी मुस्लिम (की नाक) के दोनों नथनों में (अल्लाह के मार्ग की धूल और नरक का धुवाँ) कभी भी एकत्र नहीं हो सकते।" नसई ही की एक रिवायत में ये शब्द मिलते हैं : "किसी बन्दे के पेट में (अल्लाह के मार्ग की धूल और नरक का धुवाँ) कभी एकत्र नहीं हो सकते और किसी बन्दे के दिल में लाभ एवं कृपणता और ईमान इकट्ठा नहीं हो सकते।"

इन सभी रिवायतों में जो बात कही गई है वह यही है कि अल्लाह की राह की धूल और नरक का धुवाँ दोनों ही किसी मोमिन के हिस्से में आएँ यह संभव नहीं है। ऐसा नहीं हो सकता कि एक व्यक्ति धर्म के लिए दुनिया में अपनी जान खपाए और तरह-तरह की

मुसीबतें झेले, फिर जब वह दुनिया से अपने रब के पास लौटे तो उसका स्वागत नरक के धुएँ से हो।

सत्य-मार्ग की परीक्षा

(1) हज़रत साद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) से पूछा गया कि लोगों में सबसे अधिक परीक्षा किस की होती है? आप (सल्ल॰) ने कहा —

> "नबियों की। फिर इसके बाद क्रमशः जो श्रेष्ठ हो। आदमी की परीक्षा भी उसकी धार्मिकता के अनुसार होती है। यदि वह अपने धर्म में सुदृढ़ है, तो उसकी परीक्षा भी कठिन होती है और यदि वह अपने धर्म में नर्म है, तो उसकी परीक्षा भी हल्की होती है। परीक्षाओं अथवा आज़माइशों का यही चक्र चलता रहता है यहाँ तक कि वह इस तरह चलता-फिरता है कि कोई गुनाह उसपर नहीं रहता।"
>
> (हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

व्याख्या : धर्म के मार्ग में ईमानवालों की परीक्षा अवश्य होती है। दुष्ट और धर्म-विरोधी कभी भी इसे पसन्द नहीं करेंगे कि सत्य-धर्म को उन्नति प्राप्त हो। इसलिए वे सत्यवादियों के मार्ग में हमेशा रुकावटें खड़ी करते रहते हैं। धर्म के मार्ग में परीक्षा सत्यवादियों की अपनी धार्मिकता के अनुसार होती है। यदि वे अपने धर्म पर अत्यन्त मज़बूती के साथ जमे हुए हैं और सत्य-धर्म का आमंत्रण देने में सजग है, इस कार्य में न तो ग़लत तौर पर नरमी से काम लेते हैं और न सत्य की क़ीमत पर असत्यवादियों से कोई समझौता करते हैं, तो ऐसे लोगों को कठिन आज़माइशों का सामना करना पड़ता है। इस सिलसिले में सबसे पहले प्रत्यक्ष गरोह नबियों अर्थात् पैग़म्बरों का है। फिर क्रमशः लोगों की धार्मिकता की दृष्टि से परीक्षा होती है। और सत्य-मार्ग में आज़माइशों का दौर (चक्र) किसी-न-किसी रूप में चलता रहता है। अल्लाह के सच्चे और विश्वसनीय बन्दे अल्लाह की कृपा से

धरती में इस तरह जीवन व्यतीत कर रहे होते हैं कि उनपर अल्लाह की ओर से कोई आरोप नहीं होता। वे परीक्षा में पूरे उतरते हैं। असत्य उन्हें सत्य से फेरने में सफल नहीं होता। वे अपनी ज़िम्मेदारियों की ओर से कभी ग़ाफ़िल नहीं होते।

(2) हज़रत ख़ब्बाब (रज़ि॰) कहते हैं कि मैं नबी (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुआ, आप उस समय चादर का तकिया लगाए हुए काबा की छाया में थे। हमें बहुदेववादियों की ओर से बहुत यातनाएँ पहुँच चुकी थीं। इसलिए कहा कि क्या आप दुआ नहीं करते? यह सुनकर आप बैठ गए। आप (सल्ल॰) का चेहरा लाल हो गया, फिर आप (सल्ल॰) ने कहा : "तुमसे पहले एक व्यक्ति का हाल यह होता कि उसकी हड्डी के मांस और पट्ठों के नीचे लोहे की कंघियाँ चलाते लेकिन यह चीज़ भी उसे उसके दीन (धर्म) से न हटाती थी। और किसी के सिर पर आरा रखकर दो टुकड़े कर दिए जाते थे, फिर भी यह चीज़ उसे उसके धर्म से विचलित न करती थी। और अल्लाह की क़सम! अल्लाह इस धर्म को पूरा करके रहेगा, यहाँ तक कि एक सवार सनआ से हज़र-मौत तक इस तरह निर्भय होकर यात्रा करेगा कि उसे अल्लाह के सिवा किसी का डर न होगा।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : कुछ रिवायतों में "अल्लाह के सिवा किसी का डर न होगा" के बाद ये शब्द भी हैं : "ऐसी शान्ति की स्थापना होगी कि दूरवर्ती यात्रा में भी आदमी को अल्लाह के सिवा किसी का डर न होगा या फिर उसे भय होगा तो अपनी बकरियों के लिए केवल भेड़िए का कि कहीं वह उनपर हमला न कर दे।"

इस हदीस से कई बातें मालूम होती हैं। इससे मालूम होता है कि दीन और ईमान की दौलत वह दौलत है जिसे किसी भी दशा में छोड़ा नहीं जा सकता। चाहे इसके लिए आदमी को आरे से चीर दिया जाए या उसके मांस और खाल में लोहे की कंघियाँ ही क्यों न चुभो दी जाएँ। इतिहास में ऐसी दुखद घटनाओं का उल्लेख मिलता है कि अत्याचारी, क्रूर अधर्मियों ने ईमानवालों के शरीर के दो टुकड़े कर

दिए किन्तु वे अपने ईमान पर अन्तिम सांस तक जमे रहे। वे जानते थे कि धर्म के मार्ग में इस तरह की मुसीबतों का आना असंभव और अप्रत्याशित नहीं है।

इस हदीस से यह ज्ञात हुआ कि सत्य-धर्म के प्रचार और प्रसार की कोशिशों में जल्दबाज़ी नहीं दिखानी चाहिए। यह ऐसा कार्य है कि इसमें धैर्य की आवश्यकता होती है। सफलता उन्हीं के हिस्से में आती है, जो धर्म के लिए निरन्तर सचेष्ट और प्रयासरत रहते हैं और धर्म के मार्ग में असाधारण धैर्य और सुदृढ़ता से काम लेते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण बात इस हदीस से यह भी ज्ञात होती है कि शान्ति की स्थापना वास्तव में धर्म की स्थापना से ही संभव है। सत्य-धर्म के स्थापित और प्रभावी होने का कार्य यह है कि धरती में शान्ति स्थापित हो। लोगों के दिलों में बस एक ईश्वर का भय हो। उन्हें हर प्रकार के अत्याचार और ज़ुल्म से सुरक्षा प्राप्त हो।

(3) हज़रत मुआविया (रज़ि॰) से उल्लिखित है। वे कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना कि "मेरे समुदाय में निरन्तर एक ऐसा गरोह मौजूद रहेगा जो अल्लाह के दीन की सुरक्षा और उसकी स्थापना में लगा रहेगा। जो लोग उसका साथ न देंगे वे उसका कुछ बिगाड़ न सकेंगे और न वे लोग जो उसके विरोधी होंगे उसे तबाह (विनष्ट) कर सकेंगा। यहाँ तक कि अल्लाह का फ़ैसला आ जाए और दीन का रक्षक गरोह अपनी हालत पर क़ायम रहेगा।"

(हदीस : बुख़ारी-मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि सत्य के अनुयायियों को आज़माइशों और परीक्षाओं का सामना करना पड़ेगा। उनका विरोध भी होगा। उन्हें सहयोग और साथ देने से इनकार भी किया जाएगा। लेकिन इस विरोध और रुकावटों के बावजूद अल्लाह के उपासकों का एक गरोह सदैव दीन (धर्म) की सुरक्षा में लगा रहेगा। परिस्थिति की दृष्टि से दीन की जो अपेक्षाएँ होंगी वह उन्हें पूरा करने की कोशिश

करेगा। इस प्रकार दीन की सुरक्षा और उसकी स्थापना की चेष्टा सदैव होती रहेगी यहाँ तक कि क़ियामत की घड़ी आ जाए'

आमंत्रण का परिचय

(1) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने जब मुआज़ (रज़ि॰) को यमन भेजा तो कहा –

"तुम ऐसे लोगों के पास जा रहे हो जो किताबवाले हैं, तो सबसे पहले जिस चीज़ की तरफ़ तुम उन्हें आमंत्रित करो तो वह अल्लाह की इबादत (अर्थात उसका ज्ञान) है। फिर जब वे अल्लाह को पहचान लें तो उनको बताना कि अल्लाह ने उनके दिन और उनकी रात में पाँच नमाज़ें अनिवार्य की हैं। जब वे नमाज़ पढ़ने लगें तो उन्हें बताना कि प्रतापवान अल्लाह ने उनपर ज़कात (दान) भी अनिवार्य की है, जो उनके मालदारों से ली जाएगी और फिर उन्हीं के निर्धनों की ओर लौटा दी जाएगी। जब वे इसे स्वीकार कर लें तो उनसे ज़कात लो और उनके अच्छे मालों से बचो।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम हुआ कि नबी (सल्ल॰) जो आमंत्रण देने के लिए दुनिया में आए थे, वास्तव में वह आमंत्रण क्या था। आप (सल्ल॰) का आमंत्रण इसके सिवा और कुछ न था कि लोग एक अल्लाह के बन्दे बनकर रहें। वे अपने अल्लाह को पहचान लें और उन्हें यह ज्ञात हो जाए कि अल्लाह के क्या हक़ उनपर होते हैं। और अल्लाह के बन्दों के प्रति उनकी क्या ज़िम्मेदारी होती है। अल्लाह का बन्दों पर यह हक़ है कि वे उसे पहचानें और उसकी इबादत और उपासना को अपना परम कर्तव्य समझें। इबादत और नमाज़ के जो समय निश्चित किए गए हैं उन समयों में वे अपने प्रभु ईश्वर को सजदा करें और उसके आगे बिछ जाएँ। नमाज़ अल्लाह का सबसे महत्वपूर्ण और मौलिक हक़ है जिसका अदा करना प्रत्येक

विशिष्ट और जनसामान्य के लिए अनिवार्य है। नमाज़ पढ़ने के बाद आदमी आज़ाद नहीं हो जाता कि जो चाहे करे, बल्कि स्वयं नमाज़ इसकी अपेक्षा करती है कि वह जीवन के समस्त क्षेत्रों में अल्लाह का आज्ञाकारी बनकर रहे और उसके आदेशों की अवहेलना से बचे।

अल्लाह के बन्दों के हक़ का विशिष्ट चिन्ह ज़कात है। सामर्थ्यवान लोगों के लिए ज़कात अनिवार्य है। ज़कात ख़ासतौर से मोहताजों और ज़रूरत मन्दों पर ख़र्च की जाएगी। बुख़ारी की एक रिवायत में ये शब्द आए भी हैं, "ज़कात क़ौम के मालदारों से ली जाए और उनके मोहताजों और ज़रूरत मन्दों पर ख़र्च की जाएगी।" ज़कात वुसूल करनेवालों को इसकी ताकीद की गई है कि वे ज़कात वुसूल करते वक़्त इस बात का ख़्याल रखें कि वे ज़कात में चुन-चुनकर अच्छे माल लेने की कोशिश न करें। इससे लोगों का दिल टूटेगा। उनके हक़ का ध्यान रखना आवश्यक है।

(2) हज़रत जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) 'मौक़फ़' में लोगों के सामने अपने-आपको पेश करते थे। आप (सल्ल०) ने कहा –

"क्या कोई व्यक्ति है जो मुझे उठाकर अपने लोगों के पास ले चले, क्योंकि क़ुरैश ने मुझे इससे रोक दिया है कि मैं अपने रब का कलाम (वाणी) लोगों तक पहुँचाऊँ।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : मौक़फ़ अर्थात् वक़ूफ़ की जगह अर्थात् अरफ़ात का मैदान जहाँ हज के अवसर पर सभी हज करनेवाले एकत्र होते हैं। आप (सल्ल०) इस इच्छा को कितनी विकलता के साथ व्यक्त कर रहे हैं कि कोई व्यक्ति आपको अपनी क़ौम में ले जाए ताकि आप (सल्ल०) अल्लाह का सन्देश उस क़ौम तक पहुँचा सकें। और वह क़ौम सत्य-मार्ग पा ले और लोक-परलोक में सफल हो सके। आप (सल्ल०) के यह कहने से कि "क़ुरैश ने मुझे इससे रोक दिया है कि मैं अपने रब का कलाम (वाणी) लोगों तक पहुँचाऊँ।"

आमंत्रण का सबसे प्रभावकारी तरीक़ा यही हो सकता है कि क़ुरआन के द्वारा सत्य-सन्देश को जन-सामान्य तक पहुँचाया जाए। अल्लाह अपने सन्देश को जिस प्रकार स्पष्ट करेगा उससे उत्तम स्पष्टीकरण और अर्थपूर्ण कथन संभव नहीं। और सन्देश को प्रभावकारी बनाने के लिए उससे उत्तम शैली भी संभव नहीं जो अल्लाह ने अपने कलाम में अपनाई है।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि हम लोग मस्जिद में बैठे हुए थे कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हमारे पास आए और कहा : "यहूद की ओर चलो"। हम आप (सल्ल॰) के साथ चले यहाँ तक कि "बैतुल-मिदरास" पहुँचे। नबी (सल्ल॰) खड़े हुए और उन्हें आवाज़ दी कि "ऐ यहूद के लोगो, तुम इस्लाम स्वीकार कर लो, सुरक्षित रहोगे।" उन्होंने कहा कि ऐ अबुल-क़ासिम, आपने सन्देश पहुँचा दिया। आपने कहा : "यही मेरा उद्देश्य था।" फिर दूसरी बार यही शब्द आप (सल्ल॰) ने कहे तो लोगों ने कहा कि ऐ अबुल-क़ासिम, आपने सन्देश पहुँचा दिया। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है। इसी हदीस में आगे चलकर यहूद के देश निकाले का उल्लेख हुआ है जिसे हमने दीर्घता के भय से उद्धृत नहीं किया। आप (सल्ल॰) ने यहूदियों की दुष्टताओं और उनके षड़यंत्रों और जोड़-तोड़ के बाद यह निर्णय किया कि उन्हें देश से निकाल दिया जाए तो इस अवसर पर भी आप (सल्ल॰) ने उन्हें इस्लाम स्वीकार करने के लिए आमंत्रित किया और समझाया कि इस्लाम स्वीकार कर लो, इसमें तुम्हारा भला है। परलोक के अतिरिक्त इस लोक में भी तुम सुरक्षित और निश्चिन्त रहोगे। लेकिन यहूदियों ने यही उत्तर दिया कि ऐ अबुल-क़ासिम (यह नबी (सल्ल॰) का उपनाम था) आपने सन्देश पहुँचा दिया। आप अपनी ज़िम्मेदारी पूरी कर चुके।

आप (सल्ल॰) ने कहा कि हम भी यही चाहते थे कि सन्देश तुम

तक पहुँच जाए। मुझ पर यह आरोप और इलज़ाम न आए कि मैंने सत्य-सन्देश के पहुँचाने और तुम्हें इस्लाम का सन्देश देने में असावधानी दिखाई। आगे स्वीकार करने या अस्वीकार करने का तुम्हें अधिकार है।

(4) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा –

जो व्यक्ति सत्य-मार्ग की ओर बुलाए, तो उसे उनके बराबर प्रतिदान मिलेगा जो उसका अनुसरण करेंगे। और इससे अनुसरण करनेवालो के प्रतिदान में कोई कमी न होगी। और जो व्यक्ति गुमराही अथवा पथभ्रष्टता की ओर आमंत्रित करेगा तो उसपर उनके बराबर गुनाह होगा जो (गुमराही में) उसका अनुसारण करेंगे और इससे अनुसरण करनेवालों के गुनाह में कोई कमी न होगी। (मुस्लिम)

व्याख्या : इस्लाम सर्वथा मार्ग-दर्शन है। इसलिए उसके आमंत्रण को मार्ग-दर्शन का आंमत्रण कहते हैं। इस्लाम ग्रहण किए बिना न तो वास्तविक रूप में मनुष्य का सुधार हो सकता है और न कभी वह वास्तविक रूप से सफल हो सकता है। सत्य के आमंत्रण की श्रेष्ठता जिसका वर्णन इस हदीस में हुआ है वह असाधारण है। किसी सत्य की ओर बुलानेवालों के आमंत्रण को जितने लोग स्वीकार करेंगे और जो उन्हें प्रतिदान मिलेगा उसके समान आमंत्रणदाता को प्रतिदान और पुण्य प्राप्त होगा। क्योंकि उन सब के मार्गदशन और सत्यवादिता का वास्तव में प्रेरक वही है।

मार्गदर्शन का आमंत्रण जिसे अरबी भाषा में 'दावत इलल-हुदा' कहते हैं। इसके अतिरिक्त इस्लाम के आमंत्रण को अन्य नामों से भी अभीहित किया गया है। उदाहरणार्थ ईमान (विश्वास) की ओर आमंत्रण, क्षमादान, मुक्ति, भलाई तथा सलामती के घर की ओर आमंत्रण आदि।

जो व्यक्ति सत्य-मार्ग को छोड़कर पथभ्रष्टता और गुमराही को

फैलाता है और लोगों को पथभ्रष्टता की ओर आमंत्रित करता है, तो जितने लोग उसके प्रेरित करने के कारण गुमराह होंगे और उनके हिस्से में जितना गुनाह आएगा उसके समान ही गुमराह करनेवाले के हिस्से मे आएगा क्योंकि वही उन लोगों की गुमराही और पथभ्रष्टता का असल कारण रहा है।

ईमान का आमंत्रण

(1) हज़रत अब्बास-बिन-अब्दुल-मुत्तलिब से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

"उस व्यक्ति ने ईमान का रसास्वादन कर लिया जिसने अल्लाह को अपना रब, इस्लाम को अपना दीन और मुहम्मद (सल्ल.) को अपना रसूल सहर्ष मान लिया।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस्लाम के आमंत्रण के बहुत-से पक्ष हैं। मौलिक रूप से यह ईमान का आमन्त्रण है। ईमान के बिना इस्लाम के मार्ग में एक पग भी चलना सम्भव नहीं है। इस्लाम का भवन ईमान के आधार पर ही खड़ा होता है। इसलिए इस्लाम मनुष्य से सर्वप्रथम अपेक्षा यह करता है कि वह इस्लाम की प्रस्तुत की हुई सच्चाइयों और तथ्यों पर ईमान लाए। ईश्वर को अपना रब और अधीश स्वीकार करे, इस्लाम को सत्य-धर्म समझकर उसे अपने जीवन में अपनाए और हज़रत मुहम्मद (सल्ल.) की रिसालत को स्वीकार करे, जो ईश्वर की ओर से हमारे मार्गदर्शन के लिए भेजे गए हैं।

सच्चा ईमान वही है जिसमें दिल की ख़ुशी और मन की प्रसन्नता पाई जाती हो। आदमी ईमान लाने में किसी प्रकार की अप्रियता महसूस न करे। इस रूप में अनिवार्यतः मुनष्य को ईमान की मिठास और स्वाद प्राप्त होगा और वह ईमान को जीवन की सबसे प्रिय वस्तु समझेगा।

ईमान के आमंत्रण का उल्लेख क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में किया गया है—

"हमारे रब! हमने एक पुकारनेवाले को ईमान की ओर बुलाते सुना कि अपने रब पर ईमान लाओ, तो हम ईमान ले आए।" (क़ुरआन, सूरा-3 आले-इमरान, आयत-193)

इस्लाम की ओर आमंत्रण

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि एक यहूदी लड़का नबी (सल्ल॰) की सेवा किया करता था। वह बीमार हुआ तो नबी (सल्ल॰) उसका हाल मालूम करने के लिए गए और उसके सरहाने बैठकर आप (सल्ल॰) ने उससे कहा कि "इस्लाम स्वीकार कर ले। "लड़के ने अपने बाप की ओर देखा, जो उसके निकट ही मौजूद था। बाप ने कहा कि "बेटा! अबुल-क़ासिम (मुहम्मद सल्ल॰) की बात मान ले। अर्थात् इस्लाम स्वीकार कर ले।" अतएव लड़के ने इस्लाम स्वीकार कर लिया। नबी (सल्ल.) वहाँ से बाहर आए तो आप (सल्ल॰) की ज़बान पर ये शब्द थे कि "हर प्रकार की प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है, जिसने इस लड़के को दोज़ख़ से छुटकारा दिया।"

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि नबी (सल्ल॰) इसके लिए कितने चिन्तित रहते थे कि लोग नरकाग्नि से बच सकें। आप (सल्ल॰) यहूदी लड़के की बीमारी में उसकी मिज़ाजपुरसी के लिए जाते हैं तो सबसे अधिक चिन्ता आप (सल्ल॰) को इस बात की हुई कि कहीं यह बीमार लड़का इस्लाम स्वीकार किए बिना दुनिया से न चला जाए और आख़िरत में ईश्वर की दयालुता से वंचित होकर रहे और उसका ठिकाना जन्नत न होकर दोज़ख़ ठहरे।

इस हदीस से यह भी मालूम होता है कि सत्य के आमंत्रणदाता को आमंत्रण सम्बन्धित दायित्व की ओर से किसी दशा में भी सुस्ती से काम नहीं लेना चाहिए। जब भी और जहाँ भी उसे इस्लाम के आमंत्रण का अवसर मिले वह उस अवसर को हाथ से जाने न दे।

सम्भव है कि कोई व्यक्ति उसकी कोशिश से इस्लाम स्वीकार कर ले और उसका जीवन असफलताओं, निराशाओं और ईश्वर की यातना से सुरक्षित हो जाए। सत्य के आमंत्रणदाता के प्रयासों का मूल्यांकन प्रत्येक संवेदनशील व्यक्ति भलि-भाँति कर सकता है।

आमंत्रण ईश्वर की ओर

(1) हज़रत अबू-दर्दा (रजि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया–

"अल्लाह का आदर करो वह तुम्हें क्षमा कर देगा।"

(हदीस : मुस्नद अहमद, तबरानी)

व्याख्या : अल्लाह की ओर से आनेवाले नबी हमेशा अपनी क़ौम को एक अल्लाह की ओर बुलाते रहे हैं। उनके आमंत्रण का सारांश यही रहा है कि लोग अपने पैदा करनेवाले प्रभु को पहचानें। उसकी प्रतिष्ठा और बड़ाई का उन्हें एहसास हो। वे अल्लाह पर ईमान लाएँ और उसकी बन्दगी करें। अल्लाह के अतिरिक्त न उनका कोई स्रष्टा है और न कोई पूज्य हो सकता है। इसलिए वे एकाग्र होकर एक अल्लाह की उपासना करें और बहुदेववाद से अपने दामन को पाक रखें।

इस हदीस में कहा गया है कि मनुष्य का सर्वप्रथम कर्तव्य यह है कि वह अल्लाह की बड़ाई और महानता को सदैव अपने समक्ष रखे। उसका एक क्षण भी अल्लाह के आदर से रिक्त न हो। यदि मनुष्य ईश्वर की बड़ाई और उसका आदर निरन्तर करता रहता है और ईश्वर की महानता की जो भी अपेक्षाएँ हैं वह उन्हें पूरा करता है तो अल्लाह उसपर दया दर्शाएगा। वह उसकी भूल-चूक और ख़ता को क्षमा कर देगा और अपनी दयालुता के दामन से उसको ढक लेगा। ठीक यही वह आमंत्रण था जो हज़रत नूह (अलै.) ने अपनी क़ौम के सामने प्रस्तुत किया था। नूह (अलै.) ने अपनी क़ौम से शिकायत करते हुए यही कहा था कि–

"तुम्हें क्या हो गया है कि तुम (अपने दिलों में) अल्लाह के प्रति गौरव और गरिमा की आशा नहीं रखते।"

(क़ुरआन, सूरा-71 नूह, आयत-13)

उसकी महानता और बड़ाई इस बात की अपेक्षा करती है कि तुम अल्लाह की बन्दगी करो और उसका डर रखो और पैग़म्बर की आज्ञा का पालन करो। वह तुम्हें क्षमा करके तुम्हारे गुनाहों से तुम्हें पाक कर देगा। (देखें क़ुरआन, सूरा-71 नूह, आयत-3-4) अल्लाह का आदर और उसकी गरिमा और महानता को ध्यान में रखने के अन्तर्गत जीवन के समस्त क्षेत्र आ जाते हैं। अतएव अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए किसी व्यक्ति से प्रेम करना भी ईश्वर का आदर करने में समाहित है। एक हदीस में है कि—

"जिस बन्दे ने अल्लाह के लिए किसी बन्दे से प्रेम किया तो अनिवार्यतः उसने अपने प्रतापवान रब का आदर किया।"

(हदीस : मुसनद अहमद)

(2) हज़रत जुबैर-बिन-नुफ़ैर (रज़ि॰) को यह हदीस पहुँची है। वे कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा —

"मेरी ओर यह वह्य या प्रकाशना नहीं की गई है कि मैं धन एकत्र करूँ और व्यापारी बनूँ, बल्कि मेरी ओर वह्य यह की गई है कि 'तुम अपने रब की प्रशंसा करो और सजदा करनेवालों में सम्मिलित हो जाओ। और अपने रब की बन्दगी में लगे रहो, यहाँ तक कि जो विश्वसनीय है वह तुम्हारे समक्ष आ जाए'।" (हदीस : शरहुस्सुन्ना)

व्याख्या : यह एक महत्त्वपूर्ण हदीस है। यह हदीस स्पष्टतः बताती है कि मानव जीवन का मौलिक उद्देश्य व्यापार या धन एकत्र करना कदापि नहीं है। माल या धन की हैसियत जीवन-उद्देश्य की कादापि नहीं हो सकती। धन मनुष्य की एक सांसारिक आवश्यकता है इससे इनकार नहीं किया जा सकता। इसी लिए माल को ख़ैर भी कहा गया है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति माल और व्यापार ही को

जीवन की उपलब्धि और वास्तविक जीवनोद्देश्य समझ बैठे तो इसे पथभ्रष्टता के सिवा और कुछ नहीं कह सकते। नबियों (अलैहि.) को जिस उद्देश्य के अन्तर्गत भेजा गया है और उनकी ओर जिस उद्देश्य के लिए वह्य की गई है वह कुछ और है। अतएव नबी (सल्ल.) कहते हैं कि मेरी ओर ईश्वर ने वह्य की है कि तुम्हें अपने रब के गुणों और उसके सौन्दर्य और परिपूर्णता का ज्ञान हो। तुम्हें अपने रब के गुणों का बोध हो सके और तुम्हारी ज़बान पर स्वतः ईश-प्रशंसा के शब्द आ जाएँ। और इससे भी तुम्हारे दिल को तसल्ली न हो तो उसके आगे बिछ जाओ। उसके आगे सजदा करके यह प्रदर्शित करो कि बड़ाई, महानता, सौन्दर्य एवं पूर्णता से उसी की सत्ता विभूषित है। दुनिया में यदि कहीं सुन्दरता और अभीष्ट गुण की झलक पाई जाती है तो वह ईश्वर का दान और उसके गुणों का मात्र प्रतिबिम्ब है। इस रूप में पूजा और बन्दगी के अतिरिक्त तुम्हारे जीवन को और कुछ कदापि नहीं होना चाहिए। फिर यह नीति सामयिक कदापि न हो। बल्कि आख़िरी साँस तक तुम्हारी यही जीवन-शैली हो। उससे भिन्न जीवन-शैली सत्य की उपेक्षा, अज्ञान और कुफ़्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकती।

(3) हज़रत अबू-दर्दा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

> "प्रतापवान अल्लाह ने कहा है कि 'मेरा, जिन्न और मनुष्य का मामला एक भारी (शोचनीय) ख़बर की हैसियत रखता है। पैदा मैं करता हूँ और पूजा व बन्दगी वह दूसरे की करता है। आजीविका मैं देता हूँ और आभार वह मेरे अतिरिक्त दूसरे का स्वीकार करता है'।"

(हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : इस हदीस में नबी (सल्ल.) ने क़ुरआन की सूरा-51 ज़ारियात आयत-56-58 का हवाला दिया है। यह हदीस बताती है कि इससे बड़ी और दुखद दुर्घटना और क्या होगी कि जिन्न हों या

मनुष्य, वे ईश्वर के स्पष्ट हक़ और अधिकार को भूल बैठें। अल्लाह उनका स्रष्टा है किन्तु वे बन्दगी और पूजा किसी और की करने लगे। ईश्वर ही उनको आजीविका देता है। किन्तु कृतज्ञता वे किसी और के आगे प्रकट करने लगें। जिन्न और मनुष्यों के लिए बुद्धिसंगत बात यह है कि वे अल्लाह की बन्दगी करें और उसके कृतज्ञ बन्दे बनकर रहें। जिस तरह आजीविका देनेवाले का आभारी होना एक उचित और नैतिक कर्म है, इससे किसी को इनकार नहीं हो सकता, ठीक उसी तरह उस ईश्वर के लिए दिल में प्रेम का पैदा होना एक स्वाभाविक बात है, जिसने हमें अस्तित्व प्रदान किया और बुद्धि चेतना और सूझ-बूझ से विभूषित किया है। पूजा और बन्दगी वास्तव में प्रेम ही का आत्यान्तिक रूप है। ईश्वर के लिए प्रेम का यही आत्यान्तिक रूप अभीष्ट भी है।

(4) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि एक दिन मैं नबी (सल्ल॰) की सवारी पर आप (सल्ल॰) के पीछे बैठा हुआ था कि आप (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

> "ऐ लड़के! अल्लाह का ख़याल रखो, वह तुम्हारा ख़याल रखेगा। अल्लाह का ख़याल रखो तो तुम उसे अपने समक्ष पाओगे। जब तुम माँगो तो अल्लाह से माँगो और जब तुम सहायता चाहो तो अल्लाह से चाहो।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है। कहा जा रहा है कि तुम अल्लाह का ख़याल रखो। उसकी उपेक्षा न करो और उससे ग़ाफ़िल न रहो। हर दशा में उसके हक़ और अधिकार का तुम्हें आदर करना चाहिए। उसकी सच्ची चाहत यदि तुममें हो तो वह तुम्हें वंचित नहीं रखेगा। तुम उसका ख़याल रखोगे तो निश्चय ही वह भी तुम्हारा ख़याल रखेगा। उसके लिए असम्भव नहीं कि तुम्हें साक्षात का स्थान प्रदान करे। अर्थात् तुम अपने ज्ञान-चक्षु की दृष्टि से उसे अपने से दूर नहीं बल्कि अपने समक्ष पाने लग जाओ। मानो तुम उसे अपनी खुली

आँखों से देख रहे हो और उसके सामने अन्य वस्तुएँ अस्तित्वहीन प्रतीत हों।

ऐसे दयावान और सर्वशक्तिमान ईश्वर को छोड़कर किसी और पर भरोसा करना उचित नहीं हो सकता। माँगो तो उसी से माँगो और सहायता की आवश्यकता हो तो सहायता के लिए भी अल्लाह ही से प्रार्थना करो। वह तुम्हारी आवश्यकताओं को पूरी करेगा। उसके लिए तुम्हारी मदद के लिए सामान जुटाना कुछ भी मुश्किल नहीं।

(5) हज़रत आइशा (रज़ि॰) कहती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जब लोगों को आदेश देते तो उन्हीं कामों का आदेश देते जिनके करने की शक्ति और सामर्थ्य लोगों में होती। लोगों ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! हम आप जैसे नहीं हैं' आपके तो अगले-पिछले सब गुनाह अल्लाह ने क्षमा कर दिए हैं। इसपर आप (सल्ल॰) क्रुद्ध हुए। यहाँ तक कि आप (सल्ल॰) का क्रोध आप (सल्ल॰) के चेहरे से व्यक्त हो रहा था। फिर आप (सल्ल॰) ने कहा, "मैं तुमसे अधिक (अल्लाह से) डरता और तुमसे अधिक अल्लाह को जानता हूँ।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि अपने आपको कठिनाइयों में डालना स्वयं में कदापि अभीष्ट नहीं है। मनुष्य पर बस अपनी शक्ति और क्षमता की दृष्टि से दायित्व आता है। दीन और धर्म तो मनुष्य की पीठ से उस बोझ को उतारने के लिए आया है जिसके नीचे मनुष्य दबकर रह गया था। कठिनाई को अपने आपमें अभीष्ट और मुक्ति के लिए अनिवार्य ठहराना एक ऐसा दुस्साहस है कि इसपर नबी (सल्ल॰) को क्रोध आ गया और कहा कि मुझे तुमसे अधिक ज़िम्मेदारी का एहसास और अल्लाह का डर है। और मैं तुमसे अधिक अल्लाह को जानता और उसे पहचानता हूँ। ईश-परायणता की वह धारणा ग़लत है जो तुम्हारे मन में बैठी हुई है। धर्म को अप्रिय बोझ बनाना ईश-परायणता नहीं है। यदि कठिनाइयों ही का नाम ईश-परायणता होता तो इसमें अल्लाह का रसूल किसी से पीछे कैसे

रह सकता था। अल्लाह का रसूल सबसे अधिक अल्लाह को जानता और उसे पहचानता है और ईश ज्ञान ही वास्तविक धर्म है। यदि ईश ज्ञान की अपेक्षाएँ वे होतीं जो तुम समझते हो तो तुम अल्लाह के नबी को उसमें किसी से पीछे कदापि न पाते। रसूल का जीवन और उसकी कर्म-नीति ही तुम्हारे लिए आदर्श है। इस दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण हदीस है कि इसमें ईश-ज्ञान को धर्म का मौलिक आधार ठहराया गया है। तथ्य तो यह है कि वास्तविक धर्म और उसकी मूल आत्मा ईश-ज्ञान ही है। शरीअत, क़ानून और नियम आदि वास्तव में ईश-ज्ञान की अपेक्षाएँ हैं। अल्लाह को जानने से दिल में उसका भय और आदर पैदा होता है और फिर मनुष्य को इसकी चिन्ता होती है कि वह जीवन के मामलों में वह नीति न अपनाए जिससे अल्लाह अप्रसन्न होता है। अल्लाह ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के लिए नियम और आदेश दे दिए हैं जिनका ध्यान रखना उन लोगों के लिए आवश्यक है जो अल्लाह की प्रसन्नता के इच्छुक हों। अल्लाह के प्रदान किए नियम और क़ानून आदि की हैसियत एक पूर्ण जीवन-व्यवस्था की है, जिसकी स्थापना की कामना दुनिया में मोमिनों की सबसे बड़ी कामना होती है।

(6) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा--

> "रहमान (कृपाशील) की बन्दगी और उपासना करो, (भूखों को) खाना खिलाओ और सलाम किया करो, सलामती के साथ जन्नत में दाख़िल हो जाओगे।"

(हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

व्याख्या : अर्थात् इस्लाम का सन्देश बिलकुल स्वाभाविक, सादा और सहज है। यह वह सन्देश है जिसको हर व्यक्ति समझ सकता है। इसके स्वीकार्य होने से कोई इनकार नहीं कर सकता। इस्लाम का सन्देश और आमंत्रण वास्तव में अल्लाह की ओर आमंत्रण है। अल्लाह की ओर आमंत्रण की अपेक्षा यह होती है कि मनुष्य जीवन

में अल्लाह की इच्छाओं को समझे। अल्लाह को वह अपना प्रभु और उपास्य ठहराए और उसकी पसन्द की हुई कर्मनीति को अपने जीवन की शैली बनाए। वह अल्लाह को अपना प्रभु समझे और अल्लाह के अतिरिक्त वह किसी को अपना उपास्य भी न बनाए। उसके आज्ञापालन के द्वारा अपने जीवन को ठीक रखे और उसकी उपासना के द्वारा अपने दिल को आबाद करे। समाज में परस्पर सलाम को रिवाज दे। हर व्यक्ति दूसरे की भलाई और उसकी सलामती और कुशलता का इच्छुक हो। भूखों और दुर्दशाग्रस्त लोगों की परेशानियों को दिल से महसूस करे और व्यवहारतः उन तकलीफ़ों को दूर करने का प्रयास करे। भूखों को खाना खिलाए और नंगों को वस्त्र पहनाए। उनके प्रति सहानुभूति दर्शाए, उन्हें पराया कदापि न समझे। उन्हें अपना भाई समझते हुए उनकी सहायता को अपना कर्तव्य समझे। कितनी सीधी-सच्ची और दिलों में उत्तर जानेवाली हैं इस्लाम की ये शिक्षाएँ! काश ये शिक्षाएँ सामान्य रूप से व्यवहार में आ सकें और मनुष्य को स्वार्थपरता, संकुचित दृष्टिकोण, जड़ता और बेदर्दी के रोगों से मुक्त किया जा सके!

(7) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> “अपने रब की बन्दगी और इबादत करो और अपने भाई का (अर्थात् मेरा) सम्मान करो। (हदीस : मुसनद अहमद)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का महत्वपूर्ण अंश है। इसका अर्थ बिलकुल स्पष्ट है। यह हदीस बताती है कि बन्दगी और उपासना अल्लाह के सिवा किसी और की नहीं की जा सकती। यह अल्लाह ही का हक़ है कि बन्दा उसे सजदा करे और अपने भक्ति-भाव को उसपर निछावर करने में कोई कमी न करे। हमारे लिए आवश्यक है कि न केवल यह कि हम उसके आज्ञापालन से विमुख न हों, बल्कि उसके साथ-साथ उसके उपासक भी हों। अल्लाह के बाद हमपर उसके रसूल का हक़ होता है। किन्तु उसका यह हक़

नहीं होता कि हम उसे सजदा करने लग जाएँ और उसे पूजने लगें। रसूल का हक़ यह होता है कि हम उसकी प्रतिष्ठा और बड़ाई को स्वीकार करें। उसकी प्रतिष्ठा और आदर करने से हम ग़ाफ़िल न हों। जब माता-पिता का सम्मान हमारे लिए आवश्यक है तो रसूल का सम्मान और आदर हमारे लिए आवश्यक क्यों न होगा। अल्लाह के रसूल ने जो उपकार मानव-जगत् पर किए हैं, हमारे लिए आवश्यक है कि हम उनको न भूलें और नबी (सल्ल॰) के सम्मान और प्रतिष्ठा में कोई कमी न होने दें।

आमंत्रण क़ुरआन की ओर

(1) हज़रत जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अपने आपको मौक़फ़ (अरफ़ात के मैदान) में लोगों के सामने पेश कर रहे थे। आप (सल्ल॰) कहते थे कि—

> क्या कोई व्यक्ति है जो मुझे अपनी क़ौम के पास ले चले। क्योंकि क़ुरैश ने मुझे मेरे रब की वाणी को लोगों तक पहुँचाने से रोक दिया है।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि इस्लामी आमंत्रण का एक शीर्षक क़ुरआन की ओर आमंत्रण भी है। अर्थात् लोगों को रब की वाणी की ओर बुलाना। क़ुरैश के लोग चूँकि क़ुरआन का विरोध कर रहे थे, नाना प्रकार के शिर्क में लिप्त होने के कारण वे क़ुरआन के सन्देश को सुनने के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए नबी (सल्ल॰) को चिन्ता हुई कि यदि क़ुरैश ईश्वरीय वाणी को सुनना नहीं चाहते तो दूसरे क़बीलों को अल्लाह की किताब क़ुरआन की ओर बुलाया जाए। शायद किसी क़बीले को सौभाग्य प्राप्त हो जाए और ईश्वर की कृपा से वह सत्य को स्वीकर कर ले और सत्य-धर्म के प्रचार का साधन भी बन सकें।

इस हदीस से ज्ञात होता है कि नबी (सल्ल॰) को अपने मिशन से कितना लगाव था। हर समय और हर अवसर पर आप (सल्ल॰) को

इसकी चिन्ता लगी रहती थी कि किस प्रकार ईश्वर का सन्देश अधिक-से-अधिक लोगों तक पहुँच सके और लोगों को सत्य-मार्ग पर चलने का श्रेय प्राप्त हो सके।

आमंत्रण भलाई की ओर

(1) हज़रत अबू-मसऊद अनसारी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"जो व्यक्ति भलाई की राह बताए उसे उतना ही प्रतिफल प्राप्त होगा, जितना उस भलाई को व्यवहारतः अपनानेवाले को प्राप्त होगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का महत्वपूर्ण अंश है। इससे ख़ैर और भलाई का महत्त्वपूर्ण रूप से स्पष्ट होता है। ख़ैर या भलाई की ओर मार्गदर्शन करनेवालों को शुभ-सूचना देते हुए कहा जा रहा है कि भलाई के मार्ग पर चलनेवाले और बड़ाई को अपनानेवाले को जो पुण्य और प्रतिफल प्राप्त होगा वही उस व्यक्ति को भी प्राप्त होगा जिसने उसका भलाई और ख़ैर की ओर मार्गदर्शन किया होगा। क्योंकि उसका भलाई को चुनने का वास्तविक प्रेरक भलाई की ओर मार्गदर्शन करनेवाला ही है।

यहाँ यह बात भी सामने रहे कि ख़ैर और समस्त भलाइयों का सम्बन्ध सत्य से होता है। जो भलाई के काम भी आप करेंगे उससे सत्य को शक्ति और बल मिलेगा। ठीक उसी तरह जो बुरे काम भी किए जाएँगे वे अपने स्वभाव की दृष्टि से सत्य के विरोध के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकते। क़ुरआन में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि–

"हक़ अदा करने और ईश-परायणता के काम में तुम एक-दूसरे को सहयोग करो, और हक़ मारने और ज़्यादती के काम में एक-दूसरे का सहयोग न करो।"

(क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-2)

आमंत्रण आनन्द की ओर

(1) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"कोई व्यक्ति ईमान का रसास्वादन नहीं कर सकता जब तक कि उसका किसी व्यक्ति से प्रेम अल्लाह ही के लिए न हो। और जब तक आग में डाला जाना उसे इससे अधिक पसन्द न हो कि वह कुफ़्र और अधर्म की ओर वापस हो, जबकि अल्लाह ने उसे उससे छुटकारा दिलाया है, और जब तक अल्लाह और उसका रसूल उसे दूसरी समस्त चीज़ों से प्रिय न हों।" (हदसी : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से ज्ञात हुआ कि इस्लाम जिस चीज़ की ओर लोगों को आमंत्रित करता है वह कोई शुष्क और रसविहीन चीज़ कदापि नहीं है। सत्य यह है कि संसार की स्वादिष्ट-से-स्वादिष्ट और मधुर-से-मधुर वस्तु भी ईमान के माधुर्य और मिठास का मुक़ाबला नहीं कर सकती। ईमान की मदोन्मत्ता और उससे प्राप्त आनन्द के भाव को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। इस आनन्दमय भाव का अनुमान इससे किया जा सकता है कि मोमिन आग में जलना पसन्द कर सकता है लेकिन वह अपने ईमान को त्याग नहीं सकता। अल्लाह और उसके रसूल पर उसका ईमान मात्र विश्वास और भरोसे के अर्थ में नहीं होता, बल्कि यह ईमान प्रेम और आसक्ति का रूप लिए हुए होता है। और यह प्रेम इतना प्रगाढ़ एवं गहरा होता है कि जिसकी पात्र दुनिया की कोई चीज़ नहीं हो सकती।

(2) हज़रत अबू-उमामा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से पूछा कि ईमान क्या है? आप (सल्ल॰) ने कहा—

"जब नेकी करके तुम्हें ख़ुशी हो और बुराई करके तुम बुरा महसूस करो तो तुम मोमिन हो।"

उसने पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल! गुनाह क्या है? आप (सल्ल॰) ने कहा–

"जब कोई चीज़ तुम्हारे दिल में खटक पैदा करे तो (समझ लो कि वह गुनाह है) उसे छोड़ दो।"

(हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : अर्थात् नेकी करके तुम्हें पारितोष और प्रसन्नता प्राप्त हो। और तुम्हें अपनी आन्तरिक दुनिया प्रफुल्लित दिखाई दे और यदि तुम कोई ऐसा काम कर जाओ जो बुरा और गुनाह का काम हो तो ग्लानि हो। और उस काम की बुराई को तुम तुरन्त महसूस कर लो तो तुम समझ लो कि ईमान तुम्हारे दिल में मौजूद है। सच यह है कि ईमान के कारण मनुष्य नेकी और बुराई के मध्य अन्तर कर सकता है। अल्लाह का जो भय एक मोमिन के दिल में होता है वह उसके दिल में नहीं हो सकता जो मोमिन नहीं है।

सच्चे मोमिन की पवित्र आत्मा स्वयं ऐसे दर्पण के सदृश है जिसे गुनाह और बुराई का हल्का-सा धब्बा भी गवारा नहीं हो सकता। यही कारण है कि मानवीय दुर्बलता के कारण मोमिन से यदि कोई गुनाह हो जाता है तो तुरन्त उसके दिल में एक खटक पैदा होती है और वह परेशान हो जाता है। एक मोमिन व्यक्ति अपने मन की पवित्रता और स्वभाव की विशुद्धता के कारण किसी अनिष्ट कर्म की अत्यन्त निहित बुराई को भी भाँप लेता है।

आमंत्रण सीधे रास्ते की ओर

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा–

"जिस व्यक्ति ने सीधे रास्ते की ओर आमंत्रित किया उसे उन सभी लोगों के बराबर बदला मिलेगा जिन्होंने उसके आमंत्रण पर सीधा मार्ग अपनाया होगा, बिना इसके कि उनके मिलनेवाले बदले में कोई कमी हो। और जिस व्यक्ति

ने गुमराही की ओर लोगों को बुलाया उसपर उन सभी लोगों के बराबर गुनाह होगा जिन्होंने उसका अनुसरण किया होगा। बिना इसके कि उसके गुनाहों में कोई कमी हो।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस्लाम का आमंत्रण वास्तव में सत्यमार्ग अर्थात् सीधे मार्ग की ओर है। इस आमंत्रण से भिन्न जो आमंत्रण भी होगा वह अनिवार्यतः सत्य-मार्ग से हटा हुआ होगा, जिसके अनुसरण का परिणाम कभी भी शुभ नहीं हो सकता। मनुष्य या तो मार्गदर्शन का अनुसरण करता है या फिर वह अपनी तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं का अनुयायी बनकर रह जाता है। मार्गदर्शन या सत्यमार्ग वही है जिसकी ओर नबी (सल्ल॰) ने अल्लाह के आदेश से मार्गदर्शन किया है।

इस हदीस में सत्य के आमंत्रणदाताओं के लिए इस बात की शुभ सूचना दी जा रही है कि उनके प्रयास से जितने लोग भी सीधा मार्ग अपनाएँगे उन सबको जो बदला मिलेगा उसके बराबर ईश्वर उन्हें बदला प्रदान करेगा और इस कारण उनके आमंत्रण को स्वीकार करनेवाले के बदले में किसी प्रकार की कमी भी नहीं की जाएगी। इसके विपरीत पथभ्रष्टता और गुमराही की ओर बुलानेवालों का परिणाम यह होगा कि उन सबके गुनाहों के बराबर गुनाह उनके हिस्से में आएगा जो उनके आमंत्रण पर गुमराह हुए होंगे। इसलिए कि उनके गुमराही में पड़ने का वास्तविक कारण वही गुमराही की ओर बुलानेवाले ही रहे हैं। गुमराह होनेवालों के गुनाहों में किसी प्रकार की कमी नहीं की जाएगी। क्योंकि उन्होंने ईश्वर की दी हुई बुद्धि और समझ से काम नहीं लिया और सीधे मार्ग के मुक़ाबले में अपने लिए पथभ्रष्टता और गुमराही को पसन्द किया।

आमंत्रण जीवन की ओर

(1) हज़रत अबू-मूसा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"जो व्यक्ति अपने रब को याद करता है और जो याद नहीं करता उसका दृष्टान्त ज़िन्दा और मुर्दा जैसा है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात् अल्लाह को याद करनेवाला ज़िन्दा है और जो व्यक्ति अल्लाह की याद से ग़ाफ़िल है वह मुर्दा के समान है। अल्लाह की याद ही वास्तविक जीवन है जिसकी ओर इस्लाम ने लोगों को आमंत्रित किया है। जो व्यक्ति जानने की तरह अल्लाह को जानता और उससे परिचित है, अल्लाह उसके जीवन की चेतना बन जाता है और उसका स्मरण उसके जीवन की वास्तविक पूँजी हो जाती है। वह अपने रब को कभी महिमागान और उसके एकमात्र पूज्य होने के रूप में याद करता है और कभी वह अल्लाह की असीम दयालुता और कृपा को देखकर उसका कृतज्ञ होता और उसकी याद में मग्न हो जाता है।

इस्लाम के समस्त आदेशों की मूल आत्मा और उसका अभिप्राय ईश स्मरण और उसकी याद के सिवा और कुछ भी नहीं। जिस कर्म का प्रेरक अपने रब का ख़याल और उसकी प्रसन्नता की चाहत न हो वास्तव में उस कर्म का कोई मूल्य नहीं हो सकता। प्रत्येक मामले में ईश्वर की इच्छा का ध्यान रखना उसका वास्तविक स्मरण है। ईश्वर के गुण और उसके चमत्कार स्वयं ऐसे हैं जो इसकी अपेक्षा करते हैं कि मनुष्य ईश्वर को अपने ध्यान का केन्द्र बना लें। ईश्वर को याद करने के लिए जो तरीक़े हैं उन्हीं से इस्लामी जीवन का निर्माण होता है। अतएव क़ुरआन में है कि "मेरी याद के लिए नमाज़ क़ायम करो।" (क़ुरआन, सूरा-20 ताहा, आयत-14) एक स्थान पर आया है कि "और उसने अपने रब का नाम याद किया। अतः नमाज़ पढ़ी।" (क़ुरआन, सूरा-87, आला, आयत--15) ज्ञात हुआ कि नमाज़ वास्तव में रब के नाम को याद करने की अपेक्षा है। रोज़े के विषय में कहा गया है, "जो आदेश तुम्हें दिया गया है उसके अनुसार अल्लाह की बड़ाई को स्वीकार करो और उसे प्रदर्शित करो।" (क़ुरआन, सूरा-2

बक़रा, आयत-105) हज के विषय में कहा गया है कि "(जब अरफ़ात से चलो तो) मशअरे-हराम के पास ठहरकर अल्लाह को याद करो।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-198) और कहा गया है, "अल्लाह की याद में ये गिनती के कुछ दिन गुज़ारो।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-203) और कहा गया है, "अतः कुरबानी के ऊँटों को खड़ा करके उनपर अल्लाह का नाम लो (अर्थात् उनकी कुरबानी करो)। (क़ुरआन, सूरा-22 हज, आयत-36) और कहा गया है कि "फिर जब हज के मनासिक (रीतियाँ) अदा कर चुको तो अल्लाह को याद करो।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-200)

सारांश यह है कि इस्लाम के समस्त आदेशों की मूल आत्मा ईश्वर क़ा स्मरण और उसकी याद है। और वास्तविक जीवन ईश्वर की याद ही को कहते हैं। जब कोई गरोह अल्लाह को जाननेवाला और उसपर ईमान रखनेवाला पैदा हो जाता है और अल्लाह का बोल-बाला करने के संकल्प के साथ दुनिया के सामने आता है तो अल्लाह की विशेष सहायता उसे प्राप्त होती है। वास्वतविक प्रतिष्ठा, सम्मान और जीवन उसके हिस्से में आता है, जिसका इनकार सम्भव नहीं। इस्लाम के प्रारम्भिक काल में दुनिया यह दृश्य अपनी आँखों से देख भी चुकी है। क़ुरआन में है–

> "ऐ लोगो जो ईमान लाए हो अल्लाह और उसके रसूल के आमंत्रण को स्वीकार करो, जब रसूल तुम्हें उस चीज़ का आमंत्रण देता है जो तुम्हें जीवन प्रदान करनेवाली है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-24)

अल्लाह का बोल बाला करने के लिए आमंत्रण

(1) हज़रत अबू-मूसा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति नबी (सल्ल॰) के पास आया और उसने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल, अल्लाह की राह में लड़ना किसे कहते हैं? इसलिए कि हममें से कोई क्रोध के वशीभूत लड़ता है और कोई किसी पक्षपात के कारण लड़ता है।

फिर आप (सल्ल.) ने अपना सिर उसकी तरफ़ उठाया और आप (सल्ल.) ने अपना सिर केवल इसलिए उठाया कि वह व्यक्ति खड़ा हुआ था। फिर आपने कहा—

"जो व्यक्ति इसलिए लड़े कि अल्लाह का बोल-बाला हो तो वह अल्लाह की राह में लड़ता है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : किसी लड़ाई और युद्ध के पीछे केवल क्रोध और गर्व या अपने क़बीले या जाति और देश के अनुचित पक्षपात की भावना काम कर रही होती है। इसी भावना के अन्तर्गत वह युद्ध क्षेत्र में उतरता है। यह हदीस बताती है कि इस्लाम के समस्त प्रयासों का चाहे वह जिस रूप में हों, यहाँ तक कि यदि युद्ध भी किया जा रहा हो तो उसका उद्देश्य केवल यह हो कि अल्लाह का बोल-बाला हो। उसकी माहनता को प्रतिष्ठा प्राप्त हो और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उसके आदेशों और उसकी शिक्षाओं का पालन किया जाए। धरती पर उसी की बड़ाई क़ायम हो और दिलों में उसी की महानता और प्रेम को जगह मिले। मानव जीवन के लिए इससे उच्च लक्ष्य की हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

आमंत्रण मुक्ति की ओर

(1) हज़रत अबू-उबादा-बिन-सामित (रज़ि.) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल.) को यह कहते हुए सुना—

"जिस व्यक्ति ने गवाही दी कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं और यह कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं, अल्लाह ने उसपर दोज़ख़ की आग हराम कर दी है।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : मनुष्य ईश्वर के प्रकोप और दोज़ख़ की आग से छुटकारा पा ले, जीवन की सबसे बड़ी सफलता यही है। मनुष्य की वास्तविक मुक्ति यही है। यूँ तो दुनिया में मुक्ति और नजात (Salvation) की नाना प्रकार की कल्पनाएँ पाई जाती हैं, लेकिन

स्पष्ट रूप में मुक्ति की धारणा यही है कि मनुष्य ईश्वर की पकड़ से बच जाए और ईश्वर उसे नरक की यातना से बचा ले और उसे अपनी जन्नत में दाख़िल कर दे, जहाँ के अपार सुख और आनन्द की आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

क़ुरआन ने एक मोमिन व्यक्ति का कथन उद्धृत किया है जो अत्यन्त प्रभावकारी और शिक्षाप्रद है। मोमिन व्यक्ति ने अपनी क़ौम से कहा था—

> "ऐ मेरी क़ौम के लोगो, यह मेरे साथ क्या मामला है कि मैं तो तुम्हें मुक्ति की ओर बुलाता हूँ और तुम मुझे आग की तरफ़ बुलाते हो। तुम मुझे बुलाते हो कि मैं अल्लाह के साथ कुफ़्र करूँ और उसका साझी ठहराऊँ जिसका मुझे कोई ज्ञान नहीं, जबकि मैं तुम्हें उसकी ओर बुलाता हूँ जो अत्यन्त प्रभुत्वशाली और क्षमाशील है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयत-42)

ज्ञात हुआ कि मुक्ति प्राप्त करने का बस एक साधन यही है कि मनुष्य एक ईश्वर पर ईमान लाए जो प्रभुत्वशाली, प्रभावी और ख़ताओं को क्षमा करनेवाला और अपनी दयालुता के दामन से ढक लेनेवाला है। इसके विपरीत अल्लाह के साथ कुफ़्र की नीति अपनाना और उसके साथ अज्ञान के कारण दूसरों को उसके हक़ और अधिकार में साझीदार बनाना सर्वथा अन्याय और उद्दण्डता है। इसका परिणाम नरकाग्नि के अतिरिक्त और क्या हो सकता है।

आमंत्रण दयालुता की ओर

(1.) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि बहुदेववादियों में से कुछ लोगों ने बड़ी हत्याएँ की थीं और बहुत व्यभिचार किए थे। वे लोग मुहम्मद (सल्ल0) के पास आए और कहा कि आप जो कुछ कहते हैं और जिस चीज़ की ओर बुलाते हैं बहुत ही अच्छा है। यदि आप बता सकें कि जो कुछ हमने किया है उसे क्षमा कर दिया

जाएगा (यदि हम आपके आमंत्रण को स्वीकार कर लें) तो इसपर यह आयत अवतरित हुई–

"और जो लोग अल्लाह के साथ किसी दूसरे पूज्य को नहीं पुकारते और न किसी प्राणी की, जिसे अल्लाह ने हराम किया है, अकारण हत्या करते हैं और न व्यभिचार करते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-25 फ़ुरक़ान, आयत-68)

और यह आयत उतरी–

"कह दो कि ऐ मेरे बन्दो जिन्होंने अपने-आपपर ज़्यादती की है, अल्लाह की दयालुता से निराश न हो।" (क़ुरआन, सूरा-39, ज़ुमर, आयत-53)

"और उन्होंने अल्लाह की क़द्र नहीं पहचानी जैसी कि उसकी क़द्र पहचाननी चाहिए थी।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-91) (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि अल्लाह की दयालुता असीम है। उसकी दयालुता और रहमतों से किसी भी दशा में मायूस नहीं होना चाहिए। इस हदीस में क़ुरआन की जो आयतें उद्धृत हुई हैं वे इस बात का स्पष्ट प्रमाण हैं कि अल्लाह के यहाँ मुशरिक या बहुदेववादी के लिए क्षमा की कोई सम्भावना नहीं है। अन्य गुनाहों को अल्लाह क्षमा कर सकता है और यदि कोई व्यक्ति शिर्क और बहुदेववाद को त्याग कर एकेश्वरवाद की छाया में शरण ले ले तो अल्लाह उसके शिर्क को भी क्षमा कर सकता है। किन्तु यदि उसकी मृत्यु शिर्क की दशा में होती है तो फिर अल्लाह उसे क्षमा नहीं कर सकता।

यह हदीस बताती है कि इस्लाम का आमंत्रण वास्तव में ईश्वर की दयालुता की ओर है। अल्लाह की रहमतों और उसकी दयालुता के पात्र वही लोग होंगे जो उसके आमंत्रण को स्वीकार करेंगे। और अपने दामन को शिर्क और बहुदेववाद की हर प्रकार की गन्दगी से पाक रखेंगे। ज़ुल्म और अत्याचार की नीति से दूर रहकर जीवन

व्यतीत करेंगे और अपने पिछले गुनाहों के लिए अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करते रहेंगे।

आमंत्रण विवेक एवं तत्त्वदर्शिता की ओर

(1) हज़रत मुआविया (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह जिस व्यक्ति के साथ भलाई चाहता है उसको दीन की समझ प्रदान कर देता है। और मैं तो बाँटनेवाला हूँ, प्रदान करनेवाला अल्लाह है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस्लाम की अपेक्षा यह है कि वह जिस चीज़ की ओर आमंत्रण दे रहा है उसे मनुष्य पूरी सूझ-बूझ और विवेक के साथ स्वीकार करे। अन्धविश्वास और अन्धानुकरण को इस्लाम ने अपने यहाँ कोई स्थान नहीं दिया है। यह हदीस बताती है कि दीन की समझ से भलाई के द्वार खुलते हैं। दीन या धर्म स्वयं शुभ और भलाई है। किन्तु इस भलाई से लाभान्वित होने के लिए विवेक और समझ की आवश्यकता होती है। समझ से काम न लेने के कारण हम कितनी ही भलाइयों से वंचित रह जाते हैं। समझ और विवेक के बिना सत्य-मार्ग को पाना और उसपर चलना सम्भव नहीं होता। सत्य-मार्ग प्राप्त करने के लिए समझ, विवेक और गहन चिन्तन अनिवार्य है। क़ुरआन में इसे 'रुश्द' कहा गया है। 'रुश्द' एक ऐसा संग्राहक शब्द है जिसमें सूझ-बूझ, विवेक और मार्गदर्शन से लेकर मंज़िल तक पहुँचने के उपाय आदि सब आ जाते हैं। सत्य-मार्ग पर चलने का सौभाग्य वास्तव में यथार्थ चिन्तन और स्वस्थ बुद्धिमत्ता से काम लेने के फलस्वरूप मनुष्य को प्राप्त होता है।

नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि वास्तविक प्रदान करनेवाला दाता तो ख़ुदा की हस्ती है। मैं तो उस काम पर नियुक्त हूँ कि उसकी ओर से जो भलाइयाँ पहुँचें उनको लोगों के बीच बाट दूँ।

आमंत्रण सलामती के घर की ओर

(1) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"दुनिया उसका घर है जिसका (आख़िरत में) कोई घर नहीं। और उसका माल है जिसके लिए (आख़िरत में) कोई माल नहीं और उसे एकत्र करने में वही लगा रहता है जो बुद्धिहीन है।" (हदीस : मुस्नद अहमद, बैहक़ी)

व्याख्या : यह हदीस संसार की तुच्छता की सूचना देती है और बताती है कि मनुष्य को दुनिया में आख़िरत की चिन्ता की ओर से कभी भी असावधान होकर नहीं रहना चाहिए। दुनिया और दुनिया की सामग्री अपने आपमें कदापि अभीष्ट नहीं, अलबत्ता इनके द्वारा मनुष्य अपने परलोक का निर्माण कर सकता है। संसार ही को वास्तविक अभीष्ट समझना और इसपर सन्तुष्ट हो जाना सबसे बड़ी गुमराही है। क़ुरआन में है—

"तुम लोग तो संसार की सामग्री चाहते हो, जबकि अल्लाह आख़िरत चाहता है।"(क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-67)

अर्थात् ईश्वर के समक्ष तो मौलिक रूप से आख़िरत है और दुनियावाले दुनिया की सामग्री ही को वास्तविक निधि समझते हैं। बुद्धिमान वही है जो सदैव आख़िरत को दृष्टि में रखते हुए प्रयत्नशील हो। यदि मनुष्य के समक्ष आख़िरत की दुनिया हो तो वह कभी भी अन्याय की नीति नहीं अपना सकता। वह न लोगों का हक़ मार सकता है और न अल्लाह के हक़ को अदा करने में कभी असावधानी से काम ले सकता है। असली घर तो आख़िरत ही का घर है, जिसे कभी विस्मृत नहीं करना चाहिए। इसी लिए क़ुरआन में कहा गया है—

"अल्लाह तुम्हें सलामती के घर की ओर बुलाता है और

जिसे चाहता है सीधी राह चलाता है।"

(क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-25)

सीधे मार्ग पर चलने के पश्चात ही मनुष्य इसका पात्र होता है कि सलामती का घर उसके हिस्से में आए जिसमें न कोई शोक होगा और न किसी प्रकार का किसी को कोई भय होगा।

आमंत्रण शुभ-सूचना के रूप में

(1) हज़रत अबू-मूसा (रज़ि॰) कहते हैं कि मुझे और मुआज़ को अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने यमन की ओर भेजा और कहा—

"लोगों को (इस्लाम का) आमंत्रण दो और उन्हें शुभ सूचना दो और नफ़रत न दिलाओ। आसानी पैदा करो, कठिनाई पैदा न करो।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : एक हदीस में (इस्लाम के प्रति) रुचि पैदा करो के शब्द भी आए हैं। यह हदीस इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि लोगों के लिए इस्लाम के आमंत्रण की हैसियत एक शुभ-सूचना और ख़ुशख़बरी की है। अर्थात् लोगों को इस बात की सूचना देना कि अल्लाह की क्या-क्या कृपाएँ और मेहरबानियाँ हैं जो उनके हिस्से में आ सकती हैं। लेकिन इसके लिए पहली शर्त यह है कि वे दुनिया में अल्लाह के आज्ञाकारी बन्दे बनकर जीवन व्यतीत करें। इस्लाम तो मूलतः लोगों को कठिनाइयों से निकालने और उनके जीवन एवं भविष्य को आनन्दमय बनाने के लिए आया है। इस्लाम की शिक्षा नफ़रत, घृणा और द्वेष की नहीं। वह लोगों को उस चीज़ की ओर बुलाता है जिसकी अभिरुचि और कामना उनकी प्रकृति है और जिसके लिए उनकी आत्मा प्यासी है।

आमंत्रण चेतावनी के रूप में

(1) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक दिन नबी (सल्ल॰) सफ़ा पर्वत पर चढ़े और आवाज़ दी कि

'या सबाहाहु'। क़ुरैश के लोग इकट्ठा हो गए। उन्होंने आपसे पूछा कि क्या बात है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "यदि मैं यह सूचना दूँ कि दुश्मन तुमपर प्रातः या संध्या को आक्रमण करनेवाला है, तो क्या तुम मुझे सच्चा समझोगे?" लोगों ने कहा कि क्यों नहीं, निस्सन्देह (हम आपको सच्चा समझेंगे)। नबी (सल्ल॰) ने कहा, "मैं उस यातना के आने से पहले तुम्हें उससे डराता हूँ जो अत्यन्त कठिन होगी।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अरबों में यह रीति रही है कि किसी ख़तरे से लोगों को सूचित करने के लिए 'या सबाहाह' कहकर पुकारा करते थे। बल्कि ख़तरे की गम्भीरता के प्रदर्शन के लिए नग्न भी हो जाते थे। नबी (सल्ल॰) ने लोगों को एक बड़े ख़तरे से, जिससे बढ़कर किसी ख़तरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती, अर्थात् नरक की यातना से अवगत कराने के लिए यह तरीक़ा अपनाया कि सफ़ा पर्वत पर चढ़कर लोगों को आवाज़ दी। इस रीति में जो ख़राबी थी, अर्थात् नग्न होना, उसे आप (सल्ल॰) ने नहीं अपनाया। लोग जब इकट्ठा हो गए और आप (सल्ल॰) से पूछा कि आपने उन्हें किस बड़े ख़तरे की सूचना देने के लिए आवाज़ दी है, तो आपने पहले अपने सच्चे होने की पुष्टि चाही। जब लोगों ने इसे स्वीकार किया कि वे आप (सल्ल॰) को सच्चा और सत्यवान समझते हैं। आप जो भी सूचना देंगे वे उसे झुठला नहीं सकते। तब आप (सल्ल॰) ने उन्हें बताया कि आप (सल्ल॰) उन्हें जिस ख़तरे और आशंका से सूचित करना चाहते हैं वह अल्लाह की यातना है। और आप (सल्ल॰) उस यातना के आने से पहले उससे उन्हें ख़बरदार करना चाहते हैं, ताकि वे उस यातना से बचने का उपाय कर सकें। और उस यातना से बचने का उपाय इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि वे आप (सल्ल॰) के रसूल होने पर सच्चे दिल से ईमान लाएँ। बहुदेववाद और मूर्ति पूजा और

अज्ञानकाल की समस्त बहुदेववादी रीतियों को त्यागकर अल्लाह की विशुद्ध बन्दगी और उसके आज्ञापालन को अंगीकार कर लें।

आमंत्रणदाता की प्रार्थना

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि हज़रत तुफ़ैल-बिन-अम्र (रज़ि॰) अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की सेवा में उपस्थित हुए और कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल, दौस (क़बीले) ने अवज्ञा की है और (सत्य को स्वीकार करने से) इनकार किया है। आप उन लोगों के लिए बद्दुआ करें। लोगों ने समझा कि आप (सल्ल॰) उनके हक़ में बद्दुआ करेंगे। लेकिन आप (सल्ल0) ने कहा--

"ऐ अल्लाह, दौस को राह दिखा और उन्हें मेरे पास ला दे।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से पूरी तरह यह अनुमान किया जा सकता है कि सत्य के आमंत्रणदाता की भावनाएँ क्या होती हैं। वह कितना सहनशील होता है। उसकी कामना होती है कि क़ौम सीधे रास्ते पर आ जाए। वह क़ौम से बहुत ही जल्द निराश नहीं होता। नबी (सल्ल॰) से तुफ़ैल-बिन-अम्र दौसी (रज़ि॰) और उनके साथियों ने यह निवेदन किया था कि दौस क़बीले के लोगों ने अवज्ञा की नीति अपना ली है और वे आप (सल्ल॰) के आदेशों के अनुपालन से इनकार कर रहे हैं। आप (सल्ल॰) उनके लिए बद्दुआ करें। इसके प्रत्युत्तर में बद्दुआ के बदले आप (सल्ल॰) ने अल्लाह से यह प्रार्थना की कि क़बीला दौस सत्य के मार्ग को अपना ले। और यह इच्छा प्रकट की कि वे आकर मिलें और सत्य के प्रचार एवं प्रसार के प्रयासों में अल्लाह के रसूल का साथ दें।

बुख़ारी और मुस्लिम की हदीस में है कि तायफ़वालों ने नबी (सल्ल॰) को बहुत तकलीफ़ पहुँचाई। इसके बावजूद नबी (सल्ल॰) ने यही प्रार्थना की कि "ऐ अल्लाह, मेरी क़ौम के लोगों को क्षमा कर दे क्योंकि वे जानते नहीं।"

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) जब जिहाद, हज या उमरा से लौटते तो प्रत्येक उच्च भूमि पर तीन बार तकबीर करते अर्थात् अल्लाह की बड़ाई करते फिर कहते–

"अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं, वह अकेला है, उसका कोई साझीदार नहीं। उसी का राज्य है और उसी के लिए समस्त प्रशंसाएँ हैं। और उसे प्रत्येक चीज़ पर पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त है। हम लौटनेवाले, तौबा करनेवाले, इबादत करनेवाले, अपने रब की प्रशंसा करनेवाले हैं। अल्लाह ने अपना वादा सत्य कर दिखाया, उसने अपने बन्दे की सहायता की और सेनाओं को अकेले परास्त किया।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस प्रसंग में क़ुरआन की यह दुआ भी सामने रहे : "कहो, ऐ अल्लाह, राज्य के अधीश! तू जिसे चाहे राज्य दे और जिससे चाहे राज्य छीन ले, जिसे चाहे प्रभुत्व प्रदान करे और जिसको चाहे अपमानित कर दे। तेरे ही हाथ में भलाई है। निस्सन्देह तुझे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है।" (सूरा-3, आले-इमरान, आयत-26)

आमंत्रण के शिष्टाचार

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"आसानी पैदा करो, कठिनाई में न डालो, सांत्वना दो, नफ़रत न दिलाओ।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्यख्या : इस हदीस में बताया गया है कि ज़िम्मेदारों के लिए उन कामों में किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है जो उन्हें सौंपे गए हैं। चाहे उनका सम्बन्ध प्रजा के अधिकारों से हो या उनका सम्बन्ध किसी भी धार्मिक कार्य से हो। धर्म के प्रचार-प्रसार के प्रयासों में किन बातों का ध्यान रखना ज़रूरी है इस सिलसिले में यह हदीस विशेष रूप से हमारी मार्गदर्शक है। धर्म तो आसानी पैदा करने के

लिए अवतरित हुआ है। धर्म को मुश्किल बनाकर पेश करना वास्तव में दीन से लोगों को बेज़ार और विमुख करना है। सत्य सन्देश को जो चीज़ आकर्षक बनाती है वह उसकी फ़ितरी निर्मलता है। धर्म की ओर बुलाना है तो उसे सहज, सरल, स्वाभाविक और आनन्द बनाकर प्रस्तुत करना चाहिए। जैसा कि वास्तव में वह है भी। जो लोग दीन को मुश्किल बनाकर पेश करते हैं वे वास्तव में दीन और धर्म की राह में रुकावटें खड़ी करते हैं और उन्हें इसका एहसास तक नहीं होता।

(2) हज़रत इब्ने-अबी-बुर्दा (रज़ि॰) कहते हैं कि नबी (सल्ल॰) ने उनके दादा अबू-मूसा और मुआज़ को यमन भेजा और कहा–

"आसानी पैदा करना, कठिनाई में न डालना, शुभ सूचना देना, नफ़रत न दिलाना और दोनों में सहमति व एकता रहे, विभेद न करना।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : ज़िम्मेदार और अधिकारी व्यक्ति, चाहे उनका सम्बन्ध राज-काज से हो या किसी भी धार्मिक कार्य पर वे नियुक्त हों, उनमें एकता का पाया जाना आवश्यक है। धर्म के आमंत्रण के प्रसंग में भी आवश्यक है कि आमंत्रण, आमंत्रण के उद्देश्य और सिद्धान्त के विषय में आमंत्रणदाताओं के मध्य एकता और एकात्मता पाई जाती हो। जो चीज़ें उनको परस्पर जोड़ सकती हैं उनकी उपेक्षा करना और साधारण से मतभेद को अपनी कला से पहाड़ बनाकर खड़ा करना धर्म के आमंत्रण को क्षति पहुँचाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। जो लोग प्रेम की जगह पर घृणा और एकता के स्थान पर मतभेद से दिलचस्पी रखते हैं वे वास्तव में धर्म की कोई वास्तविक सेवा का काम नहीं कर रहे हैं।

(3) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हज़रत मुआज़ (रज़ि॰) को यमन की तरफ़ भेजा तो कहा–

"तुम किताबवाली क़ौम की तरफ़ जा रहे हो। तुम उन्हें इस

बात की गवाही देने के लिए आमन्त्रित करना कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं, और यह कि मैं अल्लाह का रसूल हूँ। यदि वे तुम्हारी यह बात मान लें तो फिर उनको बताना कि प्रत्येक दिन-रात में अल्लाह ने उनके लिए 5 नमाज़ें अनिवार्य की हैं। यदि वे तुम्हारी यह बात भी मान लें, फिर उनको बताना कि अल्लाह ने उनके माल में उनपर ज़कात अनिवार्य की है, जो उनके मालदारों से ली जाएगी और उनके मोहताजों की ओर लौटा दी जाएगी। यदि वे तुम्हारी यह बात मान लेते हैं तो तुम उनके अच्छे मालों को न लेना, और पीड़ित की बद्दुआ से बचना। क्योंकि उसकी पुकार और अल्लाह के मध्य कोई परदा नहीं होता।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) ने हज़रत मुआज़ (रज़ि॰) से कहा कि जहाँ तुम जा रहे हो वहाँ तुम्हें किताबवालों से मामला पेश आएगा। अर्थात् तुम्हें पहले से यह जान लेना चाहिए कि वहाँ तुम्हारे सम्बोधित कौन होंगे? इससे ज्ञात हुआ कि जिस क़ौम में ईश्वरीय सन्देश पहुँचाना हो उस क़ौम के धर्म, उसकी मानसिकता, उसकी सभ्यता और उसके इतिहास से परिचित होना आवश्यक है, ताकि अपने सन्देश को स्वीकार्य बनाने के लिए यथासम्भव सम्बोधित क़ौम की धार्मिक मानसिकता और उसकी परम्पराओं का ध्यान रखा जा सके। नबी (सल्ल॰) ने हज़रत मुआज़ (रज़ि॰) को बताया कि उन्हें जिस क़ौम को सत्य की ओर आमन्त्रित करना है वे किताबवाले हैं, जिसके कारण वे ईशप्रकाशना और रिसालत की धारणा से अपरिचित नहीं हैं। उन्हें अपने पैग़म्बरों के द्वारा अल्लाह की उपासना और अल्लाह के बन्दों के हक़ और अधिकार के विषय में शिक्षाएँ पहले भी मिल चुकी हैं। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के प्रतिनिधि हज़रत मुआज़ (रज़ि॰) को क़ौम को जिस धर्म की ओर बुलाना था वह मौलिक रूप

से उस धर्म से भिन्न कदापि न था जिस धर्म का आमंत्रण अल्लाह के नबियों ने अपनी-अपनी क़ौमों को दिया था।

धर्म के प्रचार-प्रसार के विषय में यहाँ एक मौलिक बात बयान हुई है। वह यह कि सत्य के आमंत्रण के कार्य में क्रम का ध्यान रखना आवश्यक है। यह बात आमंत्रण की मूल आत्मा के विरुद्ध होगी कि हम सम्बोधित क़ौम के सामने धर्म की विस्तृत अपेक्षाएँ प्रस्तुत करने लग जाएँ जबकि अभी सम्बोधित व्यक्ति को तो न एकेश्वरवाद में विश्वास प्राप्त है और न अभी वह वक़्त के रसूल की रिसालत पर विश्वास प्राप्त कर सका है।

यह हदीस बताती है कि जिस धर्म के साथ नबी (सल्ल॰) को दुनिया में भेजा गया है और जिस धर्म का प्रचार-प्रसार संसार में अभीष्ट है वह सीमित अर्थों में कोई धर्म नहीं है बल्कि उसकी परिधि में सम्पूर्ण जीवन आ जाता है। उसका मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन और उसकी व्यावहारिक नीति से गहरा सम्पर्क है। वह ईश्वर ही के साथ नहीं बल्कि सम्पूर्ण मानव-जाति के साथ भी हमारे सम्बन्धों को ठीक रखता है। वह बताता है कि अल्लाह के अधिकार के साथ-साथ उसके बन्दों के हक़ और अधिकार का कितना अधिक ध्यान रखना चाहिए। फिर वह धर्म सम्पूर्ण मानवता का धर्म है। वह समस्त मनुष्यों के कल्याण और भलाई के लिए अवतरित हुआ है। किसी विशिष्ट क़ौम या किसी विशिष्ट भू-भाग के लिए उसका अवतरण नहीं हुआ है।

आमंत्रण और मनोविज्ञान

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"यदि दस यहूदी मेरे अनुयायी हो जाएँ तो धरती पर कोई भी यहूदी मुसलमान हुए बिना न रह सके।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : बुख़ारी में भी यह हदीस आई है। बुख़ारी के शब्द ये हैं, "यदि दस यहूदी भी मुझपर ईमान ले आते तो सभी यहूदी मुझपर ईमान ले आते।" अर्थात् यहूदी क़ौम के यदि दस पथ-प्रदर्शक विद्वान मुसलमान हो जाएँ तो फिर समस्त यहूदी मुसलमान हो जाएँगे। इस हदीस में एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्य का उल्लेख किया गया है। मनुष्य की व्यक्तिगत मानसिकता ही नहीं उसकी क़ौमी मानसिकता भी होती है। किसी क़ौम की बहुसंख्या क़ौमी मानिसकता ही का अनुसरण करती है। क़ौम को किसी विशेष मार्ग पर क़ायम रखने के उत्तरदायी वास्तव में क़ौम के लीडर ही होते हैं, जिनकी संख्या अधिक नहीं होती, किन्तु पूरी क़ौम पर पकड़ उन्हीं की होती है। जनसामान्य उन्हीं के मस्तिष्क से सोचते और उन्हीं के रास्ते पर चलते हैं। अतः सत्य के प्रचार-प्रसार में क़ौम और जन-समूह की मानसिकता को ध्यान में रखना चाहिए। यदि हम एक ऐसे व्यक्ति को सत्य का अनुयायी बनाने में सफल हो जाते हैं जिसके पीछे चलनेवालों की बड़ी संख्या होती है तो हमने सत्य की ओर आमन्त्रित करने का कार्य वास्तव में एक व्यक्ति पर नहीं बल्कि एक बड़े गरोह पर किया।

आमंत्रणदाता की भावनाएँ और उसका चरित्र

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "मेरी मिसाल उस व्यक्ति की है जिसने आग जलाई। जब आग ने अपने वातावरण को प्रकाशित कर दिया तो पतिंगे और वे कीड़े जो आग में जा पड़ते हैं, उस आग में टूट पड़ने को आतुर होते हैं और आग जलानेवाला उनको रोकने लगता है। किन्तु वे उसपर प्रभावी रहते हैं और (उसके रोकने के बावजूद) आग में जा पड़ते हैं। बस (मेरा यही हाल समझो कि) तुम्हें आग से बचाने के लिए मैं तुम्हारी कमरें पकड़े हुए हूँ, किन्तु तुम हो कि आग में गिरे पड़ते हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मुस्लिम की हदीस में ये शब्द भी मिलते हैं, "मैं तुम्हें आग से बचाने के लिए तुम्हारी कमरें पकड़े हुए हूँ। कहे जा रहा हूँ, मेरी ओर आओ, आग से बचो। मेरी ओर आओ, आग से बचो। किन्तु तुम हो कि मुझपर हावी हुए जाते हो और आग में गिरे पड़ते हो।"

इस हदीस से उस विकलता का पता चलता है जो नबी (सल्ल॰) के दिल में क़ौम को ईश्वरीय यातना से बचाने के लिए थी। आप (सल्ल॰) और आप (सल्ल॰) के साथियों को जो तकलीफ़ें पहुँचाई जा रही थीं, वास्तविक दुख आप (सल्ल॰) को उन तकलीफ़ों का न था बल्कि आप (सल्ल॰) को जो चीज़ बेचैन और विकल किए हुए थी वह क़ौम की पथभ्रष्टता थी, जिसका परिणाम विनाश और नरक की यातना के सिवा और कुछ नहीं हो सकता था। आप (सल्ल॰) की कोशिश यह थी कि क़ौम गुमराही से निकल आए और पथभ्रष्टता को त्यागकर सत्य-मार्ग पर चलने लगे ताकि ईश्वरीय प्रकोप से वह बच सके। लेकिन ऐसा महसूस होता था कि क़ौम ईश्वरीय यातना में ग्रस्त होकर ही रहेगी। आप (सल्ल॰) की विकलता और मनोदशा का पूर्ण चित्रण इस हदीस में प्रस्तुत किया गया है।

(2) हज़रत अबू-मूसा अशअरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "मेरी और जिस चीज़ के साथ अल्लाह ने मुझे भेजा है उसकी मिसाल उस व्यक्ति जैसी है जो एक क़ौम के पास आया और कहा कि ऐ मेरी क़ौम के लोगो, मैंने (दुश्मनों की) एक सेना अपनी आँखों से देखी है। और मैं सत्यताओं को स्पष्ट कर देनेवाला हूँ। तुम लोग मुक्ति का मार्ग तलाश कर लो, मुक्ति का मार्ग तलाश कर लो। अतः उसकी क़ौम के कुछ लोगों ने उसकी बात मान ली और अपने घरों से रातों-रात धीरे से निकल गए और छुटकारा पा लिया। क़ौम

के कुछ लोगों ने उसकी बात नहीं मानी और वे अपने घरों में ही पड़े रहे। फिर प्रातः होते ही उस सेना ने उनपर धावा बोल दिया और उन्हें विनष्ट करके रख दिया और जड़ से उन्हें उखाड़ फेंका। अतः यही मिसाल है उस व्यक्ति की जिसने मेरी बात मानकर जो कुछ मैं लेकर आया हूँ उसका अनुपालन किया। और यही मिसाल है उसकी जिसने मेरी अवज्ञा की और जो सत्य मैं लेकर आया हूँ उसको झुठला दिया।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अरब में यह रीति रही है कि कोई व्यक्ति यदि अपने क़बीले या क़ौम पर आक्रमण करने के लिए शत्रु को देखता तो नग्न होकर किसी उच्च स्थान पर खड़ा हो जाता और पुकारकर क़ौम को दुश्मन की ख़बर देता। उसका इस ढंग से पुकारना इस बात की पहचान होती कि वह व्यक्ति बिलकुल सच्चा है और जो सूचना वह दे रहा है उसके सत्य होने में किसी सन्देह की कोई सम्भावना नहीं है।

पैग़म्बर के आमंत्रण की ओर ध्यान न देने का जो परिणाम होनेवाला है उसका एहसास यदि लोगों को हो जाए तो वे कभी भी ग़ाफ़िल और असावधान नहीं रह सकते। पैग़म्बर की पूरी कोशिश यह होती है कि लोग जागृत हों और अपनी ज़िम्मेदारी को महसूस करें, ताकि विनाश और ईश्वरीय यातना से वे सुरक्षित रहें। यह नबी का वह वास्तविक कार्य है जिसे अपने जीवन में पूरा करना नबी की मौलिक ज़िम्मेदारी होती है। इससे उसके चरित्र की विशिष्टता और उसकी उच्चता का अनुमान किया जा सकता है। साधारणतः लोग केवल अपनी भलाई के लिए सोचते हैं। जबकि नबी समस्त मानवों की चिन्ता करता है। इस्लाम के प्रत्येक आमंत्रणदाता को भी अपने यहाँ यही विशिष्टता पैदा करनी चाहिए।

(3) हज़रत क़बीसा-बिन-मुख़ारिक़ (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ अब्दे-मनाफ़ की सन्तान, मैं तुम्हें सचेत करनेवाला हूँ, मेरी और तुम्हारी मिसाल उस व्यक्ति जैसी है जिसने दुश्मन को देख लिया फिर वह अपने लोगों (अपनी क़ौम) को बचाने के लिए एक पहाड़ी पर चढ़ा (ताकि क़ौम को सतर्क कर दे), लेकिन फिर इस डर से कि कहीं दुश्मन उससे पहले न पहुँच जाए वह वहीं से पुकारकर कहने लगा, 'या सबाहाह' (दुश्मन की ग़ारतगरी से बचो)।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : रिवायत में आता है कि जब क़ुरआन में यह आदेश आया कि "और अपने निकटतम नातेदारों को सचेत करो।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयत-214) तो नबी (सल्ल०) ने अपने ख़ानदानवालों के सामने अपनी पोज़ीशन स्पष्ट करते हुए उन्हें सत्य स्वीकार करने का आमंत्रण दिया। इस हदीस में नबी (सल्ल०) ने जो मिसाल दी है उसमें अत्यन्त अछूते ढंग से आमंत्रणदाता की भावनाएँ चित्रित होती हैं। इसमें क़ौम की नजात और छुटकारे के लिए आमंत्रणदाता की विकलता और विह्वलता को हम अपनी खुली आँखों से देख सकते हैं।

नबी (सल्ल०) के सत्य-प्रचार के कुछ कार्य

(1) हज़रत आइशा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"ऐ यहूद के गरोह, अफ़सोस तुमपर! अल्लाह से डरो, उस अल्लाह की क़सम, जिसके सिवा कोई पूज्य नहीं, तुम जानते हो कि मैं अल्लाह का सच्चा रसूल हूँ। तुम्हारे पास सत्य लेकर आया हूँ। अतः इस्लाम को स्वीकार करो।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यहूदी तौरात के द्वारा आनेवाले नबी के लक्षणों से भलि-भाँति परिचित थे। उनकी किताब तौरात में नबी (सल्ल०) के

विषय में स्पष्ट रूप से भविष्यवाणियाँ की गई थीं और बताया गया था कि आनेवाले नबी के विशिष्ट गुण क्या होंगे। किन्तु जब नबी (सल्ल०) को नुबूवत मिली और मदीना में आए तो ईर्ष्या के कारण यहूदी आप (सल्ल०) पर ईमान न ला सके। उन्होंने आप (सल्ल०) का इनकार उसी तरह से किया जिस तरह पहले उन्होंने हज़रत ईसा (अलैहि०) के विषय में किया था।

नबी (सल्ल०) ने मदीना पहुँचकर यहूदियों को सम्बोधित किया था। जबकि यहूदियों के एक बड़े विद्वान अब्दुल्लाह-बिन-सलाम इस्लाम स्वीकार कर चुके थे।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"ऐ यहूदियों के गरोह, इस्लाम को स्वीकार कर लो, सलामत रहोगे।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यहूदियों की शरारतों और निरन्तर उनके षड्यन्त्रों के कारण जब नबी (सल्ल०) ने यह निश्चय किया कि उन्हें देश निकाला दे दिया जाए तो उस समय आप (सल्ल०) ने उनसे कहा कि यदि तुम लोक और परलोक में भलाई चाहते हो तो इस्लाम स्वीकार कर लो, अन्यथा अपमानित होकर रहोगे।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) कहते हैं कि जब आयत, "अपने निकटवर्ती नातेदारों को सचेत करो" अवतरित हुई तो नबी (सल्ल०) ने क़ुरैश को बुलाया और जब वे जमा हो गए तो आप (सल्ल०) ने आम और ख़ास सभी क़बीलों को पुकार कर सबसे कहा—

"ऐ कअ्ब-बिन-लुई की औलाद दोज़ख़ की आग से अपने आपको बचाओ! ऐ बनी-मुर्रा-बिन-कअब की औलाद अपने आपको दोज़ख़ की आग से बचाओ! ऐ अब्द-शम्स की औलाद, अपने आपको दोज़ख़ की आग से बचाओ! ऐ अब्दुल-मुत्तलिब की औलाद, अपने आपको दोज़ख़ की आग से बचाओ! ऐ फ़ातिमा अपने आपको दोज़ख़ की आग से

बचाओ क्योंकि मैं अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारी कुछ भी सहायता नहीं कर सकता।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : आमंत्रणदाता की ज़िम्मेदारी है कि सत्य के सन्देश के सामान्यरूप से प्रचार करने के प्रयास में अपने निकटवर्ती नातेदारों को कदापि विस्मृत न करे। बल्कि उन्हें सबसे पहले ईश्वर का सन्देश पहुँचाए। नबी (सल्ल.) ने अपनी ज़िम्मेदारी को पूरी करने में किसी आलस्य से काम नहीं लिया। आप (सल्ल.) ने एक-एक परिवार और क़बीले का नाम लेकर जिस दर्द और संवेदना के साथ उसे आवाज़ दी उससे आप (सल्ल.) के दिल की विह्वलता का पता चलता है।

इस हदीस से विशेष बात यह मालूम होती है कि इस्लाम के प्रचार का सबसे बड़ा प्रेरक दोज़ख़ की आग से छुटकारा पाना है। दोज़ख़ से छुटकारा पाना इतनी बड़ी सफलता है कि इसी को आपने अप (सल्ल.) ने सन्देश का विषय एवं प्रसंग बनाकर क़ुरैश के लोगों को सम्बोधित किया और कहा कि हरेक कुटुम्ब और क़बीले को अपने को दोज़ख़ से बचाने की चिन्ता करनी चाहिए।

(4) हज़रत अदी-बिन-हातिम (रज़ि.) कहते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के पास आया। उस समय आप (सल्ल.) मस्जिद में बैठे हुए थे। लोगों ने कहा कि ये अदी-बिन-हातिम हैं। मैं अचानक आ गया था। न मैंने अमान की कोई याचना की थी और न कोई और लेखपत्र मेरे पास था। जब मैं आप (सल्ल.) की सेवा में पेश किया गया तो आप (सल्ल.) ने मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया। मुझ तक यह बात बहुत पहले पहुँच चुकी थी कि आप (सल्ल.) कहा करते थे कि मुझे आशा है कि अल्लाह उसका हाथ मेरे हाथ में देगा। (अदी दानशीलता में प्रसिद्ध व्यक्ति हातिम के पुत्र थे।) नबी (सल्ल.) उनके (सम्मान के) लिए खड़े हो गए। इसी बीच एक स्त्री एक बच्चा लिए हुए आ गई और उसने कहा कि मुझे आपसे एक ज़रूरत है। आप (सल्ल.) उसके साथ खड़े हो गए और उसकी ज़रूरत पूरी करके फिर मेरा हाथ अपने हाथ में ले लिया और अपने घर ले आए। बाँदी

ने तुरन्त एक गद्दा बिछा दिया। आप (सल्ल.) उसपर बैठ गए। मैं भी आप (सल्ल.) के सामने बैठ गया। फिर आप (सल्ल.) ने अल्लाह की स्तुति और प्रशंसा की। फिर मुझसे कहा—

"ऐ अदी, तुम्हें इस्लाम से इनकार क्यों है कि 'ला इला-ह इल्लल्लाह (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं) नहीं कहते? क्या अल्लाह के सिवा किसी और पूज्य का तुम्हें ज्ञान है?"

मैंने कहा कि नहीं। फिर आप (सल्ल.) ने थोड़ी देर कुछ और बातें कीं। उसके पश्चात कहा—

"क्या तुम अल्लाहु-अकबर (अल्लाह ही बड़ा है) कहने से भागते हो? क्या अल्लाह से भी बड़ी कोई चीज़ तुम्हारे ज्ञान में है?"

मैंने कहा कि नहीं। फिर आप (सल्ल.) ने कहा कि—

"यहूदी तो ईश्वर के प्रकोप में ग्रस्त हैं और ईसाई परले दर्जे के पथभ्रष्ट हो चुके हैं।"

मैंने कहा कि मैं तो हनीफ़ मुस्लिम (एकनिष्ठ) होता हूँ। इस पर मैंने देखा कि ख़ुशी से आप (सल्ल.) का चेहरा खिल गया। फिर मेरे बारे में आदेश हुआ। मैं (आप (सल्ल.) के आदेशानुसार) एक अनसारी के यहाँ मेहमान बनाकर ठहरा दिया गया और मैं सुबह-शाम आप (सल्ल.) की सेवा में उपस्थित होता रहा। (हदीस : तिर्मिज़ी)

व्याख्या : अदी दानशीलता और फ़ैयाज़ी में प्रसिद्ध व्यक्ति हातिम के बेटे थे। नबी (सल्ल.) की हार्दिक इच्छा थी कि अदी इस्लाम स्वीकार कर लें। ईश्वर के सन्देश को पहुँचानेवालों का ध्यान महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्त्वों की ओर विशेष रूप से होता है। एक तो ऐसे व्यक्तियों से सराहनीय सेवा की आशा की जा सकती है। दूसरे ऐसे व्यक्ति वास्तव में अकेले नहीं होते बल्कि उनके साथ बहुत-से लोग होते हैं। ऐसे व्यक्तियों के ईमान लाने से उनके साथ के लोगों के ईमान लाने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

सन्देशवाहक अपने सन्देश को बुद्धिसंगत और स्वीकार्य बनाने के लिए तर्क की क्या शैली अपनाए इसका सम्बन्ध सन्देशवाहक के विवेक और उस तत्त्वदर्शिता से है जो अल्लाह की ओर से उसे प्राप्त हो। नबी (सल्ल॰) कितने प्रभावकारी ढंग से अदी-बिन-हातिम को सत्य का निमंत्रण देते हैं। इस्लाम का आमंत्रण इसके अतिरिक्त और क्या है कि मनुष्य एक ईश्वर की प्रभुता और उसके ईश्वरत्व को स्वीकार करके उसकी बन्दगी को अपने लिए श्रेयस्कर समझे। यदि अल्लाह के सिवा दूसरा पूज्य और प्रभु नहीं है तो 'ला इला-ह इल्लल्लाह' कहने में आख़िर क्या झिझक हो सकती है?

फिर नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि ऐ अदी, तुम अल्लाहु-अकबर (अल्लाह ही बड़ा है) कहने से क्यों भागते हो? तुम्हें अल्लाहु-अकबर कहने में क्या आपत्ति हो सकती है? क्या अल्लाह से बड़ा भी कोई हो सकता है? यदि नहीं तो अल्लाहु-अकबर कहने में विलम्ब का कारण क्या है? 'ला इला-ह इल्लल्लाह को स्वीकार करना' और अल्लाहु अकबर कहना ही इस्लाम और उसका आमंत्रण है। रहे यहूदियों और ईसाइयों के प्रसिद्ध सम्प्रदाय तो भले ही वे कितने ही उच्च स्वर में अपने सत्य-मार्ग पर होने का दावा करते हों, वे ऐसे नहीं हैं कि उनका अनुसरण किया जाए। यहूदी ईश्वरीय प्रकोप में ग्रस्त हो चुके हैं और ईसाई पथभ्रष्टता मे बहुत दूर निकल गए हैं। न यहूदियत दुनिया को नजात और मुक्ति का मार्ग दिखाने के योग्य रह गई है और न ईसाइयत से हम अपने लिए मार्गदर्शन की कोई आशा कर सकते हैं।

अदी आप (सल्ल॰) के आमंत्रण को स्वीकार करते हैं और अपने ईमान को दर्शाते हैं। नबी (सल्ल॰) का चेहरा ख़ुशी से खिल जाता है। आमंत्रणदाता की यह सबसे बड़ी सफलता है कि उसकी कोशिश से कोई शिर्क और कुफ़्र (बहुदेववाद और अधर्म) की भूल-भुलइयों से निकलकर एकनिष्ठ मुस्लिम हो जाए।

(5) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने नज्द की ओर सवारों की एक टुकड़ी भेजी। वह बनी-हनीफ़ा के एक व्यक्ति को गिरफ़्तार करके ले आई, जिसे सुमामा- बिन-अस्साल कहते थे। उसे मस्जिद के खम्बों में से एक खम्बे से बाँध दिया। नबी (सल्ल॰) उसके पास आए और कहा, "सुमामा, तेरा क्या विचार है?" उसने कहा ठीक है ऐ मुहम्मद, अगर मुझे क़त्ल करोगे तो ऐसे व्यक्ति को क़त्ल करोगे जो अपनी क़ौम का सरदार है (उसका ख़ून व्यर्थ न जाएगा), और अगर एहसान करोगे तो उसपर करोगे जो कृतज्ञ है (एहसान को भूल नहीं सकता)। यदि तुम्हें माल चाहिए तो कहो कि तुम्हें क्या चाहिए? आप (सल्ल॰) उसे इसी हालत में छोड़कर चले गए। फिर दूसरे दिन आए और कहा, "सुमामा तेरा क्या विचार है?" उसने कहा कि मेरा वही विचार है जो पहले था। यदि एहसान करोगे तो उस व्यक्ति पर करोगे जो कृतज्ञ होगा। आप (सल्ल॰) फिर उसे उसी हाल में छोड़कर चले गए। यहाँ तक कि जब कल के पश्चात फिर आए तो कहा, "ऐ सुमामा, तेरा क्या विचार है?" उसने कहा कि मेरा विचार वही है जो पहले बयान कर चुका हूँ। आप (सल्ल॰) ने कहा, "सुमामा को खोल दो।" क़ैद से आज़ाद होकर वह मस्जिद से क़रीब खजूर के एक बाग़ में गया। स्नान किया फिर मस्जिद में प्रवेश किया और कहा, अशहदुअल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अन-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह (मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं और यह कि मुहम्मद! अल्लाह के रसूल हैं।) ऐ मुहम्मद पहले धरातल पर आपके चेहरे से अधिक घृणित चेहरा कोई और नहीं था, किन्तु आज आपका चेहरा समस्त चेहरों में सबसे अधिक प्रिय हो गया है। अल्लाह की क़सम, पहले आपके धर्म से बढ़कर घृणित और निन्दनीय मेरी दृष्टि में कोई दूसरा धर्म न था और आज सबसे प्रिय धर्म मेरी दृष्टि में आप ही का धर्म है। अल्लाह की क़सम पहले तमाम नगरों में सबसे घृणित नगर मेरी दृष्टि मे आपका नगर था, किन्तु आज मेरी दृष्टि में सबसे प्रिय नगर आप ही का

नगर है। आपकी सेना की टुकड़ी ने मुझे गिरफ़्तार कर लिया था, उस समय मैं उमरा के इरादे से जा रहा था। बताएँ अब मुझे क्या करना चाहिए? अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उसे शुभ सूचना दी और कहा कि उमरा अदा कर लो। जब सुमामा मक्का पहुँचे तो किसी कहनेवाले ने कहा कि अरे क्या अपने दीन से फिर गया? सुमामा ने कहा कि नहीं (मैं बेदीन नहीं हुआ हूँ)। मैं इस्लाम स्वीकार करके अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के साथ हो गया हूँ। अल्लाह की क़सम जब तक नबी (सल्ल॰) की इजाज़त न होगी तुम्हारे पास यमामा से गेहूँ का एक दाना भी न आ सकेगा। (हदीस : मुस्लिम व बुख़ारी)

व्याख्या : सुमामा का क़बीला इस्लाम-दुश्मनी में तमाम क़बीलों से बढ़ा हुआ था। इस क़बीले ने कितने ही मुसलमानों को क़त्ल किया था। जब इस क़बीले के सरदार सुमामा को पकड़कर लाया गया और उसे बाँध दिया गया तो उसने पहले दिन नबी (सल्ल॰) से कहा कि यदि मुझे क़त्ल करते हो तो यह एक सरदार का क़त्ल होगा। किसी साधारण व्यक्ति का क़त्ल न होगा। या ऐसे व्यक्ति को क़त्ल करोगे जो ख़ून करने की वजह से क़त्ल का मुस्तहिक़ है। लेकिन दूसरे दिन उसने अपनी बात का आरम्भ इस वाक्य से किया यदि एहसान करोगे तो एक कृतज्ञ व्यक्ति पर एहसान करोगे, किसी कृतघ्न पर एहसान नहीं करोगे। यह आरम्भ अत्यन्त अर्थपूर्ण था। पहले दिन सुमामा का ख़याल था कि उसे क्षमा नहीं किया जा सकता। उसे क़त्ल कर दिया जाएगा। लेकिन जब सुमामा ने आप (सल्ल॰) की दयाशीलता और अनुकम्पा को देखा तो उसे आशा हुई कि दया के लिए यदि निवेदन किया जाए तो वह अस्वीकृत न होगी। इसलिए दूसरे दिन एहसान और कृतज्ञता के विषय से अपनी बात शुरू की। नबी (सल्ल॰) का उत्कृष्ट शील स्वभाव किसी चमत्कार से कम न था। यह आप (सल्ल॰) के नैतिक आचरण का प्रभाव था कि आप (सल्ल॰) से अत्यन्त घृणा करनेवाला व्यक्ति बिलकुल बदल जाता है और आप (सल्ल॰) पर प्राण न्योछावर करनेवालों में शामिल हो जाता है। और

स्पष्ट रूप से अपनी इस भावना को व्यक्त करता है कि जिस व्यक्ति के चेहरे से, जिसके नगर से और जिसके दीन और धर्म से मुझे सबसे बढ़कर नफ़रत थी आज उसकी हर चीज़ मुझे सबसे बढ़कर प्रिय हो गई है। यह है शील-स्वभाव और चरित्र का जादू। इससे बढ़कर हम किसी जादूगरी की कल्पना नहीं कर सकते। सत्य के सन्देशवाहकों को ऐसे ही शील-स्वभाव और चरित्र से सुसज्जित होना चाहिए।

(6) हज़रत इब्ने-मुसय्यिब अपने पिता के माध्यम से बयान करते हैं कि जब अबू-तालिब की मृत्यु का समय आया तो नबी (सल्ल॰) उनके पास गए। उस समय उनके पास अबू-जहल भी मौजूद था। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"चचा जान, ला इला-ह इल्लल्लाह कह लीजिए, ताकि इसके आधार पर अल्लाह के यहाँ मुझे कुछ कहने का अवसर मिल सके।"

इसपर अबू-जहल और अब्दुल्लाह-बिन-उमैया बोल पड़े कि ऐ अबू-तालिब, क्या तुम अब्दुल-मुत्तलिब के पैतृक धर्म को छोड़ दोगे? और वे निरन्तर अबू-तालिब को वरग़लाते रहे। यहाँ तक कि अन्तिम बात जो उन्होंने कही वह यह थी कि मैं अब्दुल-मुत्तलिब ही के दीन पर क़ायम हूँ। नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"मैं आपके लिए क्षमा की प्रार्थना करता रहूँगा जब तक कि मुझे इससे रोक न दिया जाए।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अबू-तालिब नबी (सल्ल॰) के चचा थे। ईमान न लाने के बावजूद उन्होंने नबी (सल्ल॰) का साथ नहीं छोड़ा। नबी (सल्ल॰) की कामना थी कि अबू-तालिब ईमान ले आएँ। लेकिन वे ईमान न ला सके। जब उनकी मृत्यु का समय आया तो आप (सल्ल॰) उनके पास पहुँचे और उनको एकेश्वरवाद की उक्ति को स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया। और यह कामना व्यक्त की कि वे दुनिया से ईमान के साथ प्रस्थान करें। किन्तु वे ईमान न ला सके। आप (सल्ल॰) ने कहा कि मैं ईश्वर से चचा के लिए क्षमा की याचना करता रहूँगा जब

तक कि मुझे इससे रोक न दिया जाए। अन्ततः क़ुरआन में स्पष्टतः इसकी आयतें अवतरित हुईं। "नबी और ईमान लानेवालों के लिए उचित नहीं कि वे बहुदेववादियों के लिए क्षमा की प्रार्थना करें, चाहे वे उनके नातेदार ही क्यों न हों, जबकि यह बात उनपर खुल चुकी है कि वे भड़कती आग में पड़नेवाले हैं।" (क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-113) और यह आयत कि "तुम जिसे चाहो राह पर नहीं ला सकते। किन्तु अल्लाह जिसे चाहता है राह दिखाता है। और वही राह पानेवालों को भलि-भाँति जानता है।"

(क़ुरआन, सूरा-28 क़सस, आयत-56)

(7) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक यहूदी लड़का नबी (सल्ल॰) की सेवा करता था। जब वह बीमार पड़ा तो नबी (सल्ल॰) उसकी मिज़ाज-पुर्सी के लिए उसके पास गए। आप (सल्ल॰) उसके सिर के पास बैठे और कहा, "इस्लाम स्वीकार कर ले।" उसने अपने बाप की ओर देखा, जो उसके पास ही था। उसने अपने बेटे से कहा कि अबुल-क़ासिम का कहना मान ले। तो उसने इस्लाम स्वीकार कर लिया। नबी (सल्ल॰) यह कहते हुए बाहर निकले कि अल्लाह का शुक्र है कि उसने उसे (दोज़ख़ की) आग से छुटकारा दिला दिया।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से मालूम होता है कि जीवन की वास्तविक सफलता यह है कि मनुष्य दोज़ख़ की आग से छुटकारा पा ले। सांसारिक जीवन में किसी को कितना ही सुख और सुविधा प्राप्त हो, किन्तु यदि वह नारकी और दोज़ख़ी है तो कदापि उसके जीवन को सफल नहीं कहा जा सकता। लोगों के विषय में सत्य के सन्देशवाहक को अस्ल चिन्ता इसकी होती है कि वह अधिक-से-अधिक लोगों को जहन्नम की आग में पड़ने से बचा ले और इसके लिए उसकी कोशिश यह होती है कि लोग सत्य को स्वीकार करें और यथा सम्भव ईश्वर के मार्गदर्शन का अनुपालन करें।

नबी (सल्ल॰) के कुछ अभिभाषण, जिनका सम्बन्ध सत्य के आमंत्रण से है

(1.) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि जब यह आयत उतरी, "अपने निकटतम नातेदारों को सचेत करो।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअ्रा, आयत- 214) तो नबी (सल्ल॰) निकले, यहाँ तक कि सफ़ा पर्वत पर चढ़ गए। फिर पुकारना शुरू किया, "ऐ फ़िह्र की औलाद, ऐ अदी की औलाद! इसी तरह क़ुरैश के समस्त क़बीलों को आप (सल्ल॰) ने नाम लेकर पुकारा। यहाँ तक कि सब एकत्र हो गए और जो व्यक्ति (किसी कारणवश) स्वयं न पहुँच सका तो उसने किसी को अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा। ताकि उसे मालूम हो सके कि उन्होंने क्यों बुलाया है। फिर जब अबू-लहब और क़ुरैश के सब लोग आ गए तो आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "यदि मैं तुम्हें यह सूचना दूँ कि सवारों का एक दस्ता इस पहाड़ की ओर से (एक रिवायत के शब्द हैं, 'इस घाटी से') निकला है, जो तुमपर ग़ारतगरी के इरादे से आक्रमण करना चाहता हैं तो क्या तुम मुझे सच्चा समझोगे?"

लोगों ने (एक ज़बान होकर) कहा, "हाँ, (हम सच्चा समझेंगे।) हमारे तजुर्बे में तुम हमेशा सच्चे साबित हुए हो।" इसपर आप (सल्ल॰) ने कहा—

> "मैं तुम्हें उस कठोर यातना से डराता हूँ जो तुम्हारे समक्ष (पेश आनेवाली) है।"

अबू-लहब ने कहा कि विनाश हो तेरा! क्या इसी के लिए तूने हमें एकत्र किया था? इसपर यह सूरा उतरी कि "अबू-लहब के दोनों हाथ टूट गए और वह स्वयं भी विनष्ट हो गया"। (सूरा-111)

(हदीस :बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : सफ़ा पर्वत के नबी (सल्ल॰) के अभिभाषण और सम्बोधन से यह तथ्य पूर्ण रूप से स्पष्ट होता है कि पैग़म्बर जिस ऊँचाई पर होता है वह ऊँचाई जनसामान्य को प्राप्त नहीं होती। वह

आनेवाली उस यातना को अपनी खुली आँखों से देख रहा होता है, जो ज़ालिम और अवज्ञाकारी क़ौमों के लिए निश्चित हो चुकी होती है। जनसामान्य को भविष्य के बुरे परिणाम की कोई ख़बर नहीं होती और वे यह भी नहीं जानते कि यदि वे अपने बुरे परिणाम से बचना चाहें तो उन्हें क्या करना होगा।

नबी (सल्ल॰) सबसे पहले तो इसका इक़रार कराते हैं कि लोगों को आप (सल्ल॰) के सच्चे और सत्यवान होने का पूरा विश्वास हो। आप (सल्ल॰) जो भी ख़बर देंगे वह ख़बर ग़लत न होगी। जब लोगों ने इक़रार कर लिया कि आप (सल्ल॰) सच्चे हैं और हम सभी लोगों को इसका अनुभव है कि आप सदैव सच्चे ही साबित हुए हैं। आप (सल्ल॰) ने किसी मामले में भी कभी ग़लत बात नहीं कही। तब आपने कहा कि आनेवाली कठोर यातना से डरो, जिसकी तुम्हें ख़बर नहीं है। वह आक्रमणिक दस्तें की तरह तुमपर आएगा और फिर तुम्हें तबाही, विनाश और दुखद यातना से बचानेवाला कोई न मिल सकेगा।

इससे पहले कि लोग नबी (सल्ल॰) की बात पर विचार करते अबू-लहब, जिसको क़ौम में विशेष स्थान प्राप्त था, भड़क पड़ा और क्रोध में आकर आपको कोसने लगा कि यह क्या नया राग छेड़कर क़ौम की एकता को भंग किया जा रहा है। यदि मुहम्मद (सल्ल॰) की बात मान ली जाए तो इसका अर्थ यह होगा कि हमारे बाप-दादा ग़लत थे और हमारी सरदारी और नायकता भ्रष्ट नायकता है। इस बात को कोई कैसे सहन कर सकता है।

(2.) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हज में क़ुरबानी के अवसर पर ख़ुतबा दिया। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"यह कौन-सा दिन है।"

लोगों ने कहा कि यह हराम (प्रतिष्ठित) दिन है। आप (सल्ल॰) ने कहा :

"यह कौन-सा नगर है?"

लोगों ने कहा कि यह हराम (प्रतिष्ठित) नगर है। आप (सल्ल॰) ने कहा,

"तुम्हारा ख़ून, तुम्हारा माल, तुम्हारी आबरू तुमपर हराम है, जिस तरह आज का यह दिन तुम्हारे इस नगर में और तुम्हारे इस महीने में हराम है।"

आप (सल्ल॰) ने इन बातों की कई बार पुनरोक्ति की। फिर अपना सिर आकाश में उठाकर कहा—

"ऐ अल्लाह, क्या मैंने (तेरा सन्देश) पहुँचा दिया? ऐ अल्लाह, क्या मैंने (तेरा सन्देश) लोगों तक पहुँचा दिया?"

हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) कहते हैं कि उसकी क़सम जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं, आप (सल्ल॰) ने अपने समुदाय को यही वसीयत की थी कि "जो लोग उपस्थित हैं वे उन लोगों तक पहुँचाएँ जो यहाँ उपस्थित नहीं हैं कि मेरे पीछे काफ़िर न हो जाना कि परस्पर एक-दूसरे की गर्दनें मारने लग जाओ।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात् लोगों को यह बात जान लेनी चाहिए कि केवल दिन, नगर और महीने ही आदर के योग्य नहीं होते, बल्कि लोगों की आबरू और उनके प्राण भी आदरणीय होते हैं। कुफ़्र, अर्थात् अधर्म केवल यही नहीं है कि मनुष्य सत्य का इनकार कर दे। बल्कि यह भी कुफ़्र है कि लोग एक-दूसरे की हत्या करने लगें और मानव के प्राणों का लोगों की दृष्टि में कोई मूल्य शेष न रहे।

नबी (सल्ल॰) के कुछ पत्र आमंत्रण के सम्बन्ध में

(1) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने रोम (रूम) के क़ैसर यानी सम्राट के नाम पत्र लिखा। जिसमें उसे इस्लाम का आमंत्रण दिया। आप (सल्ल॰) ने अपना वह पत्र दहया कलबी (रज़ि॰) के द्वारा रवाना किया और उनको आदेश दिया कि वे उस पत्र को बसरा के अधिकारी को पहुँचा

दें, ताकि वह उसे क़ैसर के पास पहुँचा दे। पत्र यह था–

"अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील और दयावान है।

अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल मुहम्मद की ओर से हिरक़्ल के नाम, जो रोम का बड़ा शासक है। उस व्यक्ति पर सलाम जो मार्गदर्शन का अनुसरण करे। इसके बाद मैं तुम्हें इस्लाम का आमंत्रण देता हूँ। इस्लाम स्वीकार कर लो, सुरक्षित रहोगे। इस्लाम स्वीकार कर लो, अल्लाह तुम्हें दोहरा प्रतिफल प्रदान करेगा। और यदि मुँह फेरोगे तो तुमपर अरीसियों का गुनाह भी होगा। ऐ किताबवालो, हमारे और अपने मध्य की एक सीधी बात की ओर आओ। यह कि हम अल्लाह के सिवा किसी की बन्दगी न करें और न उसके साथ किसी चीज़ को साझी ठहराएँ। और न आपस में हममें कोई एक-दूसरे को अल्लाह से हटकर रब बनाए। फिर यदि वे मुँह फेरें तो कह दो कि गवाह रहो कि हम तो मुस्लिम हैं।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस समय रोम इटली की राजधानी का नाम है। अरब बाज़न्तीन (Byzantine) को रोम (रूम) कहते थे। चौथी शताब्दी ई॰ के आरम्भ में बाज़न्तीन राज्य दो भागों में विभक्त हो गया था। इसके पूर्वी क्षेत्र में एशिया-ए-कूचक, मिस्र, सीरिया (शाम) और फ़िलस्तीन आदि देश स्थित थे। इस क्षेत्र में बासफ़ोरस जलडमरूमध्य के तट पर 326 ई॰ में कांस्टेनटाइन (Constaintine) ने एक नगर आबाद किया, जिसका नाम उसने अपने नाम पर रखा। जिसको अब क़ुस्तनतीनिया (Constantinopel) या इस्तंबोल कहते हैं। पश्चिमी भाग की राजधानी रोम ही रही। इस्लामी इतिहास में रोमी से अभिप्रेत रोम साम्राज्य का पश्चिमी भाग है। रोम के सम्राट की उपाधि क़ैसर (Caesar) थी।

अरीसून के अर्थ में मतभेद पाया जाता है। कुछ लोगों ने इसका अर्थ कृषक लिया है। इससे अभिप्रेत क़ैसर की प्रजा ही है जिसपर

वह शासन कर रहा था। नबी (सल्ल॰) ने लिखा कि यदि क़ैसर इस्लाम लाता है तो उसे दोहरा प्रतिफल प्राप्त होगा। एक तो अपने नबी पर ईमान लाने का और दूसरे अन्तिम नबी पर ईमान लाने का प्रतिफल भी उसके हिस्से में आएगा। फिर उसके ईमान लाने के कारण उसकी क़ौम भी ईमान ले आती है तो उसका पुण्य और प्रतिफल भी उसके हिस्से में आएगा। इस प्रकार वह दोहरे प्रतिफल का पात्र होगा। लेकिन यदि क़ैसर मुह फेरता और इस्लाम के आमंत्रण को स्वीकर नहीं करता तो क़ौम के गुनाह का बोझ भी उसकी गर्दन पर रहेगा। क्योंकि उसके ईमान न लाने के कारण क़ौम भी कुफ़्र में ग्रस्त रहेगी। यह प्रसिद्ध है कि लोग अपने सरदार के धर्म पर होते हैं।

पत्र के अन्त में नबी (सल्ल॰) ने आले-इमरान की आयत-46 को उद्धृत किया है। क़ैसर ईसाई अर्थात् किताबवालों में से था। इसी लिए आप (सल्ल॰) ने यह आयत अपने पत्र में उद्धृत की। जब यह पत्र क़ैसर को मिला उस समय वह कुस्तनतीनिया से यरूशलम (यरूश्लेम) के दर्शन के लिए जा रहा था। उसे यह पत्र हिम्स के स्थान पर पहुँचाया गया था। उसने आदेश दिया कि अरब का कोई व्यक्ति मिले तो उसे लाया जाए। बैतुल-मक़्दिस के निकट ग़ज़्ज़ा (प्रयाद्वीप सीना में फ़िलस्तीन और मिस्र का सरहदी स्थान) में मक्का के क़ुरैश के व्यापारियों का एक क़ाफ़िला ठहरा हुआ था। क़ाफ़िले के अमीर अबू-सुफ़ियान थे जो अभी तक ईमान नहीं लाए थे। क़ैसर के दरबार में ये लोग पेश हुए। क़ैसर ने नबी (सल्ल॰) के विषय में विभिन्न प्रश्न किए जिनका उल्लेख इतिहास में मिलता है। वह इस निष्कर्ष पर पहुँच गया कि नबी (सल्ल॰) सच्चे नबी हैं और वे वही नबी हैं जिसकी प्रतीक्षा किताबवालों को रही है। यद्यपि क़ैसर पर प्रकट हो गया था कि इस्लाम ही सच्चा धर्म है किन्तु राजसत्ता का मोह और प्रजा के डर से वह ईमान न ला सका। उसने हज़रत दहिया

कलबी (रज़ि॰) से कहा कि तुम रोमिया के महान उस्क़फ़ ज़ग़ातिर से जाकर मिलो और उसे इस्लाम की ओर बुलाओ। यदि वह ईमान लाता है तो मार्ग प्रशस्त हो जाएगा। नबी (सल्ल॰) को जब इसकी सूचना दी गई तो आपने ज़ग़ातिर के नाम आमंत्रण का पत्र लिखा। पत्र में लिखा—

"जिसने इस्लाम स्वीकार किया उसपर सलाम हो। मेरा मार्ग वही है जिसका अनुसरण ईसा-इब्ने-मरयम रूहुल्लाह करते रहे। वे अल्लाह का कलिमा थे जो पाक दामन मरयम को समर्पित हुआ था। मैं अल्लाह और उन किताबों पर, जो इबराहीम, इसहाक़, याक़ूब और उनकी औलाद पर अवतरित हुई थीं, ईमान रखता हूँ। मूसा, ईसा और दूसरे नबियों को रब की ओर से जो प्रदान हुआ उसपर हम विश्वास रखते हैं। हम नबियों में किसी भी प्रकार के अन्तर को नहीं मानते। हम मुस्लिम हैं। सलाम हो उसपर जो मार्गदर्शन का अनुपालन करे।"

उसने यह पत्र पढ़कर अपने मुस्लिम होने की घोषणा कर दी। लेकिन लोगों ने क्रोधित होकर उसे शहीद कर दिया।

क़ैसर के नाम जो पत्र नबी (सल्ल॰) ने भेजा था उसकी मूल कॉपी प्राप्त हो चुकी है। इतिहास में इस पत्र के मौजूद होने का सातवीं शताब्दी हिजरी तक स्पेन में पता चलता है। स्पेन (अन्दलुस) के पतन के पश्चात यह पत्र किसी तरह मक्का पहुँचा दिया गया। हिजाज़ के शासक हाशिमी ख़ानदान ने इसे अपने यहाँ सुरक्षित रखा। मई सन् 1975 ई॰ में समाचार पत्रों के द्वारा यह ख़बर प्रकाशित हुई कि हाशिमी ख़ानदान के शाह अब्दुल्लाह शरीफ़ हुसैन (शरीफ़ मक्का के बेटे और पूर्वी उर्दुन के शाह हुसैन के दादा) ने यह पत्र अपनी मलिका नहजा को इस शर्त पर दे दिया था कि किसी सख़्त ज़रूरत पर किसी मुसलमान शासक के हाथ बेच देना। अतएव अबू-ज़हबी के

शासक शैख़ ज़ैद-बिन-सुल्तान अन-नहयान ने इस क़ीमती पत्र को सौ मिलयन डॉलर में ख़रीद लिया। इस पत्र के शोध-कार्य में पूरा एक वर्ष लगा।

(2) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने किसरा के नाम अपना पत्र अब्दुल्लाह इब्ने-हुज़ाफ़ा सहमी (रज़ि॰) के द्वारा भेजा। उन्हें यह आदेश दिया कि वे उसे बहरैन के शासक के पास ले जाएँ (ताकि वह उसे किसरा तक पहुँचा दे)। और बहरैन के शासक ने उसे किसरा तक पहुँचा दिया। जब किसरा ने उस पत्र को पढ़ा तो उसे फ़ाड़कर फेंक दिया। इब्ने-मुसैयिब (हदीस के रावी) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल ने किसरा और उसके अनुयायियों के लिए बद्दुआ की कि "वे टुकड़े-टुकड़े कर दिए जाएँ, बिलकुल टुकड़े-टुकड़े।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : रोमन साम्राज्य की तरह फ़ारस (ईरान) भी प्राचीनतम साम्राज्य रहा है। उस समय उसका राज्य जहाँ एक ओर सिंध तक फैला हुआ था तो दूसरी ओर इराक़ और अरब के अधिकतर भू-भाग यमन, बहरैन और उमान आदि ईरान के अधीन थे। इस राज्य के शासक की उपाधि ख़ुसरौ हुआ करती थी। किसरा इसी का अरबी रूप है। नबी (सल्ल॰) ने जिस किसरा के नाम पत्र लिखा था उसका नाम परवेज़ था, जो हरमुज़-बिन-नौशेरवाँ का बेटा था।

नबी (सल्ल॰) की बद्दुआ का नतीजा सामने यह आया कि अभी ज़्यादा वक़्त नहीं गुज़रा था कि उसके राज्य पर वह लानत पड़ी कि हज़ारों वर्ष का महान राज्य टुकड़े-टुकड़े होकर रह गया।

ख़ुसरौ परवेज़ ने न केवल यह कि आप (सल्ल॰) का पत्र फाड़ डाला बल्कि उसने एक धृष्टता और भी की। उसने यमन के अपने नायब और अपने भतीजे बाज़ान को सन्देश भेजा कि हिजाज़ में जिस व्यक्ति ने अपने नबी होने का दावा किया है उसे हमारे पास भिजवा दो। उसने अपने दो आदमी नबी (सल्ल॰) के पास भेजे। उन्होंने आप (सल्ल॰) से कहा कि ख़ुसरौ ने आपको तलब किया है। नबी (सल्ल॰)

ने कहा कि इसका उत्तर कल मुझसे ले लेना। अगले दिन आपने कहा कि अपने हाकिम बाज़ान को यह सूचना दे दो कि मेरे रब ने ख़ुसरौ परवेज़ का काम तमाम कर दिया। ख़ुसरौ का रोमियों के साथ युद्ध हो रहा था। ख़ुसरौ की पराजय पर पराजय हो रही थी। किन्तु वह सुलह के लिए तैयार नहीं हो रहा था। उसके बेटे शेरविया ने बाप को क़त्ल करके रोमियों की शर्त पर उनसे सन्धि कर ली। लेकिन 6 माह की थोड़ी ही मुद्दत में वह दुनिया से चल बसा और ईरान के टुकड़े-टुकड़े हो गए।

इधर यमन के शासक बाज़ान ने नबी (सल्ल॰) की शिक्षाओं के पश्चात इस्लाम स्वीकार कर लिया। फिर उसके दरबारियों के अतिरिक्त दूसरे बहुत-से लोग भी उसके अनुसरण में मुसलमान हो गए। एक वर्ष के पश्चात बाज़ान के देहान्त के पश्चात यमन में अशान्ति फैल गई। नबी (सल्ल॰) ने उसके नाबालिग़ बेटे को हाकिम नियुक्त किया और शान्ति की पुनः स्थापना के लिए अबू-मूसा अशअरी, मुआज़-बिन-जबल और आमिर हमदानी (रज़ि॰) आदि को यमन के ज़िलों का प्रबन्धक बनाकर भेजा।

किसरा के नाम नबी (सल्ल॰) ने जो पत्र भेजा था उसकी मूल कॉपी भी मिल गई है। यह पत्र फटा हुआ था जिसको जोड़कर ठीक किया गया है। यह पत्र लुबनान के भूतपूर्व विदेश मन्त्री हेनरी फ़िरऔन के पास सुरक्षित है। इसका पता सीरिया के एक विद्वान डॉ॰ सलाह अल-मुंजिद ने लगाया है। हेनरी फ़िरऔन के पिता ने प्रथम विश्व युद्ध के विराम पर यह दस्तावेज़ दिमश्क़ में 150 अशरफ़ियों में ख़रीदा था। सन 1962 ई॰ तक हेनरी फ़िरऔन को यह ख़बर न थी कि यह नबी (सल्ल॰) के पत्रों में से एक महत्वपूर्ण पत्र है। डॉ॰ हमीदुल्लाह ने अपने एक शोध लेख में उसके असली होने का विश्वास व्यक्त किया है। इस पत्र को हम यहाँ उद्धृत करते हैं (जिसका अनुवाद यह है)—

'अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील, दयावान है।'

"अल्लाह के बन्दे और उसके रसूल मुहम्मद की ओर से किसरा महान फ़ारस के नाम!

सलाम हो उसपर जो मार्गदर्शन का अनुसरण करे और अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाए और जिसने गवाही दी कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं। वह एक है, उसका कोई साझीदार नहीं। और मुहम्मद उसके बन्दे और उसके रसूल हैं। मैं तुम्हें अल्लाह के आमंत्रण की ओर बुलाता हूँ। क्योंकि मैं अल्लाह का रसूल हूँ। जिसे समस्त मानवों की ओर भेजा गया है, ताकि मैं ज़िन्दों को (आख़िरत से) डराऊँ और काफ़िरों पर सत्य बात सिद्ध होकर रहे। इस्लाम स्वीकार कर लो, सलामत रहोगे। और यदि इनकार करोगे तो सारे मजूस (अग्निपूजकों) की यातना भी तुम्हारी गर्दनों पर होगी।"

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने जो पत्र क़ैसर के नाम भेजा था और इस पत्र में जो किसरा के नाम भेजा गया है मौलिक अन्तर पाया जाता है। क़ैसर किताबवालों में से था और किसरा किताबवालों में से नहीं था। इसलिए आमंत्रण यद्यपि दोनों के लिए एक (एकेश्वरवाद) ही था लेकिन स्वभावतः आमंत्रण के प्रस्तुत करने का ढंग अलग अलग अपनाया गया है। किसरा के पत्र के ये शब्द "ताकि ज़िन्दों को डराऊँ और काफ़िरों पर सत्य बात सिद्ध होकर रहे," क़ुरआन की सूरा-35 फ़ातिर आयत-70 से उद्धृत हैं, जो किसरा के लिए अत्यन्त उपयुक्त थे, यदि वह फ़ायदा उठाता। किसरा के पत्र में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि किसरा ज़िन्दगी का सुबूत दे और अल्लाह के रसूल पर ईमान लाकर एक अल्लाह की बन्दगी की राह अपना ले। यदि वह इनकार करता है तो उस पर हुज्जत पूरी कर दी जा रही है। कल वह यह नहीं कह सकेगा कि मुझे तो किसी ने सत्य

का आमंत्रण दिया ही नहीं। मैं ईमान कैसे लाता? वह ईमान नहीं लाया तो अपने गुनाह के साथ उसकी गर्दन पर क़ौम के गुनाह का बोझ भी होगा। सामान्य जनता शासक के प्रभाव में होती है और उसी के दीन व धर्म को स्वीकार करने को श्रेय का कार्य समझती है।

(३) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने किसरा और क़ैसर और नज्जाशी और प्रत्येक जाबिर और ताक़तवर सम्राटों को पत्र लिखे जिनमें उन्हें अल्लाह (का आज्ञापालन अर्थात् इस्लाम) की ओर आमन्त्रित किया गया था। यहाँ नज्जाशी से अभिप्रेत वह नज्जाशी नहीं है जिसकी नबी (सल्ल॰) ने (मदीना में परोक्ष रूप से) जनाज़े की नमाज़ पढ़ी थी। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस के अन्त में यह बात कही गई है कि यह वह नज्जाशी नहीं है जिसको आप (सल्ल॰) ने आमंत्रण पत्र भेजा था और वह मुसलमान हो गया था। जिसके देहान्त पर आपने मदीना में सहाबा से कहा था कि नेक मर्द तुम्हारे भाई असहमा का देहान्त हो गया है। उठो, उसकी नमाज़े-जनाज़ा पढ़ो। फिर आपने उसकी ग़ायबाना नमाज़ पढ़ाई।

आपने दोनों नज्जाशी को पत्र भेजे थे। पहले नज्जाशी ने तो इस्लाम स्वीकार कर लिया था किन्तु दूसरे के विषय में मतभेद पाया जाता है। कुछ लोगों के मतानुसार उसने भी इस्लाम स्वीकार कर लिया था किन्तु कुछ के अनुसार वह मुसलमान नहीं हुआ था।

हबश अरब के दक्षिण में पूर्वी अफ़्रीक़ा का एक देश है। हबश को इथोपिया भी कहते हैं। नबी (सल्ल॰) को जब नुबूवत मिली तो उस समय उस देश पर ईसाई बादशाह हुकूमत कर रहा था। हबशी भाषा में बादशाह को नजूस (Negus) कहते हैं। नज्जाशी इसी नजूस का अरबी रूप है। यहाँ हम वह पत्र उद्धृत करते हैं जो आप (सल्ल॰) ने नज्जाशी सहमा के नाम भेजा था।

"अल्लाह के नाम से जो अत्यन्त कृपाशील और दयावान

है।" मुहम्मद, अल्लाह के रसूल की ओर से, हबश के सम्राट नज्जाशी के नाम! सलामती हो उसपर जो मार्गदर्शन का अनुसरण करे। तत्पश्चात् मैं उस अल्लाह की स्तुति तुम्हारे सामने करता हूँ जिसके सिवा कोई पूज्य नहीं, वह सम्राट है, अत्यन्त पवित्र, सर्वथा सलामती, निश्चिन्तता प्रदान करनेवाला, संरक्षक, प्रभुत्वशाली, और मैं गवाही देता हूँ कि मरयम पुत्र ईसा अल्लाह की रूह और उसका कलिमा हैं जिसको अल्लाह ने पाक दामन मरयम की ओर डाला था। ईसा उसकी रूह और फूँक से गर्भ में आए जिस तरह आदम को उसने अपने हाथ से पैदा किया। और मैं तुम्हें अल्लाह की ओर आमन्त्रित करता हूँ जो अकेला है और उसका कोई साझीदार नहीं। और उस मैत्री और पारस्परिक एकता की ओर आमन्त्रित करता हूँ जो अल्लाह के आज्ञापालन पर आधारित होता है। यदि मेरा अनुसरण करते हो और उसपर विश्वास करते हो, जिसने मुझे भेजा है, तो मैं अल्लाह का रसूल हूँ और मैं तुम्हें और तुम्हारी सेना को प्रतापवान अल्लाह की ओर आमन्त्रित करता हूँ। मैं सन्देश पहुँचा चुका और तुम्हारी भलाई चाही। अब मेरी शुभ चिन्ता को स्वीकार करो। सलाम है उनपर जो मार्गदर्शन का अनुपालन करें।"

नबी (सल्ल॰) के पाए जानेवाले मूल पत्रों में यह पत्र भी सम्मिलित है, जिसे नबी (सल्ल॰) ने हबश के बादशाह नज्जाशी को लिखा था। यह पत्र उमर-बिन-उमैया के हाथ भेजा गया था। इस पत्र की मूल प्रति अक्तूबर सन् 1938 में दिमश्क़ (Damascus) में प्राप्त हुई। वहाँ से यह पत्र इंगलैण्ड ले जाया गया। वहाँ के प्रसिद्ध म्यूज़ियम में विशेषज्ञों ने उसका निरीक्षण किया और फिर दिमश्क़ लौटा दिया।

नबी (सल्ल॰) ने बहुत-से शासकों और बहुत-से महत्वपूर्ण व्यक्तियों को पत्र लिखे और उन्हें इस्लाम की ओर आमन्त्रित किया। यहाँ केवल उदाहरणस्वरूप कुछ पत्रों का उल्लेख किया गया है। आमंत्रण सम्बन्धी आपके पत्रों के अध्ययन से कई मौलिक बातें हमारे सामने आती हैं। आप (सल्ल॰) ने अपने पत्रों की भाषा अत्यन्त सहज और सरल रखी है। अनुचित वाक्पटुता से काम नहीं लिया गया है। आपने इसे स्पष्ट कर दिया है कि यह पत्र ईश्वर के सन्देशवाहक की हैसियत से भेज रहे हैं। फिर आपका आमंत्रण क्या है? इसे अस्पष्ट शब्दों में नहीं बल्कि स्पष्ट शब्दों में व्यक्त किया है। किसी पहलू की उपेक्षा नहीं की। आपने आमंत्रण पत्रों में इसका ध्यान रखा है कि वह किसे लिखा जा रहा है। उसकी मानसिकता क्या है और उसकी अपनी धार्मिक परम्पराएँ क्या रही हैं। इसका ध्यान आपने इसलिए रखा कि सन्देश को समझने और उसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई न हो। आपके सन्देश को स्वीकार न करने और आपके आमंत्रण को ठुकरा देने के बुरे परिणाम क्या हो सकते हैं उनसे भी आपने अवगत कराया। अर्थात् अपने पत्रों में आप (सल्ल॰) ने दो तरीक़े अपनाए। अर्थात सत्य को स्वीकार करने पर उन्हें शुभ-सूचना दी और उसे अस्वीकार करने की दशा में उसके बुरे परिणाम से भी डराया। आपके आमंत्रण सम्बन्धी पत्रों में उन लोगों के मार्गदर्शन के लिए बहुत कुछ सामग्री पाई जाती है जो वर्तमान युग में सत्य के प्रचार-प्रसार के कार्य में लगे हुए हैं।

आपकी शिक्षा और प्रशिक्षण का ढंग

(1) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) लोगों को ऐसे ही कामों के करने का आदेश दिया करते थे जिसकी सामर्थ्य उनमें होती थी। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : धर्म में आदमी पर उतनी ही ज़िम्मेदारी डाली गई है जितना उसे सामर्थ्य प्राप्त है। नबी (सल्ल॰) सदैव इसका ध्यान रखते

थे। किसी की कार्य-शक्ति और उसकी शारीरिक और बौद्धिक क्षमता को देखते हुए सेवा-कार्य ही उसे सौंपते थे। बल्कि कुछ लोगों को तो आपने रोका भी कि वे अपने ज़िम्मे वह काम लें जिसकी शक्ति और सामर्थ्य उन्हें प्राप्त नहीं।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह इब्ने-मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हमें उद्देश्यपूर्ण भाषण देने में इस बात का ध्यान रखते थे कि कहीं वह हमारे उकता जाने का कारण न बन जाए, जो आप (सल्ल॰) को पसन्द नहीं था। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : भाषण और उपदेश आदि में सन्तुलन का ध्यान रखना आवश्यक है। सुबह-शाम या हर समय लोगों को भाषण और उपदेश से लाभान्वित होने के क्रम को निरन्तर बाक़ी रखने में इसकी बड़ी आशंका है कि लोग अच्छे उपदेशों से उकता जाएँ और अपने लिए उसे एक मुसीबत न समझने लगें। नबी (सल्ल॰) मनुष्य के मनोभाव का बड़ा ध्यान रखते थे। आप (सल्ल॰) चाहते थे कि लोगों का शौक़ बाक़ी रहे। वे उकताहट महसूस न करें। हज़रत इब्ने-मसऊद (रज़ि॰) स्वयं भी नबी (सल्ल॰) का तरीक़ा ही अपनाते थे। अर्थात् निरन्तर और प्रत्येक दिन लोगों को नसीहत नहीं करते थे।

(3) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"हसद केवल दो व्यक्तियों से किया जा सकता है। एक वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने माल दिया और सत्यमार्ग में उसे ख़र्च करने का सौभाग्य भी प्रदान किया। दूसरा व्यक्ति वह है जिसे अल्लाह ने हिकमत (ज्ञान) प्रदान की और वह उसके अनुसार मामलों का फ़ैसला करता है और उस हिकमत की लोगों को शिक्षा देता है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यहाँ हसद शब्द का प्रयोग अतिश्योक्ति के रूप में प्रयोग किया गया है। इससे अभिप्रेत रश्क है। अरबी में इसे ग़ब्ता कहते हैं। किसी के यहाँ किसी विशेषता या ख़ूबी को देखकर उसकी

कामना करना कि यह चीज़ हमें भी प्राप्त हो रश्क कहलाता है। और इसमें कोई बुराई नहीं है। हसद या ईर्ष्या यह है कि आदमी किसी की उन्नति और उसकी ख़ुशहाली आदि को देखकर यह चाहने लगे कि ये चीज़ें उससे छिन जाएँ और वह उच्च स्थान से गिर जाए। यह ईर्ष्या या हसद बिल्कुल हराम और अवैध है। केवल किसी ज़ालिम और दुराचारी के सिलसिले में उसकी अवनति की इच्छा की जा सकती है ताकि उसके अन्याय और दुराचार से लोगों को छुटकारा मिल सके। ग़ब्ता या रश्क वैध हैं किसी की तरक़्क़ी और ख़ुशहाली को देखकर यदि कोई यह कामना करता है कि उसे भी यह चीज़ प्राप्त हो तो इसमें कोई बुराई नहीं।

इस हदीस में वास्तव में बताया गया है कि सांसारिक जीवन में ये दो प्रकार के व्यक्ति ऐसे हैं जो वास्तव में रश्क के लायक़ हैं। एक मालदार व्यक्ति जिसका माल सत्य मार्ग में ख़र्च हो रहा हो और दूसरा वह व्यक्ति जो ज्ञानवान हो, जिसमें सूझ-बूझ और निर्णय शक्ति पाई जाती हो, जो मामलों को सुलझा सकता हो और समस्याओं को उचित रूप से हल कर सकता हो। और जिसका प्रयास यह हो कि अल्लाह ने उसे जो ज्ञान, विवेक और समझ-बूझ प्रदान किया है वह दूसरों के हिस्से में भी आ सके ताकि धर्म के वास्तविक अभिप्राय से लोग परिचित हो सकें और सत्यधर्म का सही परिचय संसार को मिल सके।

इस हदीस से मिलती-जुलती एक और हदीस बुख़ारी और मुस्लिम में मिलती है। हज़रत इब्ने-उमर से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल.) कहते है—

> "केवल दो व्यक्तियों पर हसद किया जा सकता है। एक वह व्यक्ति जिसको अल्लाह ने क़ुरआन प्रदान किया हो और वह रात-दिन के अधिकतर समयों में उसके साथ (नमाज़ में) खड़ा होता हो। दूसरा वह व्यक्ति जिसे अल्लाह ने माल दिया हो और वह उसे रात-दिन के अकसर समयों

में (सत्यमार्ग में) ख़र्च करता हो।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

(4) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने अनसार को एकत्र किया और कहा–

"क़ुरैश अभी शीघ्र ही अज्ञान से निकलकर मुसलमान हुए हैं और तंगी की मुसीबतें झेल रहे हैं। मैं उनकी कुछ सहायता करना चाहता हूँ। चाहता हूँ कि उनकी दिलजोई करूँ। क्या तुम इसपर राज़ी नहीं हो कि और लोग तो दुनिया का माल लेकर अपने घरों को जाएँ और तुम अल्लाह के रसूल को लेकर अपने घरों को जाओ?"

अनसार बोले क्यों नहीं? हम इसपर राज़ी हैं। इसके बाद आप (सल्ल॰) ने कहा–

"यदि लोग एक घाटी से गुज़रें और अनसार दूसरे मार्ग या घाटी से गुज़रें तो मैं उसी घाटी से गुज़रूँगा जिससे अनसार जाएँगे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस रिवायत के पीछे एक ऐतिहासिक घटना है। हुनैन के युद्ध के पश्चात नबी (सल्ल॰) ने इस्लामी सेना को ताइफ़ की ओर बढ़ने का आदेश दिया। ताइफ़ एक क़िलाबन्द नगर था। क़िला अत्यन्त सुदृढ़ एवं मज़बूत था। इस्लामी सेना ने 20 दिन तक क़िले का घेरा डाले रखा। क़िले में बन्द लोग बाहर निकलकर लड़ने का साहस न कर सके। यह नबी (सल्ल॰) को पसन्द नहीं था कि घेरे को अधिक समय तक डाले रखा जाए। आपने सहाबा से परामर्श किया। अनुभवी लोगों का कहना था कि क़िलाबन्द लोगों में युद्ध का साहस नहीं पाया जाता। उनके पुनः विद्रोह करने की सम्भावना दिखाई नहीं देती। अतएव घेरा उठा लिया गया। ताइफ़ से आप (सल्ल॰) वापस जेराना आए। यहाँ आप (सल्ल॰) ने माले-ग़नीमत मुजाहिदों में वितरित किया। क़ुरैश के दिलों को जीतना आपको अभीष्ट था इसलिए

माले-ग़नीमत का अधिक हिस्सा क़ुरैश को प्रदान किया। व्यापारिक कठिनाइयों के कारण क़ुरैश की आर्थिक दशा भी कुछ अच्छी नहीं थी। अनसार के कुछ लोगों को, जिनकी दृष्टि नबी (सल्ल॰) की कूटनीति पर न थी, शिकायत हुई। क़ुरैश को अधिक माल दिए जाने से उन्हें रंज हुआ। आप (सल्ल॰) को मालूम हुआ तो आपने अनसार को एकत्र किया। इस अवसर पर आपने जो भाषण दिया वह सुभाषिता और प्रभाव की दृष्टि से एक आदर्श है। आपने अनसार को सम्बोधित करते हुए कहा—

"क्या यह सच नहीं है कि तुम पहले गुमराह थे अल्लाह ने मेरे द्वारा तुम्हारा मार्गदर्शन किया, तुम बिखरे हुए थे अल्लाह ने मेरे द्वारा तुममें एकता पैदा की, तुम निर्धन थे अल्लाह ने मेरे द्वारा तुम्हें धनवान किया?"

आप (सल्ल॰) के प्रत्येक वाक्य पर अनसार कहते जाते थे कि अल्लाह और उसके रसूल का उपकार सबसे बढ़कर है। सहसा आपने भाषण का रुख़ बदला और फ़रमाया—

"नहीं, तुम यह उत्तर दो कि ऐ मुहम्मद, जब लोगों ने तुम्हें झुठलाया तो हमने तुम्हारी तसदीक़ की। लोगों ने तुम्हें छोड़ दिया तो हमने तुम्हें पनाह दी। तुम दुर्दशा-ग्रस्त थे। हमने हर प्रकार का सहयोग किया।"

फिर थोड़ा ठहरकर कहा—

"तुम यह उत्तर देते जाओ, मैं यह कहता जाऊँगा कि तुम सच कहते हो। लेकिन ऐ अनसार, क्या तुम्हें यह पसन्द नहीं है कि लोग ऊँट और बकरियों को लेकर अपने घरों को जाएँ और तुम (अल्लाह के रसूल) मुहम्मद को लेकर अपने घरों को लौटो?"

अनसार चीख़ उठे, "हमे और कुछ नहीं बस मुहम्मद चाहिए।"

(तबक़ात इब्ने-सअद)।

(5) हज़रत जाबिर-बिन-सलीम (रज़ि.) से उल्लिखित है। वे कहते हैं कि मैंने एक व्यक्ति को देखा कि वे जो बात कहते लोग उसे स्वीकार कर लेते। कोई आपत्ति बिल्कुल न करते। मैंने पूछा कि ये कौन हैं? लोगों ने कहा कि ये अल्लाह के रसूल हैं। (मैं उनके पास गया और) मैंने दो बार कहा, "अलैकस्सलामु या रसूलल्लाह"। आप (सल्ल.) ने कहा कि "अलैकस्सलाम मत कहो। क्योंकि इस तरह मुर्दों को सलाम करते हैं। बल्कि यूँ कहा कि अस्सलामु-अलैक। मैंने कहा कि क्या आप अल्लाह के रसूल हैं? तो उन्होंने कहा, "मैं उस अल्लाह का रसूल हूँ जब तुम्हें हानि पहुँचे और तुम उसे पुकारो तो वह हानि को तुमसे दूर कर दे। और अगर तुम पर अकाल आ जाए और तुम उसे पुकारो तो वह तुम्हारे लिए वनस्पति (और अनाज आदि) उगाए। और जब किसी ऐसे भू-भाग में हो जहाँ न जल हो न हरियाली और तुम्हारी ऊँटनी गुम हो जाए और तुम उससे प्रार्थना करो और वह उसे तुम्हारे पास लौटा दे।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : कितना सहज किन्तु प्रभावकारी ढंग है नबी (सल्ल.) का जो आपने इस अवसर पर अपनाया। आप (सल्ल.) का आशय यह था कि जिस अल्लाह से आशा रखते हो, मुसीबतों में जिसको पुकारते हो वह तुम्हें निराश नहीं होने देता। वह तुम्हारी प्रार्थना सुनता है। वह तुम्हारी सहायता करता है। तुम्हारी निराशा दूर हो जाती है और तुम आशावान हो जाते हो। तुम्हारे बुझे हुए दिल खिल उठते हैं। मैं उसी ख़ुदा का भेजा हुआ रसूल और सन्देशवाहक हूँ। क्या तुम मेरा इनकार करके अपने अल्लाह के साथ बे-वफ़ाई नहीं करोगे? रिवायत से मालूम होता है कि जाबिर-बिन-सलीम ईमान ले आते हैं और कुछ मामलों में आपसे मार्गदर्शन भी प्राप्त करते हैं।

(6) हज़रत मुआविया-बिन-हकम सुलमी (रज़ि.) से उल्लिखित है कि एक बार मैं अल्लाह के रसूल (सल्ल.) के साथ नमाज़ पढ़ रहा था कि नमाज़ियों में से एक व्यक्ति को छींक आई। तो मैंने कहा

'यरहमुकल्लाह' (अल्लाह तुमपर दया करे)। लोग मुझे घूर कर देखने लगे। मैंने कहा हाय माँ की जुदाई! आख़िर क्या बात है कि तुम लोग मुझे घूरकर देखते हो। वे अपनी रानों पर हाथ मारने लगे। जब मैंने उन्हें देखा कि वे मुझे चुप करा रहे हैं तो मैं चुप हो गया। जब अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) नमाज़ से निवृत हुए। मेरे माता-पिता आप पर क़ुरबान हों। मैंने आप (सल्ल॰) से उत्तम शिक्षा देनेवाला न आपसे पहले देखा और न आपके बाद देखा। अल्लाह की क़सम न आपने मुझे डाँटा, न मारा और न बुरा-भला कहा। आप (सल्ल॰) ने कहा, "यह नमाज़ है, इसमें लोगों की बातचीत में से कोई बातचीत ठीक नहीं। यह तो केवल तस्बीह और तकबीर (अल्लाह की महानता और उसकी बड़ाई) का वर्णन और क़ुरआन का पाठ है।" मैंने कहा कि मैं अज्ञानकाल से बहुत निकट हूँ, शीघ्र ही इस्लाम लाया हूँ। हममें से बहुत-से नजूमियों और ज्योतिषियों के पास जाते हैं। आप (सल्ल॰) ने कहा कि "तुम उनके पास न जाओ।" मैंने कहा कि हममें से कुछ लोग अपशगूनी लेते हैं। आपने कहा कि "यह चीज़ ऐसी है जिसे वे अपने दिल में महसूस करते हैं। ये उनको काम से कदापि न रोके।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) की शिक्षा और प्रशिक्षण का अन्दाज़ कितना अच्छा है! अत्यन्त अच्छे तरीक़े से दीन और धर्म की बातें समझा देते हैं। किसी की बेख़बरी और आश्चर्य पर कोई सख़्ती और क्रोध नहीं दिखाते।

इस हदीस से यह भी मालूम हुआ कि नमाज़ वास्तव में अल्लाह के साथ वार्तालाप है। नमाज़ अल्लाह की स्तुति, उसकी महिमा और उसकी बड़ाई का वर्णन है। अल्लाह के कलाम और उसकी वाणी का पाठ है। नमाज़ में अल्लाह के सिवा किसी दूसरे से बातचीत नहीं की जा सकती, नमाज़ में मामला केवल अल्लाह से होता है।

भलाई का हुक्म देना और बुराई से रोकना

(1) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा– "तुममें जो कोई किसी बुराई को देखे तो उसे चाहिए कि उसे अपने हाथ से बदल दे। अगर उसे इसका सामर्थ्य प्राप्त न हो तो अपनी ज़बान के द्वारा यह कार्य करे। और यदि इसका भी सामर्थ्य न हो तो फिर अपने दिल से उसे बुरा जाने। और यह सबसे कमज़ोर ईमान है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस इस बात का प्रमाण है कि ईमान की अपेक्षा यह है कि आदमी बुराई को सहन न करे, बल्कि उसे मिटाने का प्रयास करे। यदि उसे सामर्थ्य और शक्ति प्राप्त है तो बुराई को मिटाने के लिए वह ताक़त से भी काम ले सकता है और यदि वह बुराई को हाथ से मिटाने की स्थिति में नहीं है तो कम-से-कम बुराई को बुराई कहे और लोगों को इस बात के लिए तैयार करे कि वे बुराई को मिटाने के लिए प्रयत्नशील हों। और यदि किसी कारण इसका अवसर भी उसे प्राप्त नहीं है तो दिल ही में बुराई से नफ़रत करे और इसकी कामना करे कि किसी तरह बुराइयाँ संसार से समाप्त हो जाएँ। लेकिन यदि वह बुराई को देखकर कुढ़न महसूस नहीं करता तो फिर उसे अपने ईमान की चिन्ता होनी चाहिए। क्योंकि इसके बाद ईमान का कोई दर्जा शेष नहीं रहता।

(2) हज़रत नोमान-बिन-बशीर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"ईश्वरीय मर्यादाओं और सीमाओं के विषय में असावधानी से काम लेने और उनमें जा पड़नेवालों की मिसाल उन लोगों की है जो पर्ची डालकर जलयान में बैठे हों। इस तरह उनमें से कुछ लोग जलयान के नीचे के भाग में हों और कुछ लोग उसके ऊपर की मंज़िल में हों। नीचे के भागवाले जब पानी लेने के लिए ऊपर की मंजिल पर आएँ तो इससे

ऊपरवाले तक़लीफ़ महसूस करें। अतः नीचे की मंज़िलवालों में से एक व्यक्ति कुल्हाड़ी लेकर जलयान के तख़्ते उखाड़ने लग जाए। ऊपर के लोग आकर कहें कि तुम्हें क्या हो गया है? इस पर वह कहे कि मेरे कारण तुम्हें तकलीफ़ पहुँचती है और पानी के बिना मेरा काम नहीं चल सकता। ऐसी हालत में या तो लोग उसका हाथ पकड़ लें ताकि उसे भी और ख़ुद को भी (डूबने से) बचा लें या उसको उसके हाल पर छोड़ दें और उसे विनष्ट होने दें और स्वयं भी विनष्ट हो जाएँ।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह सत्य है कि संसार के सारे लोग एक ही जलयान या जहाज़ में सवार होकर जीवन-यात्रा कर रहे हैं। यह जलयान यदि जलमग्न होता है तो अच्छे-बुरे सभी मारे जाएँगे। अतः इस जलयान की सुरक्षा की ओर प्रत्येक व्यक्ति को ध्यान देना चाहिए। जलयान में यदि कोई दरार डालता है तो सभी का कर्तव्य है कि उसका हाथ पकड़ लें और जलयान को डूबने से बचाएँ। दरार डालनेवालों की असुविधा और परेशानी को भी समझने की ज़रूरत है जिसके कारण वे जलयान के तख़्तों को उखाड़ने लग जाते हैं और उन्हें एहसास भी नहीं होता कि वे क्या करने जा रहे हैं।

मानव-समाज में या किसी राज्य में यदि कोई बुराई पनपती है और उसे दूर नहीं किया जाता तो वह सम्पूर्ण समाज और पूरे देश की तबाही का कारण बन सकती है। आज के युग में एक बड़ी समस्या वायु प्रदूषण (Air Pollution) भी है जिससे धनी हों या निर्धन सभी प्रभावित होते हैं। यदि बढ़ते हुए प्रदूषण को रोका न गया तो यह धरती रहने-बसने के योग्य न रहेगी। प्रदूषण से बढ़कर ख़तरनाक चीज़ मानव का नैतिक पतन है। नैतिक विकार के विभिन्न रूप हमारे सामने आते रहते हैं। ईश्वर की उपेक्षा, उसकी निर्धारित सीमाओं और मर्यादाओं का उल्लंघन, दंगा-फ़साद, अश्लीलता, सरकशी, आतंकवाद, कमज़ोरों पर ज़ुल्म, सत्य और न्याय की अवहेलना आदि इन सभी

बुराइयों को धरती से दूर करना ज़रूरी है। क्या ही अच्छा हो कि इसकी ओर पूरा ध्यान दिया जा सके!

(3) हज़रत हुज़ैफ़ा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "क़सम है उस सत्ता की जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं! तुम अनिवार्यतः भलाई का हुक्म देते रहोगे और बुराई से रोकते रहोगे। अन्यथा अल्लाह जल्दी ही तुमपर यातना भेजेगा। उस समय तुम अल्लाह से प्रार्थना करोगे और तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार न की जाएगी।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस में एक अत्यन्त ध्यान देने योग्य बात कही गई हैं जिसकी ओर साधारणतः हमारा ध्यान नहीं जाता। यह हदीस बताती है कि भलाई का हुक्म देने और बुराई से रोकने के अनिवार्य कार्य को त्याग देना और इस ओर से ग़ाफ़िल हो जाना अत्यन्त गम्भीर अपराध है। यह अपराध ऐसा है कि इसके परिणामस्वरूप अल्लाह की ओर से यातना के आने में विलम्ब नहीं होता। इस यातना के विभिन्न रूप सम्भव हैं। इसका एक रूप यह है कि ईश्वर ज़ालिमों को हमपर नियुक्त कर दे और वे हमपर ज़ुल्म के पहाड़ तोड़ने लगें फिर हम अल्लाह से प्रार्थना करें कि वह हमें इस मुसीबत से छुटकारा दे किन्तु वह हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार न करे और हम निरन्तर ज़ुल्म के शिकार होते रहें। कुछ हदीसों में इस विशेष यातना का उल्लेख भी मिलता है। कदाचित् आज मुसलमान जिन मुसीबतों में घिरे हुए हैं, उसका एक बड़ा कराण यह भी है कि धर्म के इस महत्वपूर्ण कर्तव्य की साधारणतः उपेक्षा ही की जाती है और हमारी शक्ति और ऊर्जा का बड़ा अंश गरोहबन्दियों में नष्ट होता है।

धर्म की स्थापना

(1) हज़रत जाबिर बिन-समुरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"यह दीन निरन्तर क़ायम रहेगा और मुसलमानों का एक गरोह इसपर लड़ता रहेगा यहाँ तक कि क़ियामत आ जाएगी।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् ऐसा कभी न होगा कि धर्म और उसकी अपेक्षाओं और उसके आदेशों को पूरा मुस्लिम समुदाय भुला बैठे। एक गरोह धर्म के स्थायित्व और विकास के लिए निरन्तर प्रयासरत रहेगा। ऐसा कभी न होगा कि सत्य-धर्म एक भूली-बिसरी कहानी बनकर रह जाए। सत्य-धर्म एक जीवन्त धर्म है और सदैव जीवन्त रहेगा। यह वह रौशनी है जो कभी नहीं बुझेगी। समय और परिस्थितियों के अनुसार मुसलमानों का एक गरोह धर्म के लिए क़ियामत तक जान तोड़ कोशिश करता रहेगा। सत्य-धर्म की रौशनी को कोई भी कालिमा ढक न सकेगी। लोग इस रौशनी से लाभान्वित हों या न हों, यद्यपि वे अपनी आँखे बन्द कर लें और अन्धकार की पूजा करने लगें, किन्तु सत्य के प्रकाश को कभी भी ग्रहण नहीं लग सकता। यही अभिप्राय है नबी (सल्ल०) के इस कथन का कि "धर्म निरन्तर क़ायम रहेगा और इसमें व्यवधान उत्पन्न न होगा।"

(2.) हज़रत जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना कि–

"मेरे समुदाय का एक गरोह सदैव सत्य के लिए लड़ता रहेगा, वह (अल्लाह के दीन पर) क़ायम रहेगा। यह सिलसिला क़ियामत तक जारी रहेगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के दीन पर अर्थात् उसके आदेश और उसके हुक्म पर क़ायम रहेगा। उसकी उपेक्षा नहीं करेगा। एक गरोह धर्म और उसकी अपेक्षाओं को भली-भाँति समझता होगा। उसकी कार्यनीति और उसके कार्यक्रम उन्हीं अपेक्षाओं के अन्तर्गत निश्चित होंगे।

(3.) हज़रत उमैर-बिन-हानी कहते हैं कि मैंने हज़रत मुआविया

(रज़ि॰) को मिम्बर पर यह कहते हुए सुना। वे कह रहे थे कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना है कि—

"मेरे समुदाय का एक गरोह सदैव अल्लाह के आदेश पर क़ायम रहेगा। जो इस गरोह की सहायता से हाथ खींच लेगा या उसका विरोध करेगा वह उनका कुछ भी न बिगाड़ सकेगा। यहाँ तक कि अल्लाह का आदेश आ पहुँचेगा और वे लोगों पर प्रभावी रहेंगे।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् इस गरोह को कोई विरोध और दुश्मनी उसके अपने मार्ग से हटा नहीं सकती। सत्य के बोल को असत्य का बोल कभी भी परास्त न कर सकेगा। सत्य की आवाज़ हमेशा ऊँची रही है और ऊँची होती रहेगी। सत्य-मार्ग में जान की बाज़ी लगानेवाले ही हमेशा सफल और प्रतिष्ठित रहे हैं और सफल रहेंगे।

रसूल (सल्ल०) की हदीस और हमारा जीवन

जगत् का रब

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने कहा—

"अल्लाह धरती को क़ियामत के दिन अपनी मुट्ठी में ले लेगा और आसमान को अपने दाएँ हाथ में लपेट लेगा। फिर कहेगा : 'मैं बादशाह हूँ, धरती के बादशाह कहाँ हैं?"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में अल्लाह की महानता और उसके प्रताप का चित्रण किया गया है। आज साधारणतः उसकी महानता का एहसास लोगों को नहीं होता। लेकिन क़ियामत के दिन दुनिया देख लेगी कि बड़ाई और महानता वास्तव में अल्लाह ही के लिए है। उस दिन दिखाई देगा कि आकाश और धरती उसी के अधिकार में हैं। धरती उसकी मुट्ठी में होगी और आकाश रूमाल की तरह उसके हाथ में लिपटे हुए होंगे। हर चीज़ पर उसका प्रभुत्व होगा। मन्द बुद्धिवालों का यह भ्रम दूर हो जाएगा कि ईश्वर के अतिरिक्त भी शासन और बादशाही का अधिकारी कोई और हो सकता है। किसी ऐसे व्यक्ति को दम मारने का साहस न होगा जिसकी बादशाही का दुनिया में डंका बजता था। अल्लाह कहेगा कि बादशाह और शासक तो मैं हूँ। दुनिया में बादशाह बननेवाले कहाँ हैं? क़ुरआन में भी है कि "उन्होंने अल्लाह की क़द्र न जानी जैसी क़द्र उसकी जाननी चाहिए थी। हालाँकि क़ियामत के दिन सारी-की-सारी धरती उसी की मुट्ठी में होगी और आकाश उसके दाएँ हाथ में लिपटे हुए होंगे। महान और उच्च है वह उससे जो साझी वे ठहराते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-67)

संसार में यदि किसी को सत्ता प्राप्त है तो इसका अर्थ यह कदापि नहीं होता कि वह निरंकुश बनकर रहे। उसका कर्तव्य यह होता है कि वह अपने राज्य में ईश्वर के आदेशों को लागू करे। धरती को ज़ुल्म और अत्याचार से मुक्त रखे। लोगों की भलाई और उनके कल्याण की योजना बनाए और उसको व्यवहार में लाए। ज़रूरतमन्दों की मदद की ओर से आँख बन्द न रखे। लोगों को अल्लाह की महानता और उसके प्रताप से परिचित कराए और स्वयं भी अल्लाह के आगे झुका रहे। उसकी पकड़ की आशंका से हमेशा काँपता और डरता रहे।

(2) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) कहा करते थे—

"(ऐ अल्लाह!) मैं तेरी शक्ति और प्रभुत्व की शरण चाहता हूँ, तू वह है कि तेरे सिवा कोई पूज्य नहीं। तुझे मृत्यु नहीं आने की, जबकि सभी जिन्नों और मनुष्यों को मरना है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में इस तथ्य को व्यक्त किया गया है कि अल्लाह के सिवा कोई दूसरा पूज्य नहीं। वह जीवन्त सत्ता है। रहे जिन्न और मुनष्य तो ये सब मरनेवाले हैं। इन सबको मौत आनी है। इसी लिए बुद्धिमत्ता की बात यही है कि मनुष्य एक ईश्वर से उसकी शरण का इच्छुक हो। अल्लाह के मुक़ाबले में कोई नहीं जो किसी को तबाही और विनाश से बचाकर वास्तविक सफलता तक पहुँचा सके।

(3) हज़रत अबू-मूसा अशअरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"कोई भी कष्टदायी बात सुनकर अल्लाह से बढ़कर धैर्य से काम लेनेवाला नहीं। लोग दावा करते हैं कि वह औलाद रखता है फिर भी वह उन्हें सुरक्षा, सलामती और आजीविका प्रदान करता है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अल्लाह बड़ा ही सहनशील है। वह चाहे तो उन अवज्ञाकारियों को, जिन्हें अल्लाह के हक़ और उनकी महानता एवं प्रतिष्ठा का कुछ भी आदर नहीं, एक क्षण में नष्ट कर दे। किन्तु वह धैर्य से काम लेता है। और यही नहीं कि वह ऐसे लोगों को तुरन्त ही नष्ट नहीं करता बल्कि उन्हें आजीविका और सुरक्षा भी प्रदान करता है, जिससे सरकश लोगों की सरकशी और अज्ञान और बढ़ जाता है। अल्लाह की सहनशीलता का प्रदर्शन मानव-इतिहास में निरन्तर होता रहा है। लेकिन अल्लाह की दी हुई मोहलत और अवसर जब समाप्त हो जाता है तो फिर अल्लाह के अवज्ञाकारियों और सरकशों को उसके प्रकोप से कोई नहीं बचा सकता। लोगों को मोहलत देने का जो ईश्वरीय विधान है उससे लोग धोखे में पड़ जाते हैं। वे समझने लगते हैं कि वे धरती में जो चाहें करें और जिस तरह चाहें दनदनाते फिरें। उन्हें पकड़नेवाला कोई नहीं। किन्तु फ़ैसले का समय बता देता है कि यह उनका भ्रम है जिसमें वे जीवन भर पड़े रहते हैं और किसी अन्य को नहीं स्वयं अपने-आपको निरन्तर धोखे में रखते हैं।

(4) हज़रत सफ़वान-बिन-मुहर्रज़ से उल्लिखित है कि एक व्यक्ति ने हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि.) से पूछा कि आपने सरगोशी के सम्बन्ध में अल्लाह के रसूल (सल्ल.) से किस तरह सुना है? उन्होंने कहा कि आप (सल्ल.) ने कहा—

> "तुममें से एक व्यक्ति अपने रब के निकट होगा यहाँ तक कि वह अपना हाथ उसपर रख कर कहेगा कि तुमने अमुक और अमुक काम किए थे? वह कहेगा कि हाँ। वह पूछेगा कि तुमने अमुक और अमुक कार्य किए थे? वह कहेगा कि हाँ। इस स्वीकार्य के पश्चात वह (अल्लाह) कहेगा कि मैंने दुनिया में तेरे गुनाहों पर परदा डाला, आज मैं उन्हें क्षमा कर देता हूँ। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अल्लाह लोगों की बुराइयों पर परदा डालता है।

आदमी यदि गुनाहों से सच्चे दिल से तौबा कर ले तो अल्लाह उसके गुनाहों को क्षमा कर देता है और उसे अपने नेक बन्दों में शामिल कर लेता है। यह हदीस बताती है कि अल्लाह का एक विशेष गुण यह भी है कि वह गुनाहों पर परदा डालता और पापी या गुनाहगार को बदनामी और अपमान से बचाता है। यह और बात है कि कोई स्वयं ही निरन्तर अल्लाह की अवज्ञा करता रहे और गुनाहों में पड़ा रहे और उसे अपने अपमान और रुसवाई की कोई चिन्ता न हो। इस प्रकार यदि किसी के हिस्से में रुसवाई और तिरस्कार आता है तो इसका कारण वह स्वयं है, कोई और नहीं।

(5) हज़रत मुग़ीरा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

"अल्लाह से बढ़कर किसी को अपनी प्रशंसा प्रिय नहीं, इसी लिए अल्लाह ने जन्नत का वादा किया है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है। इस हदीस में कहा गया है कि अल्लाह स्वाभिमानी है। इसी लिए उसने अश्लील कामों को चाहे वे खुले हों या छिपे, अवैध ठहराया है। अल्लाह से बढ़कर कोई उज़्र (बहाना) को महत्व देनेवाला नहीं। इसी लिए उसने नबियों को शुभ-सूचक और सावधान करनेवाला बनाकर भेजा, ताकि लोग अल्लाह के सामने यह उज़्र न पेश कर सकें कि किसी ने सत्य-मार्ग से उन्हें अवगत नहीं कराया। फिर हम सत्य-मार्ग का अनुपालन कैसे कर सकते थे। फिर वह बात बयान की गई है जो यहाँ उद्धृत की गई है कि अल्लाह से बढ़कर किसी को अपनी प्रशंसा प्रिय नहीं। इसी लिए उसने उन लोगों के लिए जन्नत का वादा किया है जो उसकी प्रशंसा और स्तुति करते हैं। समस्त प्रशंसा अल्लाह के लिए है। यह सबसे बड़ा सत्य है। जीवन में इससे बड़ी किसी उपलब्धि (Finding) की कल्पना भी हम नहीं कर सकते। सबसे अन्तिम और महावाक्य जिसे

कहा जा सकता है उसी से क़ुरआन ने अपना आरम्भ किया है कि "समस्त प्रशंसा अल्लाह जगत् के प्रभु के लिए है।" सम्पूर्ण क़ुरआन का सारांश क़ुरआन की यही पहली आयत है। समस्त प्रशंसा का अधिकारी अल्लाह है, उसका समकक्ष कोई नहीं। इस महावाक्य से शिर्क अथवा बहुदेववाद और दुर्भाग्य की सभी जड़ें कट जाती हैं। जब कोई व्यक्ति पूरी समझ और चेतना के साथ अल्लाह की प्रशंसा करता है तो इसका अर्थ यह होता है कि उसने अपने रब को पहचान लिया। और अब उसके लिए यह सम्भव नहीं कि वह अल्लाह से बेपरवाह होकर जीवन व्यतीत कर सके। जिसने अल्लाह ही को न जाना उसके विषय में यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि उसने सत्य और सत्मार्ग को पा लिया। जिसने अल्लाह को जाना अनिवार्यतः उसे अल्लाह से प्रेम होगा और फिर अल्लाह ही उसके लिए सबसे बढ़कर प्रिय होगा। अल्लाह ही जीवन और सौन्दर्य का स्रोत है। प्रेम के कारणों में सौन्दर्य को अन्य गुणों की अपेक्षा मौलिक महत्त्व प्राप्त है।

(6) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"जब अल्लाह ने सृष्टि की रचना की तो अपनी किताब में लिखा अर्थात् वह अपने विषय में लिखता है— और वह किताब उसके पास अर्श पर रखी है— मेरी दयालुता मेरे प्रकोप पर प्रभावी है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : सृष्टि के आरम्भ से ही अल्लाह की नीति यही रही है कि उसने अपनी दयालुता को अपने प्रकोप पर प्रभावी रखा। उसकी दयालुता अपार है। उसकी दयालुता के चिह्न जगत् में चतुर्दिक देखे जा सकते हैं। ज़ालिम क़ौमों को भी अल्लाह सँभलने और अपनी ज़ुल्म की नीति को बदलने का पूरा अवसर प्रदान करता है। इसे उसकी दयालुता के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है। किसी

जाति या क़ौम पर उसका प्रकोप उस समय टूटता है जब उस क़ौम का ज़ुल्म या सरकशी इस सीमा को पहुँच जाती है कि उसका मिटा देना अवश्यम्भावी हो जाता है।

(7) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "प्रतापवान अल्लाह कहता है कि 'मैं अपने बन्दे के गुमान (विचार) के साथ हूँ जो वह मेरे विषय में रखता है, और मैं उसके साथ होता हूँ जब वह मुझे याद करता है। जब वह मुझे अपने मन में याद करता है तो मैं भी उसे अपने मन में याद करता हूँ। और यदि वह मुझे किसी जनसमूह में याद करता है तो मैं उसे उससे उत्तम समूह में याद करता हूँ। यदि वह मुझसे एक बालिश्त निकट होता है तो मैं उससे एक गज़ निकट होता हूँ और यदि वह मुझसे एक गज़ निकट होता है तो मैं उससे दोनों हाथों के फैलाव के बराबर निकट होता हूँ। और यदि वह मेरी ओर चलकर आता है तो मैं उसकी ओर दौड़कर आता हूँ।"
>
> (हदीसः बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में इस बात का जीता-जागता चित्र प्रस्तुत किया गया है कि अल्लाह का अपने बन्दों से कितना गहरा सम्बन्ध है। मौलिक बात इस हदीस में यह कही गई है कि अल्लाह कहता है कि "मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ, जो मेरे विषय में वह रखता है।" बन्दे का धारणा और व्यवहार की दृष्टि से जैसा मामला अपने अल्लाह के साथ होगा अल्लाह का भी अपने बन्दे के साथ वैसा ही व्यवहार होगा। अतएव 'मुस्लिम' और 'अहमद' की एक हदीस में ये शब्द प्रयुक्त हुए हैं, "मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ। यदि वह (मेरे साथ) अच्छा गुमान रखता है तो यह उसी के लिए अच्छा है। और यदि वह (मेरे साथ) बुरा गुमान रखता है तो यह उसी के लिए बुरा होगा।"

मानव-जीवन दो प्रकार का होता है। एक को हम ईशपरायणता का जीवन कहते हैं। दूसरा जीवन वह है जो ईश्वर से बेपरवाह और विलग होकर व्यतीत किया जाए और जीवन प्रणाली और जीवन के सिद्धान्त एवं नियम निश्चित करने में ईश्वर की इच्छा और उसके आदेशों का कोई ध्यान न रखा जाए। इन दो प्रकार के जीवन के परिणाम दुनिया और आख़िरत में कभी समान नहीं हो सकते। इस तथ्य को एक संग्राहक वाक्य में बयान किया गया है कि मैं अपने बन्दे के गुमान के साथ हूँ जो वह मेरे विषय में रखता है। इस वाक्य के अर्थ में वह बात भी सम्मिलित है जो इस हदीस में बयान की गई है कि बन्दा यदि अपने रब को याद करता है तो उसका रब भी उसे याद करता है। वह यदि अपने रब की ओर बढ़ता है तो उसका रब उससे कहीं अधिक तीव्र गति से उसकी ओर बढ़ता और उसके निकट होता है।

(8) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "बरकतवाला उच्च अल्लाह कहता है कि 'मैं साझेदारी में सभी साझेदारों से बढ़कर बेपरवाह हूँ। जिस किसी व्यक्ति ने ऐसा कर्म किया कि उसने मेरे साथ किसी को साझी ठहराया तो मैं उसे और उसकी इस साझेदारी को त्याग देता हूँ'।"
>
> (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् बहुदेववाद को अल्लाह कभी पसन्द नहीं कर सकता। वह चाहता है कि उसके बन्दे केवल उसी की बन्दगी में अपना जीवन व्यतीत करें, उसी के आगे झुकें, उसी से आशाएँ रखें और उनकी कामनाओं का सम्बन्ध भी उसी से हो। अपने जीवन में किसी को वह स्थान न दें जो स्थान वास्तव में केवल अल्लाह के लिए है। अल्लाह के अतिरिक्त जो भी हैं वे उसी के पैदा किए हुए हैं और उन सबका पालनकर्ता अल्लाह ही है। वे न स्रष्टा हो सकते हैं और न रब हो सकते हैं। और न उन्हें अपना पूज्य और प्रभु बनाया जा

सकता है। अतः यह घोर अन्याय होगा कि हम अल्लाह के ईश्वरत्व, उसके गुण और उसके अधिकार में दूसरों को साझीदार ठहराएँ और यह समझें कि अल्लाह के अतिरिक्त कोई दूसरा भी हमारा कार्यसाधक हो सकता है। अल्लाह के अतिरिक्त कोई और भी हो सकता है जिसके प्रति हम अपने भक्ति-भाव को व्यक्त करें और जो हमारे शौक़ और कामनाओं का केन्द्र बन सके। क़ुरआन ने स्पष्ट शब्दों में शिर्क और बहुदेववाद को घोरतम अन्याय ठहराया है और कहा कि ईश्वर शिर्क को कदापि क्षमा नहीं कर सकता। बहुदेववादी सदैव के लिए अल्लाह की रहमत और उसकी दया से दूर होगा। अल्लाह के स्वाभिमान के प्रतिकूल है कि वह बहुदेववादी पर कृपा और अनुकम्पा के साथ दृष्टिपात करे।

चेतना और अनुभूति

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अबू-क़ासिम (मुहम्मद सल्ल॰ का उप-नाम) ने कहा—

"उसकी क़सम जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं! यदि तुम जान जाओ जो मैं जानता हूँ तो रोओ अधिक और हँसो कम।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मनुष्य को जिस परीक्षा में डाला गया है और आनेवाली दुनिया में जो कुछ सामने आनेवाला है यदि उसका एहसास और पूरा ज्ञान किसी को हो जाए तो वह कभी भी सत्य-विरोधी बनकर दुनिया में नहीं रह सकता। फिर तो जो आशंका और भय उसे होगा वह कभी उसे चैन और आराम से रहने न देगा। उसे सबसे अधिक चिन्ता अपनी आख़िरत की होगी। ईश्वर के प्रकोप का ख़याल उसे तड़पा देगा। वह जानता है कि अल्लाह निस्पृह है। आख़िरत में अपराधियों का सहायक कोई भी न होगा और न किसी की कोई सिफ़ारिश ज़ालिमों के काम आ सकती है। वर्तमान जीवन के पश्चात् जो कुछ सामने आनेवाला है उसका ज्ञान और उसका जीवन्त एहसास

जो नबी को प्राप्त होता है वह यदि किसी अन्य व्यक्ति को प्राप्त हो जाए, तो निस्सन्देह उसकी हँसी कम-से-कम हो जाएगी और उसकी आँखें आँसू ही बहाया करेंगी।

(2) हज़रत शद्दाद-बिन-औस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"बुद्धिमान वह है जिसने अपने-आपको नियन्त्रण में रखा और मृत्यु के पश्चात आनेवाले जीवन के लिए कर्म किए। और अयोग्य एवं असमर्थ वह है जिसने अपनी तुच्छ इच्छाओं का पालन किया और अच्छी कामनाएँ अल्लाह से कीं।" (हदीस : तिनमिज़ी)

व्याख्या : साधारणतः लोग अपनी तुच्छ इच्छाओं और वासनाओं के पीछे पड़े रहते हैं और उनके जीवन के क़ीमती दिन यूँ ही गुज़र जाते हैं। आख़िरत की सफलता की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता। अस्थाई जीवन के पीछे अपने शाश्वत जीवन को विनष्ट करनेवाले व्यक्ति को कोई भी बुद्धिमान नहीं कह सकता और वह व्यक्ति तो अत्यन्त अभागा और मूर्ख होगा जो अल्लाह से हटकर अपनी तुच्छ इच्छाओं के पालन में लगा रहता हो और अल्लाह से यह आशाएँ रखता हो कि वह उसे अपने यहाँ उत्तम-से-उत्तम स्थान प्रदान करेगा। मानो अल्लाह की अनुकम्पाएँ उसकी प्रतीक्षा में हैं। किसी व्यक्ति को भी इस प्रकार के भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। अल्लाह के यहाँ जो चीज़ काम आनेवाली है वह मनुष्य का ईमान और उसके अच्छे कर्म हैं। बुद्धिमान और समझदार व्यक्ति वही है जिसका जीवन अल्लाह के आज्ञापालन में व्यतीत होता हो और जो अल्लाह के भय से सदैव काँपता और डरता रहता हो।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"जिसे (रात के अन्तिम भाग में दुश्मन की ग़ारतगरी का) भय होता है वह रात के पहले हिस्से में चल खड़ा होता है

और जो व्यक्ति रात के आरम्भ में निकल खड़ा होता है वह मंज़िल पर पहुँच जाता है। सुन लो, अल्लाह का धन अत्यन्त मूल्यवान है। सुन लो, अल्लाह का धन जन्नत है।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस में एक उदाहरण के द्वारा समझाया है कि मनुष्य को कभी भी असावधान होकर जीवन व्यतीत नहीं करना चाहिए। दुश्मन यदि रात की अन्तिम बेला में क़ाफ़िले पर आक्रमण करना चाहता है तो क़ाफ़िलेवालों को रात के आरम्भ ही में आगे बढ़ जाना चाहिए। इस तरह क़ाफ़िला अपनी मंज़िल पर पहुँच सकता है और लुटेरा दुश्मन उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता। अल्लाह ने अपने बन्दों से जिस विशेष निधि का वादा किया है, शैतान और शैतानी मनोवृत्ति रखनेवाले उनके शत्रु उससे वंचित करने के प्रयास में लगे रहते हैं। वे चाहते हैं कि ईशपरायणता और अल्लाह की बन्दगी के मुक़ाबले में स्वार्थपरता और दुनिया की चाहत ही लोगों की जीवन-शैली हो। नबी (सल्ल॰) हमें सावधान कर रहे हैं कि अल्लाह ने अपने आज्ञाकारी बन्दों के लिए जिस विशेष निधि को प्रदान करने का वचन दिया है उससे बढ़कर मूल्यवान वस्तु सम्भव नहीं। वह विशिष्ट निधि जन्नत है। कहीं ऐसा न हो कि शत्रु तुम्हें इस जन्नत से वंचित कर दे और विनाश के अतिरिक्त और कुछ भी तुम्हारे हिस्से में न आ सके। इसलिए अल्लाह की विशिष्ट निधि को प्राप्त करने में कदापि सुस्ती से काम नहीं लेना चाहिए। बिना किसी विलम्ब के उसके प्राप्त करने के प्रयास में लग जाना चाहिए।

(4) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"मैंने नरक की अग्नि जैसी कोई चीज़ नहीं देखी कि जिससे भागनेवाला सोता रहे और जन्नत के सदृश कोई चीज़ नहीं देखी कि उसके चाहनेवाला सोता रहे।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : अर्थात् यह कितनी आश्चर्य की बात है कि नरक की आग जो अत्यन्त विनाशकारी है और अपनी उग्रता और भयानकता में सबसे बढ़कर है, लोग उससे बचने और उससे दूर भागने की कोशिश नहीं करते। इसी प्रकार यह भी किसी आश्चर्य से कम नहीं कि जन्नत, जिससे प्रिय किसी अन्य चीज़ की कल्पना भी नहीं की जा सकती और जिसकी इच्छा और जिसे प्राप्त करने के सिलसिले में सुस्ती से काम लेने की कोई गुंजाइश नहीं, किन्तु उसकी ओर से वे लोग बेपरवाह और ग़ाफ़िल दिखाई देते हैं जिसके लिए वह जन्नत बनाई गई है। जन्नत जो समस्त अपेक्षित विशेषताओं, आनन्द और सौभाग्य का केन्द्र-बिन्दु है, फिर भी उसके पाने के प्रयास में जीवन लगा देने की अपेक्षा लोग क्षणिक ख़ुशियों और चाहतों के पीछे दीवाने दिखाई देते हैं और उन्हें इसका एहसास भी नहीं होता कि वे क्या कर रहे हैं।

नरक की आग से बचने और उससे दूर भागने का अभिप्राय यह है कि आदमी गुनाह और पाप से दूर रहे और जीवन से यह सिद्ध करे कि वह अल्लाह को जानता और उससे डरता है। अल्लाह के आज्ञापालन और उसकी बन्दगी को अपने लिए अनिवार्य ठहराए। जन्नत पाने के लिए प्रयत्नशील रहने का अर्थ यह है कि मनुष्य अल्लाह और उसकी प्रसन्नता को हर चीज़ के मुक़ाबले में प्राथमिकता दे। गुनाह और अल्लाह की अवज्ञा से बचता रहे। अल्लाह के आज्ञापालन के कामों में अग्रसर रहे और इस सिलसिले में किसी प्रकार की सुस्ती से काम न ले।

जीवन-शैली और धर्म

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि जब भी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हमें सम्बोधित किया तो अनिवार्यतः उसमें आप (सल्ल॰) ने कहा—

"उस व्यक्ति में ईमान नहीं है जिसमें अमानतदारी न हो

और वह व्यक्ति अधर्मी है जो अपने वचन और प्रतिज्ञा का पाबन्द न हो।" (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : ज्ञात हुआ कि दीन या धर्म वास्तव में नाम है नैतिकता और चरित्र का। इसी लिए नबी (सल्ल॰) ने कहा है कि "मैं केवल इसलिए भेजा गया हूँ कि मैं नैतिक गुणों को चरम तक पहुँचा दूँ।" इस्लाम ने मानवीय शील-स्वभाव का सम्बन्ध ईमान से स्थापित किया है, जिसके कारण मानवीय नैतिकता को वह शक्ति प्राप्त हुई साधारण व्यक्ति जिसकी कल्पना भी नहीं कर सकता। इस्लाम ने नैतिक समस्या को ईमान की समस्या बनाकर दुनिया के सामने प्रस्तुत किया। फिर चरित्र और नैतिकता को सीमित अर्थों में न लेकर उसे अत्यन्त व्यापक अर्थों में प्रयुक्त किया है और सम्पूर्ण जीवन-व्यवस्था तथा नियम एवं सिद्धान्त को नैतिकता के अन्तर्गत रखा है। इस्लाम का यह वह महान कार्य है जिसका एहसास बहुत कम लोगों को होता है।

इस हदीस में कहा गया है कि किसी में अमानतदारी न हो अर्थात् उसपर भरोसा न किया जा सकता हो तो उस व्यक्ति का ईमान का दावा करना कोई अर्थ नहीं रखता। इसी तरह अपने दिए हुए वचन को पूरा करना ही दीन है। जो व्यक्ति अपने दिए हुए वचन और अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करने में असमर्थ दिखाई दे उसका धर्म से कोई सम्बन्ध नहीं हो सकता। यह सीधी-सीधी बात अत्यन्त क्रान्तिकारी है। सत्य यह है कि धर्म मात्र कुछ रीति-रिवाजों के पालन करने का नाम नहीं है, बल्कि धर्म अपनी मूल आत्मा की दृष्टि से एक उच्चतम चरित्र है।

(2) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"मोमिन सदैव अपने धर्म के मामले में कुशादगी में रहता है (तंगी में नहीं रहता।), जब तक वह नाहक़ ख़ून न करे।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : दीन और धर्म का एक विशेष गुण यह है कि उसमें किसी प्रकार की तंगी और संकीर्णता नहीं पाई जाती। कुशादगी, उदारता और सहजता धर्म का मूल गुण है। धर्म में जो आसानी और कुशादगी पाई जाती है हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उसका हाल सुनकर एक अवसर पर एक सहाबी हज़रत ग़ुज़ैब-बिन-हारिस पुकार उठे, "अल्लाहु-अकबर, समस्त प्रशंसा अल्लाह ही के लिए है जिसने दीन के मामले में कुशादगी पैदा की।" (हदीस : अबू-दाऊद) यह दीन या धर्म आया ही इसलिए है कि लोगों को हर प्रकार की तंगी और उन अनुचित बन्धनों से मुक्त करे जिनमें अज्ञान ने लोगों को जकड़ रखा था और उन्हें हर प्रकार की साम्प्रदायिकता और विनाशकारी कार्यों से दूर रखे और मानवों को उस जीवन-व्यवस्था से परिचित कराए जिसमें समस्त मानवों का आदर और उनके अधिकारों की सुरक्षा की गारंटी दी गई है, जिसमें वर्ण और जाति के विभेद तथा भाषा, क्षेत्र और देश सम्बन्धी पक्षपात की कोई गुंजाइश नहीं पाई जाती। कुशादगी और उदारता जिसका स्पष्ट गुण है। यह अलग बात है कि कोई व्यक्ति स्वयं ही कोई ग़लत काम करके अपने को तंगी में डाल ले। उदाहरणार्थ, नाहक़ किसी की हत्या करके अपराधी हो जाए और फिर उसे अपने अपराध का दण्ड भुगतना पड़े। अपराधियों और अत्याचारियों को यदि उनके अपराध और अत्याचार का दण्ड न दिया जाए तो समाज में शान्ति शेष नहीं रह सकती।

(३) हज़रत तमीम दारी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा, "धर्म शुभेच्छा (ख़ैरख़ाही) का नाम है।" यह बात आप (सल्ल॰) ने तीन बार कही। हमने पूछा कि यह शुभेच्छा किसके लिए है? तो नबी (सल्ल॰) ने कहा, "अल्लाह के लिए, उसकी किताब के लिए, उसके रसूल के लिए, मुसलमानों के इमामों के लिए और सामान्य मुसलमानों के लिए।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस धर्म के महत्त्वपूर्ण पहलू को उजागर करती है। नबी (सल्ल॰) ने कहा कि धर्म सर्वथा शुभेच्छा है। धर्म में अभिहित यह है कि लोग ऐसे स्वार्थी बनकर कदापि न रहें कि उन्हें दूसरों की भलाई से कोई लगाव न हो। लोगों में परस्पर सम्पर्क और सम्बन्ध होना चाहिए और इसके पीछे शुभेच्छा की भावना क्रियाशील हो। वे अल्लाह और उसके रसूल के वफ़ादार हों, उन्हें अल्लाह की किताब की प्रतिष्ठा और उसके प्रति अपने कर्तव्यों का ज्ञान हो। सामूहिक और सामाजिक जीवन में उनकी जो ज़िम्मेदारियाँ होती हैं उनकी तरफ़ से भी वे ग़ाफ़िल न हों। राज्याधिकारियों से लेकर सामान्य नेताओं, धर्मज्ञाताओं और इमामों तक के लिए उनके दिल में शुभेच्छा की भावना पाई जाती हो। सामान्य मुसलमान भी उनकी दृष्टि से ओझल न रहें। उनकी भलाई की भी उन्हें चिन्ता हो।

(4) हज़रत अबू-सईद (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने नबी (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना—

> "लोगों पर एक ऐसा समय आएगा कि मुसलमान व्यक्ति का उत्तम माल बकरियों का रेवड़ होगा जिसे लेकर वह पहाड़ियों की चोटि पर और वर्षा के स्थानों पर चला जाएगा। इस प्रकार वह अपने धर्म को आपदाओं से बचाकर निकल भागेगा।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि दीन या धर्म मानव-जीवन की वास्तविक निधि है। धर्म से बढ़कर किसी मूल्यवान वस्तु की कल्पना भी नहीं की जा सकती। धर्म का वास्तविक सम्बन्ध मनुष्य की हृदय-दृष्टि और उसकी भावनाओं और धारणाओं से है। फिर धर्म की अपेक्षा यह है कि मनुष्य का जीवन शिर्क और बहुदेववाद और हर प्रकार की अश्लीलता और बुराई से मुक्त हो। धर्म उसकी दृष्टि से संसार की प्रत्येक वस्तु से बढ़कर प्रिय हो, यहाँ तक कि अपने प्राण के मुक़ाबले में भी धर्म उसे अधिक प्रिय हो। धर्म का अभिप्राय है अल्लाह से सम्बन्ध और उससे आत्यान्तिक प्रेम। मोमिन व्यक्ति इस

सम्बन्ध और प्रेम को कभी और किसी दशा में भी त्याग नहीं सकता। इसलिए कि अल्लाह से सम्बन्ध के अभाव में उसकी दृष्टि में जीने का कोई अर्थ ही शेष नहीं रहता। इसलिए यदि उपद्रव इतना बढ़ चुका हो कि अपने धर्म की रक्षा के लिए किसी को नगर और बस्ती छोड़कर पहाड़ों में रहना पड़ जाए, जहाँ मनुष्य अपनी बकरियों के द्वारा अपनी आवश्यकताएँ पूरी करके अपने धर्म की रक्षा कर सके तो उसे पहाड़ों का रुख़ करना चाहिए। फिर बकरियों का रेवड़ ही उसका सबसे उत्तम धन है। इसलिए कि आराम और सुविधा की चिन्ता में यदि धर्म उपद्रव के कारण हाथ से जाता रहा तो यह सुख और सुविधा निरर्थक है। फिर तो मनुष्य को परलोक में अल्लाह की यातना से कोई नहीं बचा सकता।

अभौतिक तथ्य

(1) हजरत अबू-हुरैरा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल०) ने फ़रमाया—

> "बन्दा अपने रब से सबसे निकट उस समय होता है जब वह सजदे में होता है, तो प्रार्थना अधिक किया करो।"
>
> (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : सजदा वास्तव में जीवन की चरम दशा है। सजदा केवल भक्ति और बन्दगी का ही प्रतीक नहीं है, बल्कि यह ईश्वरीय सौन्दर्य पर न्योछावार होने और उससे वास्तविक रूप में आनन्दित होने का स्वाभाविक प्रदर्शन भी है। जब कोई बन्दा सजदे के द्वारा अल्लाह के आगे अपने को नकारता और पूर्णतः अपने-आपको अल्लाह के क़दमों में डाल देता है तो वह अल्लाह के यहाँ उसके असीम अनुग्रह का पात्र ठहरता है। इसलिए जब अल्लाह के आगे सजदे में हों तो अपनी उत्तम कामनाओं और अभिलाषाओं के साथ उसे सजदा करें और अधिक-से-अधिक अपने रब के अनुग्रह के इच्छुक हों। ईश्वर के आगे अपनी चाहत के दामन को तंग न होने दें।

(2) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ मुहाजिर गरोह के फ़क़ीरो, तुम्हारे लिए शुभ-सूचना है क़ियामत के दिन पूर्ण प्रकाश की।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : मनुष्य को संसार में जो धन-सम्बन्धी लाभ प्राप्त होते हैं उन्हीं को सब कुछ समझ लेना मनुष्य की सबसे बड़ी पथ-भ्रष्टता है। जीवन में भौतिकता के अतिरिक्त कुछ और भी है, और वही जीवन की सबसे मूल्यवान चीज़ है। उस मूल्यवान चीज़ को इस हदीस में प्रकाश की संज्ञा दी गई है कि प्रकाश वास्तव में मनुष्य के अपने व्यक्तित्व की आभा है। इसी से मनुष्य का व्यक्तित्व प्रकाशमान होता है। इस आभा और प्रकाश की उपलब्धि समयक चिन्तन और चरित्र की उच्चता से सम्भव होती है। ईश्वर में विश्वास, उससे हार्दिक और आत्मिक सम्बन्ध और उसपर भरोसा तथा जीवन की अर्थवत्ता का ज्ञान मनुष्य को हर प्रकार के अन्धकार से मुक्त करता है। फिर ऐसे व्यक्ति के यहाँ न तो भाव और विचार की दरिद्रता पाई जा सकती है और न उसका जीवन उदासीनता और खिन्नता में ग्रस्त हो सकता है और न उसके यहाँ आनन्द के अभाव की सम्भावना रहती है। ऐसा व्यक्ति सस्ती भावनाओं और तुच्छ विचारों से मुक्त हो जाता है। उसे ज्ञान, दृष्टि और भाव एवं आनन्द का ऐसा संसार प्राप्त हो जाता है जो सर्वथा प्रकाश है। जहाँ अन्धकार का लेश मात्र भी चिह्न नहीं पाया जाता। ऐसे व्यक्ति की उच्चता को समझने में वे लोग असमर्थ रहते हैं जो ऐहिक जीवन के लोभी और भौतिक वस्तुओं को सब कुछ समझने के भ्रम में पड़े होते हैं। व्यक्तित्व के प्रकाश और आभा की पूर्णता की शुभ सूचना देकर नबी (सल्ल॰) ने एक बड़े तथ्य से हमें अवगत कराया है, और वह यह है कि जीवन में सबसे मूल्यवान वस्तु व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व ही है। व्यक्तित्व के जिस प्रकाश का उल्लेख इस हदीस में किया गया है उसे प्राप्त करना और उसे सुरक्षित रखना दोनों ही आवश्यक हैं। ऐसा न हो कि मनुष्य का व्यक्तित्व

आभाहीन हो या उसकी असावधानी के कारण जीवन के किसी चरण में यह प्रकाश बुझ जाए। क़ुरआन में भी इस प्रकाश का उल्लेख किया गया है। उदाहरणार्थ एक स्थान पर ईमानवालों के विषय में कहा गया है कि वे जन्नत के बाग़ों में प्रवेश करेंगे जिनके नीचे नहरें प्रवाहित होंगी और अल्लाह अपने रसूल और उसके अनुयायियों को रुसवाई से सुरक्षित रखेगा। उनका प्रकाश उनके आगे-आगे दौड़ रहा होगा, और वे कह रहे होंगे, "हमारे प्रभु, हमारे प्रकाश को पूर्ण कर दे।" इस प्रकाश के बहुमूल्य और इसके आनन्ददायक होने का हाल यह होगा कि वे सहसा अल्लाह से निवेदन कर रहे होंगे कि हमारे प्रभु हमारा प्रकाश पूर्ण हो यह अपूर्ण न रह जाए। (देखें क़ुरआन, सूरा-66 तहरीम, आयत-8)

सूरा-57 हदीद में ईमानवालों को सिद्दीक़ और शहीद की उपाधि से सम्मानित करते हुए उन्हें यह शुभ सूचना दी गई है कि "उनके लिए उनका प्रतिदान और उनका प्रकाश है।" (आयत-9) अर्थात् अल्लाह के यहाँ उन्हें उनके कर्मों का प्रतिदान तो मिलेगा ही किन्तु उनके व्यक्तित्व का प्रकाश अपने-आप में स्वयं एक ऐसी चीज़ है जो सर्वोपरि है। क्योंकि इसका सम्बन्ध प्रत्यक्षतः मनुष्य के अपने अस्तित्व से है। बल्कि उसके व्यक्तित्व का एक मूल अंश है।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जब भी लोग अल्लाह के स्मरण के लिए बैठते हैं तो फ़रिश्ते उन्हें चारों ओर से घेर लेते हैं और अल्लाह की दयालुता उनपर छा जाती है और उनपर सकीना (प्रशान्ति) का अवतरण होता है और अल्लाह उनका ज़िक्र उनके मध्य करता है जो उसके पास हैं।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के स्मरण और उसके ज़िक्र में बड़ी व्यापकता पाई जाती है। अल्लाह का नाम लेना, उसकी बड़ाई और प्रशंसा करना, धार्मिक अभिभाषण और क़ुरआन का पाठ आदि सब अल्लाह

के स्मरण और उसके ज़िक्र के अन्तर्गत आते हैं। अल्लाह को याद करनेवालों का सामीप्य फ़रिश्तों को भी प्रिय है। वे उन्हें घेर लेते हैं। अल्लाह स्वयं भी अपनी रहमतें उनपर उतारता और इस प्रकार अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता है।

ऐसे लोगों पर सकीना उतरता है। सकीना (Shechina) का उल्लेख पिछले आसमानी ग्रन्थों में भी मिलता है। कतिपय हदीसों से ज्ञात होता है कि सकीना के अवतरण के लक्षण भी कभी-कभी स्पष्ट रूप में महसूस किए गए हैं।

इस हदीस से ज्ञात होता है कि तथ्य और सच्चाइयाँ केवल वही नहीं हैं जिनको भौतिक रूप में हम देखते हैं, बल्कि भौतिकता से हटकर भी ऐसे तथ्य हैं जिनसे हमारे जीवन का सम्पर्क हो सकता है। यह अलग बात है कि हम उनको उस प्रकार महसूस न कर सकें जिस प्रकार दूसरी सामान्य भौतिक चीज़ों को महसूस करते हैं।

हदीस की यह सूचना कि अल्लाह अपने स्मरण करनेवालों का ज़िक्र फ़रिश्तों और पुण्यात्माओं के मध्य करता है, एक बड़ी सूचना है। वास्तव में बन्दे के लिए श्रेय और श्रेष्ठता की इससे बड़ी बात कोई दूसरी नहीं हो सकती।

(4) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "तुमसे पहले बनी-इसराईल में ऐसे लोग हुए हैं जिनसे (अल्लाह की ओर से) बात की जाती थी, यद्यपि वे नबी नहीं होते थे। मेरे समुदाय में यदि ऐसे कुछ लोग होंगे तो उनमें से एक उमर होंगे।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से इस बात की पुष्टि होती है कि अल्लाह के बन्दों में से नबियों के अतिरिक्त भी कुछ ऐसी विभूतियाँ हुई हैं और हो सकती हैं जिन्हें आत्मिक रूप से परोक्ष से वार्ता का श्रेय प्राप्त हो। ज्ञात हुआ कि नबियों के समय के व्यतीत हो जाने के पश्चात् भी अल्लाह का सम्बन्ध दुनिया से कट नहीं जाता। वह

मार्गदर्शन की व्यवस्था करता है और कुछ विशिष्ट एवं योग्य व्यक्तियों पर उसका विशेष अनुग्रह भी हो सकता है। इस हदीस की पुष्टि बुख़ारी की एक अन्य हदीस से भी होती है। बुख़ारी की रिवायत में है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा, "तुमसे पहले के समुदायों में कुछ लोग मुहद्दस होते थे। मेरे समुदाय में यदि कोई व्यक्ति ऐसा है तो वह निश्चय ही उमर-बिन-ख़त्ताब हैं।" मुहद्दस से अभिप्रेत ऐसा व्यक्ति है जो नबी तो न हो लेकिन उसे इलहाम होता हो। अर्थात् आत्मिक रूप से ग़ैब से उसे वार्ता का श्रेय प्राप्त हो। उसके दिल में अल्लाह की ओर से कुछ बातें डाली जाती हों। इस प्रकार उस व्यक्ति के फ़ैसले और परामर्श सत्यानुकूल होते हों। हम देखते हैं कि हज़रत उमर (रज़ि॰) में यह विशेषता स्पष्टतः पाई जाती थी।

(5) हज़रत सौबान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "भाग्य को प्रार्थना के अतिरिक्त कोई चीज़ बदल नहीं सकती और आयु को कोई चीज़ नहीं बढ़ाती नेकी के सिवा। और मनुष्य गुनाह के कारण, जो उसने किया हो, आजीविका से वंचित कर दिया जाता है।"
>
> (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : यह हदीस हमें सावधान करती है कि संसार में केवल भौतिक कार्यकारण ही क्रियाशील नहीं है बल्कि प्रार्थना और नेकी अर्थात् आध्यात्मिक और अलौकिक चीज़ों का भी जीवन पर स्पष्टतः प्रभाव पड़ता है। दुआ और प्रार्थना से बिगड़नेवाली बात बन सकती है। अल्लाह उसके लिए अच्छा फ़ैसला कर सकता है। उसे बुराई और परेशानी से बचा सकता है। आयु में अभिवृद्धि केवल स्वास्थ्यवर्धक भोजन और स्वास्थ्यरक्षक नियमों के पालन ही से नहीं होती। इसमें आदमी की नेकियों और पुण्य कामों का भी विशेष हिस्सा होता है। इसी प्रकार गुनाह पाप और अपने अत्याचार के कारण मनुष्य आजीविका से भी वंचित हो सकता है।

(6) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"सदक़ा करने से धन में कमी नहीं होती, किसी बन्दे के क्षमा और शान्ति से काम लेने से अल्लाह अनिवार्यतः उसकी इज़्ज़त को बढ़ाता है और अल्लाह के लिए नम्रता का भाव अपनाने से अनिवार्यतः अल्लाह उसे उच्चता प्रदान करता है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस हमें समयक दृष्टिकोण प्रदान करती है। दान करने से देखने में माल कम हो जाता है, किन्तु ऐसा नहीं है। दान से अल्लाह माल में बरकत और आदमी के कारोबार को उन्नति देता है। कोई व्यक्ति यदि सामर्थ्य रखते हुए किसी को क्षमा कर देता है या उससे बदला नहीं लेता और जिस किसी ने उसपर अत्याचार किया हो उसे क्षमा कर देता हो तो अल्लाह उसकी विशाल हृदयता के कारण उसकी इज़्ज़त और सम्मान को बढ़ा देता है। इसी प्रकार जो व्यक्ति अल्लाह की प्रसन्नता के लिए विनम्रता की नीति अपनाता है तो अल्लाह लोक और परलोक में उसे उच्चता प्रदान करता है। इस प्रकार यह हदीस जीवन के रहस्य को हमारे समक्ष निरावृत करती है। समयक जीवन व्यतीत करने के लिए आवश्यक है कि हम जीवन के रहस्य को जान लें। इससे जीवन का आकार-प्रकार और रूप-रेखा उससे बिलकुल भिन्न होगी जो नीति हम जीवन के रहस्यों से अपरिचित होने की दशा में अपनाते हैं।

उद्देश्य

(1) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"बैतुल्लाह (काबा) की परिक्रमा (तवाफ़) सफ़ा और मरवा के मध्य सई (फेरा लगाने) और कंकरियाँ मारना, ये सब अल्लाह की याद को क़ायम करने के लिए नियत किए गए हैं।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : धर्म के सभी मौलिक कृत्य और उनके पालन करने के जो तरीक़े रखे गए हैं वे मात्र निश्प्राण रीतियाँ कदापि नहीं हैं। नमाज़ में खड़े होना, झुकना और सजदा करना या रोज़े में खाने-पीने से बचना ये सभी चीज़ें जीवन के उच्च उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए ही अनिवार्य की गई हैं। इस हदीस में इस्लाम के विशेष रुक्न हज की ओर संकेत किया गया है। काबा की परिक्रमा या सफ़ा और मरवा के मध्य फेरा लगाने या मिना में कंकरियाँ मारने का जो आदेश दिया गया है इन सबका सम्बन्ध वास्तव में अल्लाह की याद अर्थात् उसके स्मरण की स्थापना के लिए है। काबा का तवाफ़ या परिक्रमा अर्थात् अनुरक्त भाव से काबा के गिर्द फिरना इस बात को व्यक्त करता है कि बन्दे का अपने रब से अत्यधिक प्रेम और आसक्ति का सम्बन्ध है। वह अल्लाह के प्रेम में विभोर होकर काबा के गिर्द चक्कर लगा रहा है। सफ़ा और मरवा के मध्य दौड़ लगाना इसका प्रदर्शन है कि इस्लाम इश्क़ और प्रेम ही नहीं बल्कि जिहाद और संघर्ष का धर्म भी है। कंकरियाँ मारने का उद्देश्य इस विश्वास को ताज़ा करना है कि जिस अल्लाह ने सत्य के विरोधी अबरहा को उसकी सेना सहित विनष्ट कर दिया था वह जीवन्त एवं स्वयंभू अल्लाह आज भी विद्यमान है और सत्य के शत्रुओं को विनष्ट करने की शक्ति रखता है। कंकरियाँ मारने से इस संकल्प का भी प्रदर्शन होता है कि मोमिन बन्दा अल्लाह के बोलबाले के प्रयास में कभी पीछे नहीं रह सकता। उसे अपने रब पर पूर्ण भरोसा है। लेकिन सत्य मार्ग में उसके अपने क्या दायित्व होते हैं उनसे भी पूर्ण रूप से परिचित है।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जिस व्यक्ति ने क़ुरआन तीन दिन से कम समय में पढ़ा उसने कुछ नहीं समझा।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि क़ुरआन के पाठ का मूल उद्देश्य क़ुरआन को समझकर पढ़ना और उसमें सोच-विचार एवं चिन्तन से काम लेना है। स्पष्ट है कि जिस व्यक्ति को चिन्ता केवल शीघ्र क़ुरआन के पाठ को समाप्त करने की होगी, उसे सोच-विचार और चिन्तन का अवसर नहीं मिल सकता। इसी लिए आप (सल्ल॰) ने कहा कि जो व्यक्ति तीन दिन से कम समय में क़ुरआन को समाप्त करने का तरीक़ा अपनाता है वह क़ुरआन को केवल पढ़ेगा, उसे समझने का प्रयास वह नहीं कर सकता।

(3) हज़रत मुत्तलिब (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "नमाज़ दो-दो रकअतें हैं। हर दो रकअत के बाद 'तशह्हुद' (अर्थात् बैठकर अत्तहिय्यात पढ़ें जिसमें अल्लाह के अकेले पूज्य होने और मुहम्मद (सल्ल॰) के अल्लाह का रसूल होने की गवाही दी जाती है।) पढ़े। अपनी मुसीबत और बदहाली व्यक्त करे और दोनों हाथ उठाकर प्रार्थना करे और कहे, 'ऐ अल्लाह, ऐ अल्लाह जिसने ऐसा न किया उसकी नमाज़ अपूर्ण है।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : तिरमिज़ी हज़रत फ़ज़्ल-बिन-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, "नमाज़ दो-दो रकअत है। हर दो रकअत में तशह्हुद है और (नमाज़ में) विनम्रता है और गिड़गिड़ाना है और दीनता का प्रदर्शन है। फिर अपने दोनों हाथ उठाओ।" अर्थात् दोनों हाथों को अपने रब की ओर उठाओ, इस प्रकार कि दोनों हथेलियाँ चेहरे की ओर हों और यह कहो, 'या रब, या रब'।"

इस हदीस में नमाज़ किस तरह अदा की जाए इसपर प्रकाश डाला गया है और स्पष्ट शब्दों में बताया गया है कि नमाज़ की मूलात्मा क्या है? वह है अपने रब के सामने अपनी हीनता, बदहाली, भक्ति और विनय भाव का प्रदर्शन। अपने रब को बार-बार पुकारना

और उससे अपनी भलाई की प्रार्थना करना और यह व्यक्त करना कि अल्लाह ही उसका शरणदाता और उसके जीने का वास्तविक सहारा है। उसी से उसके हृदय को शान्ति मिल सकती है। वह अपने रब से किसी दशा में भी निस्पृह होकर नहीं रह सकता।

(4) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, "दुआ उपासना की मज्जा है।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : अर्थात् इबादत और उपासना की मूल आत्मा और उसका सारांश दुआ है। क्योंकि इबादत का तथ्य और उसका सार विनय एवं भक्ति और अल्लाह के आगे अपनी विनम्रता का प्रदर्शन है और दुआ में यह सब कुछ पूर्ण रूप से पाया जाता है। एक हदीस में तो यहाँ तक पाया जाता है कि 'दुआ ही इबादत है।' दुआ में बन्दा अल्लाह की ओर उन्मुख होता है। अल्लाह ही से अपनी आशाओं को सम्बद्ध करता है। अल्लाह के अतिरिक्त हरेक से निस्पृहता व्यक्त करता है। अल्लाह को पुकारता है, उसके आगे अपना दामन फैलाता है। अल्लाह से लिपट-लिपटकर उसके आगे अपनी आवश्यकताओं और अपनी कामनाओं को रखता और उसी को अपना आश्रय और सब कुछ समझता है।

दृष्टिकोण

(1) हज़रत मुसअब-बिन-सअद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम्हारे निर्बल लोगों ही के कारण तुम्हारी सहायता की जाती है और तुम्हें आजीविका प्रदान की जाती है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि दुनिया में केवल भौतिक नियम और क़ानून ही नहीं बल्कि नैतिक और अलौकिक नियम भी क्रियान्वित हैं। आदमी समझता है कि उसे शक्ति, सहायता और आजीविका केवल अपनी क्षमता और प्रयास से प्राप्त होती है। जबकि

अल्लाह किसी की सहायता करता या उसकी आजीविका में अभिवृद्धि करता है तो इसलिए कि वह दीन-दुखियों और कमज़ोरों के काम आए। धन और आजीविका में बाहुल्य या किसी प्रकार की प्रमुखता यदि किसी को प्राप्त है तो उसे कमज़ोरों और मोहताजों को भूलना नहीं चाहिए। अल्लाह चाहता है कि कमज़ोरों और मजबूरों से हमारा व्यवहार सहानुभूति और संवेदना का हो। मालदारों और धनी लोगों को धन केवल इसलिए नहीं दिया जाता कि वे उसे केवल अपने सुख और विलास में ख़र्च करें, मोहताजों और दीन-दुखियों को भूल जाएँ।

(2) हज़रत इमरान-बिन-हुसैन (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"किसी व्यक्ति का मौन रहना साठ साल की पूजा से उत्तम है।" (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : मौन के मूल को साधारणतः लोग नहीं जानते। चुप रहने से आदमी कितनी ही आपदाओं से सुरक्षित रहता है। एक मौन के द्वारा हम कितनी ही मुसीबतों और झगड़ों से छुटकारा पा लेते हैं। एक हदीस में लम्बी ख़ामोशी और सुशीलता के विषय में आया है कि कर्मतुला में उनका वज़न सबसे बढ़कर होगा। बल्कि नबी (सल्ल॰) ने यह भी कहा,

"उसकी क़सम जिसके हाथ में मेरे प्राण हैं, इन दोनों के सदृश तो दुनिया ने कोई कर्म किया ही नहीं। अर्थात् ये दोनों अतुलनीय हैं। (हदीस : बैहक़ी)

मौन को साठ वर्ष की पूजा के मुक़ाबले में वरीयता दी गई है तो उसके कुछ अपने विशिष्ट गुण हैं। हदीस का आशय यह है कि मौन मनुष्य की जीवनशैली हो। व्यर्थ बातों से वह बचे और परनिन्दा, चुग़ली और मिथ्यारोपण आदि से दूर रहे। हदीस का अर्थ यह कदापि नहीं है कि जहाँ सत्य बात कहने की आवश्यकता हो तो वहाँ भी आदमी गूँगा बना रहे।

(3) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"तुममें सबसे अच्छा व्यक्ति वह है जो तुममें अपने घरवालों के लिए अच्छा हो, और मैं तुम सबसे अधिक अपने घरवालों के लिए अच्छा हूँ।"

(हदीस : तिरमिज़ी, दारमी, इब्ने-माजा)

व्याख्या : इस हदीस में अच्छा व्यक्ति होने की आसान पहचान यह बताई गई है कि वह व्यक्ति अच्छा होगा जो अपने घरवालों और बाल-बच्चों के साथ अच्छा व्यवहार करता हो। उसके घरवाले उससे ख़ुश हों और वह अपने घरवालों और अपने लोगों की उपेक्षा न करता हो। इस सम्बन्ध में नबी (सल्ल॰) का जीवन सबके लिए एक उत्तम आदर्श है जिसकी ओर आप (सल्ल॰) ने संकेत भी किया।

(4) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जब ख़ुदा का इनकारी और नाफ़रमान कोई नेकी करता है तो उसको इसका लाभ संसार ही में मिल जाता है, और ख़ुदा को मानने वाले की नेकियों को अल्लाह आख़िरत के लिए छोड़ता है और संसार में भी उसे अपने आज्ञापालन पर आजीविका प्रदान करता है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : आख़िरत में विधर्मियों के हिस्से में यातना के अतिरिक्त और कुछ न आ सकेगा। संसार में उन्होंने कोई नेकी या भलाई का काम किया होगा, उदाहरणार्थ लोगों की उन्होंने किसी सेवा का काम किया होगा तो इसके बदले में वे सांसारिक जीवन में अल्लाह की प्रदान की हुई कितनी ही चीज़ों से लाभान्वित हो चुके। अल्लाह की धरती ने उन्हें जगह दी। सूरज और चाँद की गर्मी और रौशनी से उन्होंने लाभ उठाया। विभिन्न प्रकार के भोज्य-पदार्थ और पेय आदि से लाभान्वित हुए। लेकिन अल्लाह के साथ कुफ़्र (अवज्ञा)

की नीति अपनाकर आख़िरत के लिए उन्होंने अभाव का ही सौदा किया। इसके विपरीत ईमानवालों के अच्छे कर्म का प्रतिफल आख़िरत के लिए सुरक्षित रहता है। अल्लाह अपने आज्ञाकारी लोगों को सांसारिक जीवन में भी आजीविका प्रदान करता है और आख़िरत का जीवन तो केवल उन्हीं के लिए है।

(5) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"बन्दा अपने रब से सबसे अधिक निकट सजदे की दशा में होता है। अतः उसमें अधिक-से-अधिक दुआ किया करो।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह एक महत्वपूर्ण हदीस है। अल्लाह और उसके बन्दे के मध्य जो मधुर सम्बन्ध पाया जाता है उसका प्रदर्शन सबसे अधिक सजदे की दशा में होता है। सजदा करके बन्दा अपने रब के आगे आत्यन्तिक विनम्रता व्यक्त करके महानता को स्वीकार करता है। इसलिए अनिवार्यतः सजदे की दशा में वह अपने रब के सबसे अधिक निकट होता है। और इस दशा में अल्लाह की दयालुता भी अनिवार्यतः उसकी ओर उन्मुख होती है। इसलिए यह बन्दे के लिए दुआ का एक विशेष अवसर होता है।

(6) हज़रत सौबान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तक़दीर को कोई चीज़ बदलती नहीं सिवाय दुआ के, और उम्र को कोई चीज़ बढ़ाती नहीं सिवाय नेकी के, और इनसान आजीविका से वंचित उस गुनाह के कारण हो जाता है जो वह करता है।" (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : कुछ अन्य हदीसों की तरह यह हदीस भी बताती है कि भौतिक नियमों के अतिरिक्त संसार में नैतिक और अलौकिक नियम भी क्रियाशील हैं। दुआ और प्रार्थना से अल्लाह मनुष्य के हक़

में ऐसा फ़ैसला करता है जो दुआ के बिना सम्भव नहीं होता। हमारे अनुभव भी इसके साक्षी हैं कि दुआ या प्रार्थना मानव-जीवन का सबसे बड़ा सहारा है।

उम्र में अभिवृद्धि के लिए अच्छा भोजन और स्वास्थ्य-रक्षक नियमों ही पर दृष्टि नहीं रहनी चाहिए। अल्लाह पर ईमान रखनेवाला व्यक्ति उससे अनभिज्ञ नहीं होता कि उम्र की अभिवृद्धि में नेकी का बल्कि मूल रूप से नेकी ही का दख़ल होता है। हमारे अनुभवों से इसकी पुष्टि होती है।

यह भी एक तथ्य है कि गुनाह और अल्लाह की अवज्ञा की अशुभ कर्मों से मनुष्य आजीविका के अभाव में ग्रस्त हो जाता है। विशेष रूप से वैध आजीविका उसके हिस्से में बहुत कम आती है। यह धोखा नहीं होना चाहिए कि बहुत-से अपराधी अपने अपराधों के बावजूद भौतिकता की दृष्टि से उन्नति करते दिखाई देते हैं। अल्लाह अपराधियों को ढील देता है, यह भी उसकी नीति है। यदि अपराधी अपनी अपराध-नीति को बदलकर अपना सुधार कर लें तो बात दूसरी है अन्यथा अपराधियों और अत्याचारियों का परिणाम सदैव भयावह और शिक्षाप्रद रूप में ही सामने आता है।

(7) हज़रत अबू-उसमान नहदी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जब तुम्हें कोई व्यक्ति सुगन्धित फूल दे तो उसे लेने से इनकार न करो। क्योंकि फूल जन्नत से आया है।"
>
> (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : फूल जन्नत से आया है। अर्थात फूलों का सम्बन्ध मूलतः जन्नत से है। फूल जन्नत का स्मरण ही नहीं कराते बल्कि वे इसका स्पष्ट प्रमाण हैं कि जन्नत है। यदि अल्लाह ने जन्नत की सूचना दी है तो इसपर विश्वास करने में किसी प्रकार का सन्देह और संकोच नहीं होना चाहिए।

कर्मशैली

(1) हज़रत अबू-उमामा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"जिसने प्रेम किया तो अल्लाह के लिए, द्वेष रखा तो अल्लाह के लिए, दिया तो अल्लाह के लिए और रोका तो अल्लाह के लिए उसने अपने ईमान को पूर्ण कर लिया।"

(हदीस : अबू-दाऊद तिरमिज़ी)

व्याख्या : ईमान केवल यही नहीं है कि मनुष्य अल्लाह के अस्तित्व को स्वीकार कर ले। बल्कि ईमान पूर्ण उस समय होता है जबकि अल्लाह पर ईमान ही मनुष्य के जीवन का मौलिक केन्द्र हो जाए। उसके जीवन की सारी दौड़-धूप और प्रयास केवल अल्लाह की प्रसन्नता के लिए हो। यहाँ तक कि उसकी मित्रता और शत्रुता भी केवल अल्लाह के लिए हो। वह किसी से प्रेम करता है तो इसलिए कि वह ईश्वर का आज्ञाकारी और नेक बन्दा है, किसी से द्वेष रखता है तो केवल इसलिए कि वह अल्लाह का और उसके दीन का शत्रु है। वह ख़र्च करता है तो अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए ख़र्च करता है। वह ऐसी जगहों पर ख़र्च करने से अपना हाथ रोक लेगा जहाँ ख़र्च करना बुराइयों को बढ़ावा देना है, जिसको अल्लाह कभी भी पसन्द नहीं कर सकता।

(2) हज़रत आइशा (रज़ि०) से उल्लिखित है कि जब अल्लाह के रसूल (सल्ल०) लोगों को ऐसे कर्म का आदेश देते थे जो वे (सदैव) क़र सकें तो ऐसे अवसर पर सहाबा ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! हम आप जैसे नहीं हैं। अल्लाह ने तो आपके अगले-पिछले सब गुनाह क्षमा कर दिए हैं। इसपर आप (सल्ल०) क्रोधित हुए। यहाँ तक कि आप (सल्ल०) के चेहरे से क्रोध का लक्षण व्यक्त होने लगा। फिर आप (सल्ल०) ने कहा—

"मैं सबसे अधिक अल्लाह का डर रखनेवाला और अल्लाह को जाननेवाला हूँ।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस से ज्ञात हुआ कि दीन में अनुचित सख़्ती को वैध नहीं रखा गया है। मनुष्य को अपने जीवन में ऐसी कर्म-नीति अपनानी चाहिए जिसका वह सदैव पालन कर सके। इसी लिए नबी (सल्ल.) लोगों को उनकी शक्ति और सामर्थ्य को ध्यान में रखते हुए कर्म के लिए प्रेरित करते थे। कुछ लोगों के मन में यह बात आई कि हमें उपासना आदि में कठिन परिश्रम करना चाहिए। नबी (सल्ल.) की बात और है। वे तो ईश्वर के अत्यन्त प्रिय हैं। हमें तो आप (सल्ल.) से कहीं बढ़कर इबादत और उपासना आदि में कठिन परिश्रम करने की आवश्यकता है। इसपर नबी (सल्ल.) अत्यन्त अप्रसन्न हुए और यह अप्रसन्नता आप (सल्ल.) के चेहरे से प्रकट हो रही थी। आप (सल्ल.) ने कहा कि मैं तुम सबसे अधिक अल्लाह से डरनेवाला और उसे जाननेवाला हूँ। इसलिए मेरा जीवन ही तुम्हारे लिए आदर्श जीवन हो सकता है।

यह हदीस यह भी बताती है कि इबादत, उपासना या अच्छे कर्मों का वास्तविक प्रेरक अल्लाह का भय और उसका ज्ञान ही है। अल्लाह का भय और उसका ज्ञान ही वह चीज़ है जिससे जीवन में सभ्यता आती है और मनुष्य पवित्रता और सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बन जाता है।

(3) हज़रत नवास-बिन-सिमआन (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

"स्रष्टा (अल्लाह) की अवज्ञा में स्रष्टजन (लोगों) का आज्ञापालन वैध नहीं।" (हदीस : शरहुस्सुन्नह)

व्याख्या : अर्थात् किसी व्यक्ति की आज्ञा के पालन से यदि अल्लाह की अवज्ञा होती है तो फिर यह वैध नहीं कि उस व्यक्ति की आज्ञा का पालन किया जाए। होना यह चाहिए कि प्रत्येक आज्ञापालन अल्लाह आज्ञापालन के अधीन हो। किसी आज्ञापालन में यदि अल्लाह की आज्ञा की अवहेलना हो रही हो तो दीन में उस आज्ञापालन की कोई गुंजाइश नहीं है। उदाहरणार्थ माता-पिता की

सेवा और उनका आज्ञापालन आवश्यक है। किन्तु यदि वे किसी ऐसे काम का आग्रह करें जिससे अल्लाह ने रोका है तो इस दशा में माता-पिता की बात नहीं मानी जा सकती। अल्लाह को अप्रसन्न करके समस्त लोगों की प्रसन्नता और संसार का सम्पूर्ण धन भी प्राप्त हो जाए तो उसका कोई मूल्य नहीं है।

(4) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मेरे शरीर के किसी भाग (उदाहरणार्थ मूँढों) को पकड़ा और कहा—

"संसार में इस तरह रहो मानो तुम मुसाफ़िर हो और अपनी गणना उन लोगों में करो जो क़ब्रों में जा चुके।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) ने हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) के शरीर के किसी अंग जैसे मूँढों आदि को पकड़कर नसीहत की, ताकि हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) उस नीसहत के महत्व और उसके मूल्य को अधिक-से-अधिक महसूस कर सकें और उनको यह भी एहसास हो कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को अपने अनुयायियों से कितना अधिक हार्दिक लगाव है।

आप (सल्ल॰) ने जो नसीहत की उसके बहुमूल्य होने में किसी सन्देह की गुन्जाइश नहीं है। संसार में यथार्थवादिता के साथ जीवन व्यतीत करने की शैली इससे भिन्न नहीं हो सकती जिसकी शिक्षा नबी (सल्ल॰) दे रहे हैं कि संसार में मुसाफ़िर की तरह रहो। मुसाफ़िर विदेश को कभी स्वदेश नहीं समझ सकता। उसका दिल अपने वतन ही में लगा रहता है। विदेश की बहुमूल्य वस्तुओं की अपेक्षा वतन की मधुर याद उसे अधिक आकर्षित करती है। जो लोग दुनिया में रहकर आख़िरत की चिन्ता करते हैं और आख़िरत की सफलता के लिए जो कुछ कर सकते हैं उससे ग़ाफ़िल नहीं होते, वास्तव में होश के साथ जीवन व्यतीत करनेवाले वही हैं। लेकिन इस नसीहत का अर्थ यह

कदापि नहीं हो सकता कि आदमी सबसे विलग होकर दुनिया से कटकर रह जाए और दुनिया को दुनियावालों के लिए ही छोड़ दे कि वे जिस तरह चाहें उसमें बिगाड़ पैदा करें और अत्याचार करें। मनुष्य को वैध आजीविका की चिन्ता भी करनी होगी, उसे अपने घरवालों की शिक्षा-दीक्षा का ध्यान भी रखना होगा, संसार से बुराई मिटे और सत्य धर्म फैले इसके लिए भी उसे सोचना होगा। लेकिन इस सबके बावजूद व इस सत्य को कभी विस्मृत नहीं कर सकता कि वह यहाँ एक मुसाफ़िर है जिसे यहाँ से शीघ्र ही प्रस्थान करना है। बल्कि वह तो अपनी गणना उन लोगों में करेगा जो यहाँ से जा चुके और क़ब्रों ने जिन्हें अपने में छिपा लिया।

(5) हज़रत सहल-बिन-सअद (रज़ि॰) कहते हैं कि एक व्यक्ति ने आकर कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल, मुझे कोई ऐसा कर्म बताइए कि जब मैं उसे करूँ तो अल्लाह भी मुझसे प्रेम करे और लोगों को भी मुझसे प्रेम हो जाए। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"दुनिया से आसक्ति को त्याग दो, अल्लाह तुमसे प्रेम करने लगेगा और जो कुछ लोगों के पास है उससे विरक्त हो जाओ, लोग तुमसे प्रेम करने लगेंगे।

(हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

व्याख्या : यह हदीस बहुत ही ज्ञानपूर्ण है। जब दुनिया से आसक्ति न होगी तो अनिवार्यतः मनुष्य का सम्बन्ध अल्लाह से बढ़ जाएगा। सांसारिक अनुरक्ति के पश्चात् तो आदमी की दिलचस्पियों की कोई सीमा नहीं होती। फिर अल्लाह की ओर उन्मुख होने का अवसर उसके पास बहुत ही कम रह जाता है। इसके विपरीत मनुष्य की वास्तविक कामनाओं का केन्द्र बिन्दु यदि दुनिया नहीं है तो अवश्य ही वह अल्लाह की ओर उन्मुख होगा। अल्लाह का नाम उसके हृदय की शान्ति और उसकी आत्मा के लिए आनन्द सिद्ध होगा। अल्लाह की ओर उसकी उन्मुखता बढ़ती चली जाएगी। इस दशा में यह कैसे सम्भव है कि अल्लाह उसे अपने प्रिय बन्दों में

सम्मिलित न करे। नबी (सल्ल॰) ने यह जो कहा कि लोगों के पास जो कुछ है तुम उससे विरक्त हो जाओ, लोग तुमसे प्रेम करने लगेंगे तो यह शिक्षा भी तत्वदर्शिता पर आधारित है। जब लोगों से हमारा मिलना-जुलना किसी सांसारिक उद्देश्य से न होगा और न हमारे हृदय में इसके कारण किसी के प्रति कोई ईर्ष्या उत्पन्न होगी कि अमुक व्यक्ति धन-वैभव में इतना आगे क्यों है। लोगों से मिलेंगे तो केवल प्रेम और उनकी भलाई की भावना लेकर मिलेंगे। उनके धन और सम्पत्ति का कोई लोभ हमारे मन में न होगा तो अनिवार्यतः हमसे लोग प्रेम करने लगेंगे। क्योंकि यह सम्भव नहीं कि आप किसी से शुद्ध हृदय से बिना किसी लालच के सम्बन्ध रखें और इस सम्बन्ध से कोई प्रभावित न हो।

मूल वस्तु

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ अल्लाह, जीवन तो बस आख़िरत का जीवन है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : जीवन के विषय में यूँ तो प्रत्येक चिन्तित दिखाई देता है किन्तु साधारणतः लोग नहीं जानते कि वास्तविक जीवन कौन-सा है, जिसकी सफलता के लिए हमें प्रयास करना चाहिए। यह हदीस बताती है कि वास्तविक जीवन तो पारलौकिक जीवन है। मनुष्य को इस सिलसिले में एक क्षण के लिए भी असावधान नहीं होना चाहिए। जो लोग परलोक को नहीं मानते उनके अज्ञान पर जितना भी दुख प्रकट किया जाए वह कम है। लेकिन जो लोग आख़िरत में पूर्ण विश्वास रखते हैं कम-से-कम उन्हें तो दुनिया में इस प्रकार रहना चाहिए जैसे वे कहीं और जाकर आबाद होने की तैयारी में लगे हुए हैं। ऐसी जगह जहाँ ख़ुशियाँ होंगी और आनन्द-ही-आनन्द होगा और वह सब कुछ होगा जिसकी कोई कामना कर सकता है।

(2) हज़रत इब्ने-मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने (हज़रत उम्मे-हबीबा रज़ि॰ से) कहा—

"यदि तुम अल्लाह से यह प्रार्थना करतीं कि वह तुम्हें नरकाग्नि की यातना से या क़ब्र की यातना से बचा ले तो यह अधिक अच्छी और श्रेष्ठ बात होती।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है। हज़रत उम्मे-हबीबा (रज़ि॰) दुआ माँग रही थीं। उनकी दुआ सुनकर जो कुछ नबी (सल्ल॰) ने कहा वह यहाँ उद्धृत किया गया है। इसका सार यह है कि हर चीज़ के लिए, चाहे वह आजीविका हो या कुछ और, अल्लाह के यहाँ एक विशेष समय नियत है, जिसमें अविलम्ब या विलम्ब नहीं हो सकता। उसके लिए दुआ करने में कोई दोष नहीं। किन्तु मनुष्य को यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि अल्लाह से माँगने की चीज़ तो वास्तव में यह है कि वह हमें दोज़ख़ और क़ब्र की यातना से बचा ले। मनुष्य के लिए नरक की यातना या क़ब्र की यातना एक ऐसा ख़तरा है जिसकी ओर से किसी दशा में भी ग़ाफ़िल नहीं होना चाहिए।

(3) हज़रत अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना, आप पुकारकर कह रहे थे चुपके से नहीं कि—

"अमुक की औलाद मेरा आत्मीय (प्यारा) नहीं है। मेरा आत्मीय तो अल्लाह है और मेरे आत्मीय नेक मोमिन हैं।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : किसकी औलाद मेरी आत्मीय नहीं? उल्लेखकर्ता ने किसी मस्लहत से उसका नाम नहीं लिया। यह हदीस बताती है कि धर्म का सम्बन्ध ही वास्तविक सम्बन्ध है। धर्म की भिन्नता के पश्चात सांसारिक रिश्तों और नातों का कोई महत्व शेष नहीं रहता।

नबी (सल्ल॰) ने स्पष्ट रूप से कहा कि अल्लाह ही मेरा आत्मीय (प्यारा और अपना) है और नेक मोमिन ही वास्तव में मेरे मित्र और अपने होते हैं। इस हदीस से यह भी ज्ञात होता है कि यदि आवश्यक हो तो सत्य के शत्रुओं से स्पष्टतः विरक्ति प्रकट की जा सकती है।

(4) हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि एक व्यक्ति ने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल क़ियामत की घड़ी कब आएगी? नबी (सल्ल॰) ने कहा–

"अफ़सोस तुमपर, क़ियामत के लिए तुमने क्या तैयारी की है?" उसने कहा कि मैंने उसके लिए कोई तैयारी नहीं की है, सिवाए इसके कि मुझे अल्लाह और उसके रसूल से प्रेम है। नबी (सल्ल॰) ने कहा, "तुम उसी के साथ हो जिससे तुम प्रेम रखते हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : ज्ञात हुआ कि धर्म में मूल निर्णायक चीज़ प्रेम ही है। जिसे अल्लाह और उसके रसूल से सच्चा प्रेम हो समझ लीजिए कि वास्तव में वह धर्म के आनन्द और स्वाद से परिचित हो गया है। अल्लाह और उसके रसूल से वास्तविक सम्बन्ध प्रेम ही का है। अल्लाह की उपासना और नबी (सल्ल॰) का आज्ञापालन सब कुछ एक प्रेम शब्द की अभिव्यंजना और विस्तार है। नबी (सल्ल॰) के सहाबी ने यह जो कहा कि मैंने क़ियामत की कोई तैयारी नहीं की है, यह वास्तव में उनका विनीत भाव है। यह कैसे सम्भव है कि अल्लाह और उसके रसूल से प्रेम करनेवाला आज्ञापालन और अल्लाह की बन्दगी से ग़ाफ़िल हो। और यह भी सत्य है कि कोशिश और प्रयास के पश्चात् भी बन्दगी का हक़ कहाँ अदा हो पाता है। मौलिक रूप से जो चीज़ काम आनेवाली है वह अल्लाह की दयालुता ही है। उसकी दयालुता को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए आवश्यक है कि अल्लाह और रसूल से अपने नाते को कभी कमज़ोर न होने दें। इस सम्बन्ध की दृढ़ता के लिए बन्दगी, आज्ञापालन और सत्य के मार्ग में प्रयास और संघर्ष आवश्यक है।

रिवायत में यह भी आया है कि हज़रत अनस (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने इस्लाम के पश्चात् मुसलमानों को किसी और चीज़ से प्रसन्न होते हुए नहीं देखा जितना आप (सल्ल॰) के इस कथन से कि तुम उसी के साथ हो जिससे तुम्हें प्रेम है।

पहचान

(1) हज़रत अबू-क़तादा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"अच्छे स्वप्न अल्लाह की ओर से होते हैं और परेशान स्वप्न शैतान की ओर से होते हैं।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : स्वप्न कई प्रकार के होते हैं। अच्छे स्वप्न जिन्हें 'रूयाए-सालिहा' कहते हैं, अल्लाह की ओर से होते हैं। सामान्यतः उनकी हैसियत शुभ सूचना की होती है। इस प्रकार वास्तव में अल्लाह अपने नेक बन्दों से सम्बन्ध स्थापित करता है। उनकी सांत्वना की व्यवस्था करता है। उनका मार्गदर्शन करता और उनके ईमान और विश्वास को बढ़ाता है। जो स्वप्न शैतान की ओर से होते हैं वे सामान्यतः दुख, शोक और भ्रम को बढ़ावा देते हैं। शैतान मोमिनों के ईमान पर डाका डालने से किसी दशा में बाज़ नहीं आता। मनुष्य के कुछ स्वप्न ऐसे भी होते हैं जो उसके अपने ही विचारों और सोच की प्रतिछाया होते हैं जो स्वप्न बनकर सामने आते हैं।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह जब किसी बन्दे से प्रेम करता है तो जिबरील (अलैहि॰) को बुलाता है और कहता है कि मैं अमुक बन्दे से प्रेम करता हूँ, तुम भी उससे प्रेम करो। फिर जिबरील भी उससे प्रेम करने लगते हैं और आसमान में वे घोषणा करते हैं कि अल्लाह अमुक व्यक्ति से प्रेम करता है, तुम भी

उससे प्रेम करो। फिर आसमानवाले फ़रिश्ते भी उससे प्रेम करने लगते हैं। फिर उसकी लोकप्रियता धरती में उतरती है। (अर्थात् धरतीवाले भी उससे प्रेम करने लगते हैं।) और जब अल्लाह को किसी से द्वेष होता है तो जिबरील (अलैहि॰) को बुलाकर कहता है कि मुझे अमुक व्यक्ति से द्वेष है। तुम भी उससे द्वेष रखो। फिर जिबरील को भी उससे द्वेष हो जाता है। फिर वे आसमानवालों में घोषणा करते हैं कि अल्लाह को अमुक व्यक्ति से द्वेष है, तुम भी उससे द्वेष रखो तो वे भी उससे द्वेष करने लगते हैं। इसके पश्चात् धरती में उसके लिए द्वेष उतरता है। (अर्थात् धतरी में रहनेवालों को उससे द्वेष हो जाता है।)"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह हदीस बताती है कि अल्लाह जिस बन्दे से उसकी नैतिकता और सच्चरित्रता आदि के कारण प्रेम करता है तो उस बन्दे की प्रियता को आकाश और धरती में आम कर देता है। आसमान के फ़रिश्ते तक उससे प्रेम करने लग जाते हैं और धरती के लोगों के दिलों में भी ऐसे व्यक्ति की गरिमा और उसके प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न हो जाता है। इसके विपरीत जिस अभागे से अल्लाह को दुश्मनी और द्वेष होगा वह लोक और परलोक दोनों में अपमानित होगा। न आसमान में उसे कोई आदर का स्थान प्राप्त होता है और न धरतीवालों के दिलों में उसके प्रति प्रेम जागता है। हरेक की दृष्टि में वह अप्रिय होकर रह जाता है।

नबियों और महात्माओं के प्रति मनुष्यों के दिलों में जो प्रेम और श्रद्धा पाई जाती है वह अकारण नहीं है। यह अल्लाह का ऐसा अनुग्रह है जो उसने अपने प्रिय बन्दों को संसार में प्रदान किया है। परलोक में उन्हें जो उच्च स्थान प्राप्त होगा उसकी तो आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

(3) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से कहा गया कि आप उस व्यक्ति के विषय में क्या कहते हैं जो अच्छा कर्म करता है और लोग उसकी प्रशंसा करते हैं? आप (सल्ल॰) ने कहा—

"तात्कालिक एवं क्रियात्मक शुभ सूचना है मोमिन को।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् आख़िरत में जो प्रतिफल उसके हिस्से में आएगा वह तो अलग है, यह तुरन्त मिलनेवाला इनाम है जो उसके हिस्से में आता है कि लोगों के मुख से उसके लिए अच्छे और प्रशंसा के शब्द निकलते हैं। यह लोकप्रियता इसका लक्षण है कि आख़िरत की ख़ुशियाँ और आनन्द उसकी प्रतीक्षा में हैं।

(4) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"क्या मैं तुम्हें उस व्यक्ति की सूचना दूँ जो नरक के लिए हराम (वर्जित) है और नरकाग्नि उसके लिए हराम है? नरकाग्नि प्रत्येक उस व्यक्ति पर हराम है जो कठोर स्वभाव का न हो, उसमें कोमलता पाई जाए, लोगों से निकट हो और मृदुल स्वभाव का हो।" (हदीस : अबू-दाऊद, तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस से कई बातें मालूम होती हैं। इससे पता चलता है कि किस मिज़ाज और स्वभाव के लोगों के लिए नरक की आग भड़काई गई है और उस आग से सुरक्षित रहनेवालों में कैसे गुण पाए जाते हैं। यह हदीस बताती है कि नरक से सम्बन्ध और नाता वास्तव में उन्हीं लोगों का होता है जो स्वभाव से कठोर होते हैं। अभिमान और अहंकार के कारण उन्हें सत्य और असत्य में अन्तर दिखाई नहीं देता। न वे अल्लाह के आदेशों का आदर करते हैं और न अल्लाह के बन्दों के साथ उनका व्यवहार प्रेम और करुणा का होता है।

अल्लाह के ऐसे मोमिन बन्दे जो मधुर स्वभाव के होते हैं, जिनमें नम्रता पाई जाती है, जो लोगों से अपना सम्बन्ध बनाए रखते हैं और लोगों से कटकर नहीं रहना चाहते, वे लोगों से प्रेम करते हैं और लोगों को भी उनसे प्रेम होता है, ऐसे लोगों की मंज़िल या वास्तविक ठिकाना नरक नहीं हो सकता। उनकी मंज़िल तो जन्नत ही होगी। कामना करनेवालों को उसी की कामना करनी चाहिए।

नरक से सुरक्षित रहनेवालों के जिन गुणों का उल्लेख इस हदीस में किया गया है वे लगभग पर्यायवाची हैं और मृदुलता और नम्रता के विभिन्न पहलुओं को व्यक्त करते हैं। यहाँ यह बात ध्यान में रहे कि जिन गुणों का उल्लेख इस हदीस में किया गया है उनके साथ यह भी ज़रूरी है कि आदमी मोमिन और मुस्लिम हो और वह ईश्वर के आदेशों का पालन करता हो, क्योंकि ईमान और विश्वास के बिना सत्य की दृष्टि में कर्म और नैतिकता का कोई मूल्य नहीं होता।

जीवन के नियम

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जो व्यक्ति प्रातः और संध्या को मस्जिद में उपस्थित होगा तो अल्लाह जन्नत में प्रत्येक प्रातः और संध्या को उसके लिए आतिथ्य का प्रबन्ध करेगा।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह इस्लामी सभ्यता और शिष्टता की बात है कि मोमिन का मस्जिद से हार्दिक एवं आत्मिक सम्बन्ध होता है। जो व्यक्ति प्रातः और संध्या को मस्जिद पहुँचकर नमाज़ अदा करता है, अल्लाह उसके ईश-गुणगान और उसकी उपासना को स्वीकृत करता है। अल्लाह की दयालुता उसकी ओर आकृष्ट होती है। ईश्वर का यह अनुग्रह सांसारिक जीवन में भी मोमिन के हिस्से में आता रहता है। जन्नत में उसके आतिथ्य का सामान जन्नत के अनुकूल होगा। वहाँ

मनुष्य पर यह तथ्य पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाएगा कि नमाज़ वास्तव में आख़िरत ही का अंश है और यह नमाज़ कोई शुष्क कर्म नहीं बल्कि भक्ति-भाव और शुभाकांक्षा का प्रदर्शन है।

(2) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जब तुममें से कोई नमाज़ पढ़ता है तो वास्तव में वह अपने रब से गुप्त वार्ता करता है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में नमाज़ की अहमियत पर अच्छी तरह प्रकाश डाला गया है। नमाज़ अपने रब से गुप्त वार्ता है। नमाज़ में अल्लाह अपने बन्दे से बहुत निकट होता है। बन्दा उसके आगे सजदा करके अपने भक्तिभाव को शान्त करता है। वह अपने रब से भक्ति और अपने मन की बातें करता है। इसके अतिरिक्त नमाज़ अपने रब से वचनबद्धता का नवीनीकरण भी है और नमाज़ मोमिन के जीवन का पूर्ण चित्र भी।

(3) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ लोगो, अल्लाह के हुज़ूर में तौबा करो। क्योंकि मैं अल्लाह के हुज़ूर में प्रतिदिन सौ बार तौबा करता हूँ।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : बन्दे का कर्तव्य है कि वह अपने रब की ओर बार-बार पलटे। अल्लाह से जुड़े रहना ही वास्तविक जीवन है। वही दिलों को शान्ति प्रदान करता है, गुनाहों को क्षमा करता और रहमत व दयालुता के दामन से हमें ढँकता है। उसकी ओर बार-बार लौटना हमारी प्रकृति को अपेक्षित भी है। इसके अतिरिक्त उसकी ओर बार-बार पलटना इसलिए भी आवश्यक है कि हमारा दिल उसके सिवा कहीं और अटककर न रह जाए। अल्लाह से अपने सम्बन्ध को ठीक और जीवन्त रखने के लिए उससे गहरा और हार्दिक सम्बन्ध आवश्यक है। स्वयं नबी (सल्ल॰) अल्लाह के हुज़ूर सौ-सौ बार तौबा करते थे। इससे

तौबा के महत्व और उसकी आवश्यकता का भलि-भाँति अनुमान किया जा सकता है। सबसे क़ीमती एहसास अपने बन्दे होने का एहसास है। इस एहसास को ताज़ा रखने के लिए आवश्यक है कि हम अल्लाह की ओर बार-बार उन्मुख हों और उससे अपने गुनाहों और ख़ताओं के लिए क्षमा के प्रार्थी हों। और उससे यह प्रार्थना करते रहें कि हमें उसकी बन्दगी और आज्ञापालन का अधिक-से-अधिक सौभाग्य प्राप्त हो।

(4) हज़रत जरीर (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को वचन दिया नमाज़ पढ़ने, ज़कात देने और प्रत्येक मुसलमान का हित चाहने के लिए। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह इस्लामी जीवन का एक सुन्दरतम चित्र है, जिसमें जीवन का हर पक्ष स्पष्ट दिखाई देता है। इस्लामी जीवन एक प्रतिज्ञा और अनुबन्ध है कि हम अपने जीवन में अल्लाह को सम्मिलित रखेंगे। नमाज़ उससे हमारे सम्बन्ध को जीवन प्रदान करेगी और यह सम्बन्ध एक जीवन्त सम्बन्ध होगा। अपने धन से हम ज़कात देंगे जिससे मोहताजों की ज़रूरत पूरी हो सके। अल्लाह के बन्दों से हमें प्रेम होगा। हम उनपर सहर्ष अपना माल ख़र्च करेंगे। मुसलमानों से हमारा सम्बन्ध भाईचारे का होगा। हम अपने प्रत्येक भाई का हित चाहेंगे और अपने लिए इसे अनिवार्य समझेंगे।

हमारे कर्म

(1) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह को वही दीन (उपासना और कर्म) अधिक प्रिय है जिसे अपनानेवाला उसपर क़ायम रहे।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का महत्वपूर्ण अंश है। नबी (सल्ल॰) से एक महिला के विषय में कहा गया कि वह बड़ी नमाज़े

पढ़ती है। इस अवसर पर नबी (सल्ल॰) ने कहा कि बस उतना ही करो जितनी तुममें शक्ति और सामर्थ्य हो। अल्लाह नहीं उकताता, तुम ही उकता जाओगे। इसके पश्चात् आप (सल्ल॰) ने कहा कि जिसपर आदमी क़ायम रहे वही दीन अल्लाह को अधिक प्रिय है। किसी कर्म पर क़ायम रहने और उसे निरन्तर करते रहने के महत्व का एक कारण यह भी है कि जिस कर्म या उपासना पर आदमी क़ायम रहता है वह उसका स्वभाव और चरित्र बन जाती है, और हम जानते हैं कि किरदार और नैतिकता ही जीवन है और जो वस्तु जीवन बन सके उसके मूल्य से किसको इनकार हो सकता है।

(2) हज़रत जाबिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"क़ियामत के दिन प्रत्येक बन्दा उसी दशा में उठाया जाएगा जिस दशा में उसकी मृत्यु हुई होगी।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से ज्ञात हुआ कि आदमी के लिए भरोसे की चीज़ यह है कि उसकी मृत्यु अच्छी दशा में हो। एक व्यक्ति जीवन भर कुफ़्र और अधर्म में पड़ा रहा किन्तु अन्त में उसे ईमान लाने का सौभाग्य प्राप्त हो गया और उसने ईमान ही की दशा में दुनिया से प्रस्थान किया तो क़ियामत के दिन वह व्यक्ति एक मोमिन के रूप में ही उठाया जाएगा। अल्लाह उसके पिछले गुनाहों को क्षमा कर देगा। इसके विपरीत एक व्यक्ति अल्लाह की बन्दगी और उसके आज्ञापालन में जीवन व्यतीत कर रहा होता है किन्तु अन्त में वह बुराइयों और अल्लाह की अवज्ञा में पड़ जाता है और इसी दशा में उसकी मृत्यु होती है तो उसकी हैसियत एक गुनाहगार और अवज्ञाकारी की होगी। यह अलग बात है कि अल्लाह की उस पर विशेष कृपा हो और वह उसके गुनाहों को क्षमा कर दे।

(3) हज़रत अदी-बिन-हातिम (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"नरक की आग से बचो चाहे खजूर का टुकड़ा देकर ही

सही। यदि यह भी उपलब्ध न हो तो कोई अच्छी बात कहकर ही सही।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मनुष्य के लिए नरक की आग एक बड़ा ख़तरा है। अपने को उस ख़तरे से सुरक्षित रखने के लिए मनुष्य को नित्य चिन्तित रहना चाहिए और नरक की यातना से बचने के लिए जो उपाय भी कर सकता हो करना चाहिए। इसकी ओर से कदापि ग़ाफ़िल न हो। अल्लाह की यातना से जो चीज़ मनुष्य को बचा सकती है वह ईमान और सत्कर्म है। सत्कर्मों में दान और सदक़े को मौलिक महत्व प्राप्त है। इसी लिए क़ुरआन में सामान्य रूप से नमाज़ के साथ ज़कात का उल्लेख किया गया है।

नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि नरक से बचने की चिन्ता करो। खजूर का एक टुकड़ा देना भी तुम्हारे मोमिन होने का प्रमाण हो सकता है। किन्तु यदि निर्धनता के कारण तुमसे यह भी न हो सके तो कोई अच्छी बात ही कहो। अच्छी बात भी इसका प्रमाण होती है कि मनुष्य ईश्वर का अवज्ञाकारी नहीं और न वह उसके बन्दों का अहित चाहता है बल्कि वह उनका हितैषी है।

(4) हज़रत जाबिर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"प्रत्येक नेकी सदक़ा (दान) है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस्लाम में सदक़ा या दान का अर्थ बहुत ही व्यापक है। ज़कात और अनिवार्य सदक़ों के अतिरिक्त भी मनुष्य जो नेकी करता है उसकी गणना भी अल्लाह के यहाँ सदक़े में होती है और वास्तविकता भी यही है कि मोमिन का प्रत्येक सतकर्म उसकी सच्चाई और उसके पवित्रात्मा होने का स्पष्ट प्रमाण होता है।

मोमिन के गुण

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"मोमिन अपवित्र नहीं होता।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह की दृष्टि में अपवित्र और नापाक अगर होते हैं तो मुशरिक और बहुदेववादी होते हैं। अतएव क़ुरआन में कहा गया है, "मुशरिक तो नापाक और अपवित्र ही हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-9 तौबा, आयत-28)

नापाकी और अपवित्रता का सम्बन्ध केवल शरीर से ही नहीं होता, बल्कि वास्तविक अपवित्रता तो विचार, आस्था और कर्म की होती है। इसी लिए क़ुरआन मुशरिकों को अपवित्र कहता है। क्योंकि शिर्क से बढ़कर विचार और नैतिकता की गिरावट की कल्पना भी नहीं की जा सकती। शिर्क एक ऐसी घिनावनी चीज़ है कि शराफ़त के दामन पर इसका साधारण सा धब्बा भी असहनीय होता है। शिर्क और बहुदेववाद वास्तव में ईश्वर की महानता और उसके प्रताप के विरुद्ध ऐसी नीति है जिसकी निकृष्टता और घिनौनेपन की अभिव्यक्ति के लिए नापाकी और अपवित्रता से बढ़कर यथोचित शब्द शायद ही मिल सके। मोमिन उस गन्दगी से बिल्कुल पाक होता है जिससे मुशरिकों का दामन लुथरा हुआ होता है। इसी लिए आप (सल्ल॰) ने कहा है कि मोमिन यदि मोमिन है तो वह नापाक नहीं होता यद्यपि पत्नीप्रसंग के पश्चात अभी उसने स्नान न किया हो। वह इस हालत में लोगों से ही नहीं बल्कि नबी से भी मुलाक़ात कर सकता है। अलबत्ता नमाज़ पढ़ने या मस्जिद में प्रवेश करने के लिए ज़रूरी है कि वह स्नान कर ले।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"मोमिन की मिसाल ऐसी है जैसी नर्म खेती कि जब हवा ज़ोर से चलती है तो उसी के अनुसार वह और उसके पत्ते आदि इधर-उधर झुक जाते हैं और जब हवा ठहर जाती है तो यह भी सीधी हो जाती है। इसी तरह मोमिन आपदाओं से (तबाह होने से) बचा लिया जाता है, और काफ़िर की

मिसाल ऐसी है जैसे सनोबर का सीधा और कठोर वृक्ष कि जब अल्लाह चाहता है उसे जड़ से उखाड़ देता है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : मोमिन किसी दशा में भी निश्चिन्त और अचेत होकर बैठा नहीं रहता। वह आपत्तियों और बलाओं से सुरक्षित रहने के उपाय करता है। वह परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव को भलि-भाँति समझता-अपनाता है। इस प्रकार बड़ी-से-बड़ी आज़माइशों से भी वह सुरक्षापूर्वक गुज़र जाता है। वह जानता है कि विभिन्न स्थितियों में और विभिन्न अवसरों पर इस्लाम की अपेक्षाएँ क्या होती हैं। वह इस्लामी अपेक्षाओं को ध्यान में रखते हुए अपने लिए मार्ग निकाल लेता है। इसके विपरीत जो लोग ईमान और विश्वास से वंचित होते हैं वे परिस्थितियों की उलझनों में खोकर रह जाते हैं। उनकी अपनी पहचान खो जाती है। वे बड़े वृक्ष की तरह धरती पर गिर जाते हैं, जिसे तूफ़ानी हवा ने जड़ से उखाड़ दिया हो। यद्यपि वे देखने में जीवित भी रहते हैं तो उच्च उद्देश्यों और मानवीय महानता से वंचित होकर जीवित रहते हैं। ऐसा जीवन दृष्टिवान व्यक्ति की निगाह में किसी विनाश से कम शिक्षाप्रद नहीं होता।

(3) हज़रत नोमान-बिन-बशीर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम मोमिनों को देखोगे कि वे परस्पर दया करने, एक-दूसरे से प्रेम करने और एक-दूसरे के साथ दयालुता और सहयोग का व्यवहार करने में ऐसे हैं जैसे कि शरीर की दशा। जब शरीर के किसी अंग में तकलीफ़ होती है और शरीर के सभी अंग उस एक अंग के कारण एक-दूसरे को पुकारते हैं और सम्पूर्ण शरीर जागृत दशा और बुख़ार में सम्मिलित रहता है।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) ने मिसाल के द्वारा यह बताया है कि ईमानवालों के पारस्परिक सम्बन्ध कितने गहरे होते हैं। उनमें प्रेम और

लगाव का जो सम्पर्क और सम्बन्ध पाया जाता है वह अत्यन्त सुन्दर और प्राणवर्द्धक होता है। ईमान का सम्बन्ध ऐसा सम्बन्ध है जो रंग, जाति और भाषा एवं संस्कृति के विभेद और अलगाववाद से मुक्त करके उन्हें आपस में इस तरह जोड़ देता है कि दुनिया आश्चर्यचकित होकर रह जाती है। उनमें जो आत्मीयता एवं एकता पाई जाती है उसमें कृत्रिमता लेशमात्र को भी नहीं होती। उसका आधार अत्यन्त गहरा होता है। अतएव मुस्लिम की एक हदीस में है कि "समस्त मोमिन मात्र एक व्यक्ति की तरह हैं। यदि उसकी आँख दुखती है तो उसका सारा शरीर विकल और बेचैन हो जाता है। और उसका सिर दुखता है तो पूरा शरीर इस तकलीफ़ को महसूस करता है।"

बुख़ारी और मुस्लिम की एक हदीस में मोमिनों के पारस्परिक सम्बन्धों को मकान की उपमा देते हुए नबी (सल्ल॰) कहते हैं, "मोमिन, मोमिन के लिए एक मकान के सदृश होता है जिसका एक भाग दूसरे भाग की दृढ़ता का कारण बनता है।" यह कहकर आप (सल्ल॰) ने एक हाथ की उँगलियों को दूसरे हाथ की उँगलियों में दाख़िल किया (कि मोमिन परस्पर इस तरह मिले हुए होते हैं)।

(4) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अम्र-बिन-आस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि उन्होंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना—

> "उसकी क़सम जिसके हाथ में मुहम्मद की जान है! मोमिन की मिसाल ठीक सोने के उस ढेले जैसी है जिसके मालिक ने उसे तपाया लेकिन न तो उसका रंग बदला और न ही उसके भार में कोई कमी हुई। उसकी क़सम जिसके हाथ में मुहम्मद की जान है! मोमिन की मिसाल ठीक उस मधुमक्खी जैसी है जिसने उत्तम फूल चूसे, उत्तम मधु बनाया और जिस शाखा पर वह बैठी, न तो उसे अपने भार से तोड़ा और न ख़राब किया।" (हदीस : मुसनद अहमद)

व्याख्या : अर्थात् मोमिन सोने की तरह खरा होता है। परीक्षा में भी खरा सिद्ध होता है। वह कोई नक़ली सोना नहीं होता कि आग में

तपाने से उसका रंग बदल जाए या उसका वज़न घट जाए। मधुमक्खी की तरह वह आहार भी पाक और सुथरा लेता है। मधुमक्खी यदि मधु बनाती है तो मोमिन भी विष नहीं उगलता। वह अत्यन्त मृदुभाषी होता है और उसके कर्म और चरित्र में ऐसा आकर्षण होता है कि लोगों के हृदय उसकी ओर खिंचने लगते हैं। मधुमक्खी की तरह वह भी जहाँ से गुज़रता है किसी को कोई हानि नहीं पहुँचाता।

(5) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

"कोई तुममें से अंगूर को कर्म न कहे, क्योंकि कर्म तो मोमिन का हृदय है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : एक हदीस में आया है, "अंगूर को कर्म न कहो। क्योंकि कर्म तो बस मुस्लिम होता है।"
(हदीस : मुस्लिम)

एक हदीस में आया है कि "अंगूर को कर्म नहीं 'इनब' या 'हबलह' कहो।" कर्म शब्द अपने में पवित्रता और अन्य प्रशंसनीय गुणों का अर्थ लिए होता है। इसी लिए अरबी में अंगूर की लता के अतिरिक्त अच्छी भूमि, सोना और हार को भी कर्म कहते हैं। नबी (सल्ल.) के कथन का आशय यह है कि प्रशंसनीय गुणों से तो वास्तव में मोमिन सम्पन्न होता है। इस सिलसिले में मोमिन का मुक़ाबला दुनिया की कोई चीज़ नहीं कर सकती। इसलिए वह इसका सबसे अधिक पात्र है कि उसे अच्छे-से-अच्छे नामों, उदाहरणार्थ कर्म, करीम, (Noble hearted, Generous) आदि से सम्मानित किया जाए।

(6) हज़रत अम्र-बिन-आस (रज़ि.) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल.) को कहते हुए सुना। आप (सल्ल.) पुकार कर कहते थे—

"सुन लो।" अमुक की सन्तान मेरी आत्मीय (प्यारी) नहीं,

बल्कि मेरा वली तो अल्लाह है और नेक मोमिन मेरे आत्मीय हैं।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि मोमिन का वास्तविक नाता अल्लाह से होता है। फिर जो अल्लाह के मोमिन और अच्छे बन्दे होते हैं वे उसके प्रियजन होते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जिसे छिपा नहीं रहना चाहिए, बल्कि ईमान की अभिव्यक्ति के अर्थ में यह बात सम्मिलित होती है कि मनुष्य ने अपनी आत्मीयता का नाता अल्लाह से स्थापित कर लिया और अल्लाह के बाद उसके वास्तविक स्वजन और नातेदार अच्छे मोमिन हैं। भले ही उनसे वंश और वर्ण का कोई नाता हो या न हो।

(7) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि उन्होंने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल! जुदआन का बेटा अज्ञान काल में नाते-रिश्ते को जोड़ता था और मोहताजों को खाना खिलाता था। क्या इससे (क़ियामत के दिन) उसे लाभ पहुँचेगा? आप (सल्ल॰) ने कहा—

"इससे उसे लाभ नहीं पहुँचेगा। क्योंकि उसने कभी नहीं कहा कि मेरे रब, प्रतिदान के दिन (क़ियामत में) मेरी ख़ता को क्षमा कर दे।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : प्रतिदान दिवस या क़ियामत पर जिसको विश्वास प्राप्त न हो उसके समस्त कर्मों का आख़िरत में कोई वज़न नहीं होगा। आख़िरत में वही अच्छे और नेक कर्म आदमी के काम आएँगे जिनको उसने अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए किए होंगे। अच्छे काम यदि मात्र अपनी शान्ति के लिए या केवल लोगों को ख़ुश करने के लिए किए जाएँ तो अल्लाह के यहाँ उनपर किसी लाभ की आशा नहीं की जा सकती। क्योंकि इस ध्येय से और क्षमा-याचना के उद्देश्य से ये काम किए ही नहीं गए। इब्ने-जुदआन के विषय में नबी (सल्ल॰) ने कहा कि उसने कभी नहीं कहा कि मेरे रब, प्रतिदान दिवस में मेरी ख़ता क्षमा कर दे। अर्थात् उसके समक्ष प्रतिदान दिवस या क़ियामत का दिन था ही नहीं। मनुष्य के कर्म आख़िरत की

सफलता और केवल अल्लाह के लिए न हों बल्कि उनके पीछे दिखावा या कोई और चीज़ काम कर रही हो तो यह एक अक्षम्य अपराध है। इसी लिए इब्ने-जुदआन की नेकियाँ उसे अज़ाब से न बचा सकेंगी। हाँ यह सम्भव है कि नेकियों के कारण उसकी यातना में दूसरे विधर्मियों की अपेक्षा कुछ कमी हो जाए।

(8) हज़रत उमर-बिन-खत्ताब (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "ऐ इब्ने-ख़त्ताब, जाकर लोगों में उच्च स्वर में घोषणा कर दो कि जन्नत में मोमिनों के अतिरिक्त दूसरा कोई प्रवेश न करेगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह ने जन्नत का वादा अपने मोमिन बन्दों से ही किया है। वे ही जन्नत में प्रवेश करेंगे। जो मोमिन नहीं हैं वे कदापि जन्नत में दाख़िल न हो सकेंगे। नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि ऐ उमर-बिन-ख़त्ताब, इस बात की घोषणा उच्च स्वर में कर दो कि अल्लाह की जन्नत केवल मोमिनों के लिए है। उनके सिवा कोई दूसरा उसमें प्रवेश न कर सकेगा। इससे सबको सूचित कर दो ताकि कल किसी को यह कहने का अवसर न मिल सके कि हमें तो अल्लाह के इस निर्णय की सूचना ही न थी कि ईमान के बिना जन्नत में प्रवेश सम्भव नहीं। यदि हमें इसकी सूचना होती तो अवश्य ही हम ईमान लाकर मोमिन गरोह में शामिल हो जाते और यह महरूमी हमारे हिस्से में कदापि न आती।

ईमान का स्वाद

(1) हज़रत अब्बास-बिन-अब्दुल मुत्तलिब (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जो व्यक्ति अल्लाह के रब होने, इस्लाम के दीन (धर्म) और मुहम्मद के रसूल होने पर राज़ी और ख़ुश हो गया उसने ईमान का स्वाद चख लिया।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : ईमान का स्वाद पाने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को अपने रब का ज्ञान प्राप्त हो और उसपर यह सत्य प्रकट हो जाए कि अल्लाह ही उसका स्रष्टा, रब और प्रभु है। उसने उसे पैदा ही नहीं किया बल्कि उसने उसकी पूर्णता और विकास की व्यवस्था भी की है। वह उसकी भौतिक आवश्यकताओं ही को पूरा नहीं करता बल्कि उसने उसकी आत्मिक उन्नति के लिए भी पूर्ण रूप से मार्गदर्शन किया है। अपने रब के मार्गदर्शन का अनुसरण करके मनुष्य न केवल यह कि अपने सांसारिक जीवन को आनन्दमय बना सकता है बल्कि वह आख़िरत के शाश्वत आनन्द और अनन्त सुख का भी अधिकारी बन सकता है। ईश-ज्ञान वास्तव में जीवन और जीवन के आनन्द के वास्तविक स्रोत का ज्ञान है। ऐसे कृपामय रब और प्रभु को पाकर मनुष्य को जो ख़ुशी और हार्दिक आनन्द प्राप्त होता है वह शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

इस्लाम को अपना दीन निर्धारित करने का अर्थ यह होता है कि मनुष्य ने जीवन के उत्तम मार्ग को पा लिया जिसपर चलकर वह लोक और परलोक की कामयाबी हासिल करता है और हर प्रकार का आनन्द मनुष्य के हिस्से में आता है।

इसी प्रकार मुहम्मद (सल्ल०) को अपना रसूल मानने का अर्थ यह होता है कि मनुष्य उस मार्गदर्शक पर ईमान ले आया जो अल्लाह का प्रतिनिधि और उसे हर प्रकार की गुमराहियों और पथभ्रष्टता से निकालकर सत्य से परिचित करानेवाला है, जिसका आज्ञापालन इस बात की ज़मानत है कि उसे दुनिया और आख़िरत की कामयाबी प्राप्त होगी और जिससे अपने को अपरिचित रखने तथा जिसके मार्गदर्शन से अपने को दूर रखने का अर्थ तबाही, घाटा और विनाश के सिवा और कुछ नहीं हो सकता। अब जिस व्यक्ति को अपने रब का ज्ञान प्राप्त हो गया और जिसने इस्लाम, अर्थात् उस धर्म को अपना लिया जो वास्तव में अल्लाह के सामीप्य, उसकी इच्छा और अपने मध्य अनुकूलता बनाए रखने का दूसरा नाम है, और जो

मुहम्मद (सल्ल०) के नबी होने पर ईमान ले आया जिसके मार्गदर्शन में वह जीवन व्यतीत करने को अपने लिए सौभाग्य और अल्लाह का अनुग्रह समझता है, उसकी ख़ुशियों और आनन्द का अन्दाज़ा भ्रष्ट मन-मस्तिष्क के लोगों को कदापि नहीं हो सकता। इसी लिए आप (सल्ल०) कहते हैं कि ईमान का स्वाद उस व्यक्ति ने चख लिया जिसने अपने दयावान रब को पा लिया और जिसने अल्लाह के आज्ञापालन को अपनी जीवनशैली बना लिया और जो अपने वास्तविक मार्गदर्शक मुहम्मद (सल्ल०) पर ईमान लाकर ख़ुशियों से भर गया। यह ख़ुशी और आनन्द इस बात का प्रमाण है कि उसे ईमान का स्वाद प्राप्त हो गया।

(2) हज़रत अनस-बिन-मालिक (रज़ि०) से उल्लिखित है, वे कहते हैं कि जब मेरे मामू हराम-बिन-मिलहान बीरे-मऊना के दिन नेज़े से शहीद किए गए तो उन्होंने अपना रक्त अपने हाथ से अपने मुँह और अपने सर पर मला और कहा कि काबा के रब की क़सम! मैं सफल हो गया। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह ईमान की मिठास और उसका स्वाद है कि मनुष्य अल्लाह की राह में प्राण देकर अपने को सफल समझता है और आनन्द की दशा में अपने रक्त को अपने मुँह और शरीर पर मलने लगता है और पुकार उठता है कि काबा के रब की क़सम! मैं सफल हो गया।

(3) हज़रत जाबिर (रज़ि०) से उल्लिखित है कि उहुद की लड़ाई में एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से पूछा कि बताइए अगर मैं मारा जाऊँ तो कहाँ जाऊँगा। आप (सल्ल०) ने कहा, "जन्नत में।" यह सुनकर उसने अपने हाथ की खजूरें फेंक दीं। फिर लड़ता रहा, यहाँ तक कि शहीद हो गया। (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् नबी (सल्ल०) की दी हुई इस सूचना पर कि अल्लाह की राह में मारे जाने का बदला जन्नत है उसे इतना विश्वास

है कि उसे यह भी गवारा न हुआ कि हाथ की खजूरें खा ले, तत्पश्चात युद्ध क्षेत्र में उतरे। यह ईमान ही का चमत्कार है। मुस्लिम की एक रिवायत है कि एक व्यक्ति यह सुनकर कि जन्नत तलवारों की छाया में है, अपने साथियों के पास आता है और कहता है कि मेरा सलाम लो और वह अपनी तलवार की म्यान तोड़ डालता है तथा दुश्मन पर बेजिगरी के साथ आक्रमण करता है यहाँ तक कि शहीद हो जाता है। एक रिवायत में है कि एक सहाबी उमैर-बिन-हुमाम ने जन्नत की ख़ुशख़बरी सुनकर कुछ खजूरें निकालीं और खाने लगे। फिर स्वयं ही बोले कि यदि मैं इतनी देर जीवित रहा कि इन खजूरों को ख़त्म करूँ तो यह जीवन बहुत लम्बा हो जाएगा। यह कहकर खजूरें फेंक दीं और लड़ने लगे यहाँ तक कि शहीद हो गए।

उहुद के युद्ध के अवसर पर अनस-बिन-नज़र (रज़ि॰) तलवार लेकर मैदान में बढ़े। राह में सअद-बिन-मुआज़ (रज़ि॰) मिले। हज़रत अनस (रज़ि॰) ने कहा, क्यों सअद कहाँ भागे जाते हो? मैं तो उहुद पर्वत के पीछे से जन्नत की ख़ुशबू सूँघ रहा हूँ। हज़रत अनस बेजिगरी से लड़े और शहीद हो गए। उनके शरीर में इतने घाव थे कि उनकी लाश पहचानी नहीं जाती थी (हदीस : बुख़ारी)। यह है ईमान और उसका प्रभाव और उसके स्वाद का चमत्कार जो हम सहाबा के जीवन में देखते हैं।

(4) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "तुममें से कोई मोमिन नहीं हो सकता जब तक कि मैं उसके बाप, उसकी सन्तान और समस्त लोगों से बढ़कर उसके लिए प्रिय न हो जाऊँ।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि वास्तव में रसूल का प्रेम ही ईमान है और ईमान के सिद्ध होने के लिए यह प्रेम इतना अभीष्ट है कि यह प्रेम बाप, सन्तान और समस्त लोगों के प्रेम से बढ़ा हुआ हो। दुनिया जानती है कि प्रेम कोई शुष्क चीज़ नहीं है। प्रेम, भाव और

आनन्द से रिक्त नहीं होता। अतः अनिवार्यतः ईमान भी कोई शुष्क और स्वादहीन चीज़ नहीं है। नबी (सल्ल॰) यदि ईमान के स्वाद और उसकी मिठास की बात करते हैं तो वास्तव में आप हमें इस तथ्य से अवगत करा रहे होते हैं कि ईमान कोई शुष्क, अप्रिय और आनन्दहीन वस्तु नहीं है, बल्कि जीवन की उत्तम निधि और अत्यन्त स्वादिष्ट वस्तु ईमान ही है।

तत्क्षण प्रतिदान

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जो बन्दा दुनिया में अनासक्ति की नीति अपनाए तो अनिवार्यतः अल्लाह उसके दिल में हिकमत (तत्त्वज्ञान) उगाएगा और उसकी ज़बान पर हिकमत जारी करेगा और दुनिया के दोष तथा उसके रोग और उनका इलाज भी उसे सुझा देगा और दुनिया से उसे सलामती के साथ निकालकर सलामती के घर (जन्नत) में पहुँचा देगा।"

व्याख्या : अनासक्ति (ज़ुहद) की नीति अपनाए अर्थात् सांसारिकता और भोगविलास उसकी वृत्ति न हो। आख़िरत की चिन्ता और अल्लाह की प्रसन्नता को ही वह जीवन का वास्तविक उद्देश्य समझता हो।

अल्लाह की ओर से विशुद्ध धार्मिकता और संसार के प्रति अनासक्ति का तात्कालिक बदला उसे प्राप्त होता है। इससे ज्ञात हुआ कि अल्लाह अपने आज्ञाकारी और विशेष बन्दों को सांसारिक जीवन में भी उनकी बन्दगी का बदला प्रदान करता है। मोमिनों को दुनिया में अत्यन्त पवित्र जीवन प्राप्त होता है और जो बन्दे अल्लाह की चाहत में आगे बढ़े हुए होते हैं, व्यर्थ बातों और व्यर्थ कामों में अपना समय नष्ट नहीं करते उनका अधिक समय अल्लाह की याद, उसके चिन्तन और उसकी प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयास में व्यतीत होता है। अल्लाह उनके हृदय की भूमि में ज्ञान और हिकमत की खेती

उगाता है। उसके मुख से हिकमत की बातें निकलती हैं। ऐसे लोगों से सांसारिक दोष और रोग छिपे नहीं रह सकते। उन्हें वह दृष्टि प्राप्त होती है कि वे उन दोषों को दूर करने के उपाय और उन रोगों का इलाज भी जान लेते हैं। और वे जब दुनिया से कूच करते हैं तो वे प्रत्येक आपदा से सुरक्षित सलामती के साथ संसार से प्रस्थान करते हैं। और अल्लाह उन्हें सलामती के साथ दारुस्सलाम (सलामती का घर) अर्थात् जन्नत में पहुँचा देता है।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा और अबू-ख़ल्लाद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

> "जब तुम देखो कि किसी बन्दे को दुनिया में अनासक्ति और अल्पभाषिता प्रदान हुई है तो उसके निकट रहा करो। क्योंकि उसे हिकमत (तत्त्वज्ञान) का इलहाम होता है।"
>
> (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : संसार में आसक्ति का न होना और अल्पभाषिता इसका लक्षण है कि बन्दे पर जीवन की वास्तविकता प्रकट हो गई है। उसपर यह स्पष्ट हो गया है कि सांसारिक जीवन में जिसकी ओर ध्यान देने की आवश्यकता है वह है परलोक की सफलता और अल्लाह की प्रसन्नता की प्राप्ति। इसलिए उसके पास व्यर्थ बातों के लिए समय नहीं होता। उसके मुख से अनर्गल बातें नहीं निकलती। स्वभावतः अल्पभाषिता उसकी पहचान बन जाती है। दुनिया के लोभ और लालच से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। ऐसे विशेष बन्दों को जो भोगविलास और ठाठ-बाट के इच्छुक नहीं होते अल्लाह उन्हें ऐसी निधि से सम्पन्न करता है जिससे बढ़कर किसी निधि की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। यह निधि या धन-ज्ञान तत्त्वदर्शिता और सत्य बोध का धन है। हिकमत या तत्त्वज्ञान अल्लाह की ओर से उसे मिलता है। इसी को हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) की एक हदीस में "अल्लाह उसके दिल में हिकमत उगाता है" से अभिव्यंजित किया गया है।

कितने अच्छे रहे

सबसे अच्छे लोग

(1) हज़रत उसमान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"तुममें सबसे उत्तम वह है जो क़ुरआन सीखे और उसकी शिक्षा दे।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : क़ुरआन से बढ़कर दुनिया में मार्गदर्शन की कोई किताब नहीं पाई जाती। क़ुरआन ज्ञान और कर्म दोनों ही पहलुओं से एक मार्गदर्शक ग्रन्थ है। विचार हो या कर्म, नैतिकता हो या आध्यात्म, राजनीति हो या अर्थव्यवस्था और समाज, यह ग्रन्थ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमारे मार्गदर्शक के लिए पर्याप्त है। क़ुरआन अल्लाह की ओर से मानवों के मार्गदर्शन ही के लिए अवतरित हुआ है। जिस किताब को यह दर्जा और हैसियत हासिल हो उसको सीखने और उसकी शिक्षा देनेवाले व्यक्ति से अच्छा और कौन हो सकता है।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुममें सबसे उत्तम वह है जो नैतिकता की दृष्टि से उत्तम हो।" (हदीस : बुख़ारी और मुस्लिम)

व्याख्या : नैतिकता ही वास्तव में मूल धर्म है। नैतिकता ही को पूर्णता प्रदान करने के लिए नबी (सल्ल॰) दुनिया में आए थे। नैतिकता का ईमान से गहरा सम्बन्ध है। ईमान ही से उच्च कोटि की नैतिकता का आविर्भाव होता है। फिर इसी नैतिकता से मोमिन का जीवन निर्मित होता है। इस्लामी जीवन का मूल आधार नैतिकता ही है। इसी लिए कर्म की तुला में सबसे बढ़कर वज़न नैतिकता का ही होगा। जिनका आचरण नैतिकता से भिन्न न हो उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाए कम है।

(3) हज़रत अनस (रज़ि॰) और हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जनसामान्य अल्लाह का परिवार है, तो लोगों में उत्तम व्यक्ति वह है जिसका व्यवहार अल्लाह के परिवार के साथ अच्छा हो।" (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : अल्लाह का अपने सृष्टजन से इतना गहरा सम्बन्ध है मानो उनकी हैसियत अल्लाह के कुटुम्ब की है। अब जो व्यक्ति अल्लाह के बन्दों की सेवा करता है वह मानो अल्लाह के कुटुम्ब की सेवा कर रहा है। अतः निश्चय ही अल्लाह की दृष्टि में वह एक उत्तम व्यक्ति होगा जिसका व्यवहार लोगों के साथ अच्छा होगा।

(4) हज़रत असमा-बिन्ते-यज़ीद (रज़ि॰) कहती हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना—

"क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि तुममें सबसे उत्तम लोग कौन हैं?"

सहाबा ने कहा कि हाँ ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल॰) ने कहा—

"तुममें सबसे उत्तम लोग वे हैं जिन्हें देखकर अल्लाह याद आए।" (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : इस हदीस में उत्तम व्यक्ति की पहचान यह बताई जा रही है कि उसे देखकर अल्लाह की याद आए। विदित है कि ऐसा व्यक्ति वही होगा जिसके शील-स्वभाव, चरित्र और भाषा हर चीज़ में ईशपरायणता प्रकट हो, जिसके जीवन में अल्लाह के गुणों का प्रतिबिम्ब दिखाई देगा। अल्लाह कृपाशील और दयावान है तो उसके यहाँ भी दया, करुणा और मृदुलता के गुण पाए जाएँगे। अल्लाह न्यायशील है तो वह भी कभी न्याय के विरुद्ध बात नहीं कर सकता। अल्लाह दानशील है तो दानशीलता उसका भी स्वभाव होगा। अल्लाह पर उसे पूर्ण विश्वास प्राप्त होगा। अल्लाह ही जीवन के संघर्ष में उसका वास्तविक सहारा होगा। अब ऐसे व्यक्ति को देखकर अल्लाह

की याद ताज़ा न हो तो अल्लाह की याद फिर कब आएगी।

(5) हज़रत सुराक़ा-बिन-मालिक-बिन-जोशुम (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हमारे सामने ख़ुतबा (भाषण) देते हुए कहा—

"तुममें उत्तम व्यक्ति वह है जो अपनी क़ौम की ओर से (ज़ुलम की) प्रतिरक्षा करे जब तक कि इस प्रतिरक्षा में वह किसी गुनाह में न पड़े।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : जिस व्यक्ति को अपने परिवार, क़बीले या क़ौम की कोई भी चिन्ता न हो उसे कोई भी पसन्द नहीं कर सकता। नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि उत्तम व्यक्ति वह है जो क़ौम की प्रतिरक्षा करता है। क़ौम पर कोई मुसीबत आ जाए तो ऐसा व्यक्ति चैन से नहीं बैठ सकता। यदि क़ौम पर कोई ज़ुल्म या ज़्यादती करता है तो वह क़ौम की प्रतिरक्षा में अपनी पूरी शक्ति लगा देगा। अलबत्ता इसके लिए आवश्यक है कि इस प्रतिरक्षा के सम्बन्ध में वह कोई अनुचित नीति न अपनाए और कोई गुनाह या ज़्यादती का काम न करे। इनसाफ़ और न्याय का हर दशा में पूरा ध्यान रखे।

उत्तम कर्म

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हमारे पास आए और कहा, "क्या तुम जानते हो कि प्रतापवान अल्लाह की दृष्टि में कौन-सा कर्म अत्यन्त प्रिय है? "किसी ने कहा कि नमाज़ और ज़कात, और किसी ने कहा कि वह कर्म जिहाद है। नबी (सल्ल॰) ने कहा "अल्लाह की दृष्टि में सबसे प्रिय कर्म है अल्लाह के लिए किसी से प्रेम करना और अल्लाह के लिए किसी से द्वेष करना।" (हदीस : मुसनद अहमद, अबू-दाऊद)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि दीन में सबसे अधिक महत्त्व उस कर्म को प्राप्त है जिसका सम्बन्ध मनुष्य के हृदय और उसकी

पवित्रतम भावनाओं से हो। मनुष्य किसी से प्रेम करे या किसी से द्वेष करे तो उसका यह प्रेम केवल अल्लाह के लिए हो। इसके पीछे कोई और चीज़ काम न कर रही हो, तो फिर उसके विशुद्ध मुस्लिम होने में कोई सन्देह नहीं रहता। मानो उसने धर्म की मूल आत्मा को पा लिया। उसका जीवन अनिवार्यतः ईमान के भाव से परिपूर्ण होगा।

(2) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"सबसे अच्छी नेकी आदमी का अपने बाप के पश्चात बाप के मित्रों के साथ अच्छा व्यवहार करना है।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : बेटे पर बाप का एक हक़ यह भी है कि बाप की मृत्यु के पश्चात वह अपने बाप के मित्रों और साथियों का आदर करे और उनके साथ उसका व्यवहार अच्छा हो। वे यह महसूस न करें कि उन्हें पहचानने और उनका आदर-भाव करनेवाला अब कोई नहीं है। बाप के मरने के पश्चात उसके मित्र और साथी कोई कमी महसूस न करें। विचार करें कि इस्लाम की शिक्षाओं में मानव की मानसिकता का कितना अधिक ध्यान रखा गया है। इससे इस्लाम के स्वाभाविक धर्म होने में किसी सन्देह की गुंजाइश शेष नहीं रहती।

(3) हज़रत अब्दुल्लाह-इब्ने-मसऊद (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से पूछा कि कौन-सा कर्म अल्लाह को सबसे अधिक प्रिय है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "नमाज़ को उसके समय पर अदा करना।" मैंने कहा कि फिर कौन-सा? आप (सल्ल॰) ने कहा, "माँ-बाप के साथ नेकी करना।" मैंने कहा फिर कौन-सा? आप (सल्ल॰) ने कहा, "अल्लाह के रास्ते में जिहाद करना।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में अल्लाह, माता-पिता और सच्चे दीन सभी के हक़ों पर प्रकाश डाला गया है। अल्लाह का सबसे बड़ा हक़ यह है

कि हम उसे अपना पूज्य और शासक स्वीकार करें। बन्दगी का हक़ अदा करने में कदापि सुस्ती न दिखाएँ। नमाज़ की केवल पाबन्दी ही न करें बल्कि उसे ठीक समय पर शौक़ और आनन्द के साथ अदा करने की कोशिश करें।

माता-पिता के हक़ों का ध्यान रखना भी आवश्यक है। उनका आदर और जहाँ तक सम्भव हो उनकी सेवा में सुस्ती से काम न लें। अल्लाह का सबसे बड़ा अनुग्रह जो उसने हम पर किया है वह उसका भेजा हुआ दीन और धर्म है। दीन की स्थापना, उसके स्थायित्व और प्रचार एवं प्रसार के लिए जान तोड़ कोशिश करना, यह दीन का हम पर ऐसा हक़ है जिसकी किसी युग में भी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

(4) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-हुब्शी अल-ख़ुशअमी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) से पूछा गया कि कौन-सा कर्म श्रेष्ठ है? आप (सल्ल॰) ने कहा—

"नमाज़ में देर तक खड़ा होना।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : दीन में सजदों के आधिक्य के साथ नमाज़ में देर तक खड़े रहना अत्यन्त उत्तम है। सजदे में बन्दा अपने-आप को अल्लाह के सामने डाल देता है। सजदा वास्तव में पूर्ण समर्पण है। बन्दा अल्लाह के आगे देर तक खड़ा रहकर उससे अपने विशेष सम्बन्ध को व्यक्त करता है। वह अपने उस विश्वास को व्यक्त करता है जो वह अपने रब के साथ रखता है। वह अल्लाह के आगे नमाज़ में खड़े होकर अपनी बन्दगी की प्रतिज्ञा की पुनरावृत्ति करता है। वह प्रार्थना करता है कि उसका दिल कभी उसके रब की ओर से गाफ़िल न हो।

(5) हज़रत सौबान (रज़ि॰) (जो नबी सल्ल॰ के आज़ाद किए हुए गुलाम थे) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अधिक-से-अधिक सजदा किया करो, क्योंकि अल्लाह के लिए तुम्हारे एक सजदे से अनिवार्यतः अल्लाह तुम्हारा एक दर्जा ऊँचा करेगा और उससे तुम्हारा एक गुनाह क्षमा करेगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अपनी स्तुति और सजदा अल्लाह को बहुत प्रिय है। और मनुष्य के पास सबसे बहुमूल्य निधि सजदे की भावना ही है। सजदे में हम अल्लाह से बहुत निकट हो जाते हैं। इसलिए अनिवार्यतः सजदे से अल्लाह मनुष्य का दर्जा ऊँचा करता है और उसके गुनाह को क्षमा करता है। हमारे पास सजदा है और उसके पास रहमतों का कभी समाप्त न होनेवाला ख़ज़ाना है। उसकी रहमतों से लाभान्वित होने का साधन सजदा और आज्ञापालन के सिवा हो भी क्या सकता है।

(6) हज़रत आइशा (रज़ि॰) बयान करती हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को सबसे प्रिय वह कर्म था जिसको मनुष्य सदैव करता रहे। (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : किसी कर्म के निरन्तर करते रहने से वह कर्म आदमी का चरित्र बन जाता है। फिर उसकी हैसियत किसी सामयिक प्रतिक्रिया की नहीं रहती बल्कि वह मनुष्य की नैतिकता का प्रतीक होता है।

सौभाग्यशाली और सफल लोग

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-बुस्र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि एक बार नबी (सल्ल॰) के पास एक ग्रामीण आया और कहा कि कौन व्यक्ति सबसे अच्छा है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "सौभाग्य है उस व्यक्ति का जिसे दीर्घ आयु मिली और उसके कर्म अच्छे हुए"। उसने कहा कि ऐ अल्लाह के रसूल कौन-सा कर्म सबसे उत्तम है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "जब तुम दुनिया छोड़ो तो तुम्हारी ज़बान अल्लाह के ज़िक्र से तर हो।" (हदीस : मुस्नद अहमद, तिरमिज़ी)

व्याख्या : इससे बढ़कर ख़ुशनसीबी की बात और क्या हो सकती है कि आदमी को दीर्घायु प्राप्त हो और उसे अधिक-से-अधिक अच्छे कर्म करने के अवसर उपलब्ध हों। अल्लाह की बन्दगी और उसके

बन्दों की सेवा का श्रेय उसे अधिक-से-अधिक प्राप्त हो। अच्छे कर्मों की सूची तैयार करनी सम्भव नहीं। अच्छे कर्म असंख्य हैं और वे विभिन्न प्रकार के हैं। लेकिन नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि सबसे बेहतरीन और उत्कर्ष कर्म इसे कहेंगे कि आदमी मरते दम तक अपने रब को न भूले। ज़बान पर नाम आए तो पहले उसी का नाम आए। यहाँ तक कि मृत्यु के समय भी ज़बान पर उसी का नाम हो। इस हदीस में इस बात की ओर भी संकेत किया गया है कि अल्लाह का ज़िक्र और उसका नाम लेना कोई शुष्क और नीरस कर्म नहीं है। बल्कि अल्लाह का नाम वह प्रिय नाम है जिससे ज़बानों को तरी और माधुर्य प्राप्त होता है। आत्मा जिससे आनन्द विभोर हो जाती है और जिससे आकाश और धरती की समस्त चीज़ों में अर्थवत्ता दौड़ जाती है।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-बुस्र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"सौभाग्य उस व्यक्ति का जिसके कर्म-पत्र में अधिक-से-अधिक क्षमा-याचना की प्रार्थना पाई जाए।"

(हदीस : इब्ने-माजा, नसई)

नसई की हदीस में ये शब्द भी पाए जाते हैं कि "रात-दिन के कर्म में (सबसे अधिक क्षमा-याचना का कर्म पाया जाए)।"

व्याख्या : अल्लाह के उपकार अपार हैं जिनके प्रति आभार प्रकट करने का हक़ अदा करना मनुष्य के बस में नहीं। हमारे लिए भी सम्भव नहीं कि उसकी आज्ञापालन और बन्दगी का हक़ अदा कर सकें। इस स्थिति में तो 'तौबा' और 'क्षमा-याचना की प्रार्थना' ही बन्दे के लिए सबसे बड़ा सहारा है। क्षमा-याचना ही से हमारी कोताहियों की क्षति-पूर्ति सम्भव है। इसी लिए हदीसों में तौबा और क्षमा-याचना की उत्कृष्टता का वर्णन मिलता है। एक रिवायत में तो यहाँ तक आया है कि जब फ़रिश्ते बन्दे के कर्म-पत्र लेकर ऊपर जाते

हैं तो अल्लाह कर्म-पत्र के आरम्भ और अन्त में क्षमा-याचना की प्रार्थना देखकर कहता है कि मैंने बन्दे के वे समस्त गुनाह क्षमा कर दिए जो कर्म-पत्र के दोनों किनारों के मध्य अंकित हैं।

उत्तम चीज़ें

उत्तम इस्लाम

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन उमर (रज़ि॰) कहते हैं कि एक व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से पूछा कि कौन-सा इस्लाम (का काम) उत्तम है? आप (सल्ल॰) ने कहा—

"खाना खिलाना, प्रत्येक व्यक्ति को सलाम करना, तुम उसे पहचानते हो या नहीं।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : इस्लाम ने कर्म पर जितना ज़ोर दिया उसका उदाहरण नहीं मिलेगा। खाना खिलाने को विशेष रूप से मोहताजों और भूखों को और हरेक की सलामती चाहने को, जिसकी अभिव्यक्ति सलाम करने से होती है, यथातथ्य इस्लाम बल्कि उत्तम इस्लाम कहा गया। काश, इस्लाम की पवित्र शिक्षाओं को हम समझने और उनको व्यवहार में लाने का पूर्ण रूप से प्रयास कर सकें।

उत्तम दान

(1) हजरत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"एक दीनार तुमने अल्लाह की राह (जिहाद) में ख़र्च किया, एक दीनार तुमने गर्दन छुड़ाने में ख़र्च किया, एक दीनार तुमने मोहताज को दान किया और एक दीनार तुमने अपने घरवालों पर ख़र्च किया। तो इसमें सबसे बढ़कर पुण्य और शुभफल उसमें है जो तुमने अपने घरवालों पर ख़र्च किया।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : मालूम हुआ कि घरवालों के हक़ को सबपर प्राथमिकता प्राप्त है। मनुष्य अपने घरवालों और अपने बाल-बच्चों पर

ख़र्च करता ही है। इस्लाम इसे दुनियादारी नहीं कहता, बल्कि उसकी दृष्टि में तो सबसे उत्तम ख़र्च वही है जो घरवालों और अपने बाल-बच्चों पर किया जाए। इसलिए इसमें पुण्य और फल भी दूसरे नेक कामों में ख़र्च करने की अपेक्षा कहीं अधिक प्राप्त होता है। इससे विदित होता है कि इस्लाम में वह चीज़ भी सर्वथा धर्म है जिसको साधारणतः लोग दुनियादारी या सांसारिकता का काम समझते हैं। अलबत्ता शर्त यह है कि हमारे सभी काम अल्लाह की प्रसन्नता के लिए और उसके आदेशानुसार हों।

(2) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"यदि मनुष्य अपने जीवन में एक दिरहम दान करे तो वह उससे उत्तम है जो वह मरते समय सौ दिरहम दान करे।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : मृत्यु के समय तो मनुष्य यह समझता ही है कि अब उसका माल उसके पास नहीं रहेगा। इसलिए उस समय यदि वह दान करता है तो यह कोई ख़ास कमाल की बात नहीं। ख़ूबी यह है कि मनुष्य उस समय, जबकि वह समझता हो कि अभी उसे दुनिया में रहना है और यहाँ के माल और यहाँ की चीज़ों से लाभ उठाने के पर्याप्त अवसर उसे प्राप्त हैं, दान करता है तो इस दान का बड़ा मूल्य है।

उत्तम नमाज़

(1) हज़रत जाबिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"उत्तम नमाज़ वह है जिसमें देर तक खड़ा रहा जाए।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : नमाज़ में, विशेष रूप से रात (तहज्जुद) की नफ़्ल नमाज़ में, देर तक खड़े रहने का बड़ा महत्व है। आदमी देर तक

अपने रब के आगे खड़ा होकर अपनी बन्दगी का प्रदर्शन और अपने रब और प्रभु होने को स्वीकार करता है और अपने रब के आगे खड़े होने को बड़े सौभाग्य की बात समझता है।

उत्तम ईश-स्मरण

(1) हज़रत जाबिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "उत्तम स्मरण ला-इला-ह इल्लल्लाह (अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं) है। और उत्तम पुकार अल्हम्दुलिल्लाह (सारी प्रशंसाएँ अल्लाह के लिए) है।"
>
> (हदीस : तिरमिज़ी, इब्ने-माजा)

व्याख्या : ला-इला-ह इल्लल्लाह के वाक्य में सबसे बड़े तथ्य को व्यक्त किया गया है, जो सत्य होने के साथ-साथ मनुष्य के लिए अत्यन्त आनन्दमय और मधुर भी है। इसलिए इस वाक्य को उत्तम स्मरण कहना यथातथ्य है। स्मरण से सत्य की याददिहानी होती है और आदमी के दिल से ग़फ़लत दूर होती है। उस व्यक्ति से बढ़कर ग़ाफ़िल और कौन हो सकता है जो अपने परम-पूज्य से ग़ाफ़िल होकर जीवन व्यतीत कर रहा हो।

अल्हम्दुलिल्लाह को उत्तम पुकार कहा गया। इसमें सन्देह नहीं कि अल्हम्दुलिल्लाह एक महावाक्य है। समस्त प्रशंसाओं और स्तुति का पात्र अल्लाह ही है। यह ऐसा ज्ञान है जिससे बढ़कर कोई ज्ञान और बुद्धत्व नहीं हो सकता। क़ुरआन की सूरा-1 फ़ातिहा की पहली आयत में इसी महान तथ्य को व्यक्त किया गया है कि समस्त प्रशंसाएँ संसार के प्रभु अल्लाह के लिए हैं। यही सूरा-1 फ़ातिहा, सम्पूर्ण क़ुरआन का सार-तत्व है।

उत्तम उपासना

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"(अल्लाह के प्रति) सदाशा और अच्छा गुमान उत्तम उपासना है।" (हदीस : मुसनद अहमद, अबू-दाऊद)

व्याख्या : यूँ तो जीवन में कितने ही मामलों में सदाशा से काम लेना ही पड़ता है। इसके बिना किसी सामाजिकता की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। अल्लाह के साथ अच्छा गुमान और उसके प्रति सदाशा तो बन्दे का सर्वप्रथम कर्तव्य है। यदि अपने रब के साथ उसे सदाशा नहीं तो फिर इस्लाम का अनुपालन उसके लिए सम्भव नहीं हो सकता। अल्लाह के साथ सदाशा उत्तम इबादतों में से है। इस अर्थपूर्ण वाक्य पर जितना भी विचार करें इसकी अर्थवत्ता स्पष्ट होती चली जाएगी। नबी (सल्ल॰) अपनी मृत्यु से तीन दिन पहले कह रहे थे कि "तुममें से कोई मरे तो इस दशा में मरे कि वह अल्लाह के साथ अच्छा गुमान रखता हो।" (हदीस : मुस्लिम)

उत्तम जिहाद

(1) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"उत्तम जिहाद यह है कि ज़ालिम सम्राट के समक्ष इनसाफ़ की बात कहे या ज़ालिम अधिकारी के समक्ष।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : इसमें सन्देह नहीं कि ज़ालिम और जाबिर शासक के समक्ष न्याय और इनसाफ़ की बात कहनी, जिसके कारण जान भी ख़तरे में पड़ सकती है, किसी जिहाद से कम नहीं। इस्लाम कायरता की नहीं, वीरता और बहादुरी की शिक्षा देता है। इस्लाम का विशेष सन्देश ही यह है कि सत्य को संसार के समक्ष बिना किसी लाग-लपेट के प्रस्तुत किया जाए यद्यपि व्यक्तिगत लाभ और मस्लहत की अपेक्षा और ही क्यों न हो।

उत्तम वाक्य

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के

रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह की दृष्टि में उत्तम वाक्य है : सुब्हानल्लाहि व बि हमदिही (महान और उच्चतर है अल्लाह अपनी समस्त प्रशंसाओं के साथ)।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : जिस वाक्य में अल्लाह की महानता और उच्चता व्यक्त की गई हो और जो उसकी स्तुति और प्रशंसा हो उससे उत्तम वाक्य और क्या हो सकता है। इस हदीस में वास्तव में इसकी याददिहानी कराई गई है कि सांसारिक जीवन में मनुष्य कहीं भटककर अल्लाह की उच्चता एवं महानता और उसके सौन्दर्य एवं परिपूर्णता की ओर से ग़ाफ़िल न हो जाए। जीवन स्रोत से अपना नाता बनाए रखना अपने अस्तित्व और कल्याण के लिए अनिवार्य है। इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

उत्तम नाम

(1) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम्हारे नामों में सबसे प्रिय नाम अल्लाह की दृष्टि में अब्दुल्लाह और अब्दुर्रहमान हैं।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात वे नाम जिनसे बन्दे की वास्तविक हैसियत ज़ाहिर होती हो और जिनसे उस सम्बन्ध का पता चलता हो जो सम्बन्ध वह अपने रब से रखता है, अब्दुल्लाह और अब्दुर्रहमान ऐसे ही नाम हैं। इन नामों से बन्दे का बन्दा होना भी ज़ाहिर हो रहा है और इनसे यह बात भी ज़ाहिर हो रही है कि जिसका वह बन्दा और ग़ुलाम है वह अल्लाह या रहमान के सिवा कोई और नहीं हो सकता।

उत्तम क़तरे (बूँद)

(1) हज़रत अबू-उमामा सुदैय-बिन-अजलान अल-बाहिली (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"कोई चीज़ अल्लाह को इतनी प्रिय नहीं जितने वे दो क़तरे और दो निशान प्रिय हैं। एक क़तरा आँसू का जो अल्लाह के ख़ौफ़ से गिरे और दूसरा ख़ून का वह क़तरा जो अल्लाह की राह में गिराया जाए। और दो निशानों में से एक निशान क़दम का जो अल्लाह की राह में हो और दूसरा वह जो सर्वोच्च अल्लाह के नियत किए हुए कर्मों में से किसी कर्म के करने से लगे। (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : आँसू का क़तरा अल्लाह को क्यों न प्रिय होगा जो इस बात का साक्षी है कि बन्दे के दिल में अल्लाह का भय और उसका डर पाया जाता है। वह अपने रब की महानता और उसके प्रताप से अनभिज्ञ नहीं है। अल्लाह के भय के कारण आँसुओं के जो क़तरे आँखों से टपकेंगे उनका प्रभाव अवश्य होगा। दूसरा क़तरा जो अल्लाह को प्रिय है वह उस रक्त का क़तरा है जो अल्लाह की राह में लड़नेवाले या शहीद के शरीर से गिरा है। रक्त का जो क़तरा अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने और उसके धर्म को ऊँचा करने के सम्बन्ध में गिरा हो वह अनिवार्यतः प्रिय होगा।

उत्तम मार्गदर्शन

(1) हज़रत जाबिर (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) अपनी नमाज़ में 'तशह्हुद' (अर्थात् यह पढ़ना कि मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं और गवाही देता हूँ कि मुहम्मद उसके बन्दे और उसके रसूल हैं) के बाद कहा करते थे कि—

"सबसे उत्तम कलाम (वाणी) अल्लाह का कलाम है और सबसे उत्तम मार्ग मुहम्मद (सल्ल॰) का है।" (हदीस : नसई)

व्याख्या : वाणी यदि अल्लाह की है तो उसके उत्तम होने में कौन सन्देह कर सकता है। जिन लोगों ने क़ुरआन का अध्ययन किया है और जो लोग अल्लाह के कलाम से आनन्दित हुए हैं उनका मन और उनकी आत्मा इस बात की साक्षी है कि क़ुरआन से महानतम और

मधुरतम वाणी की मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सकता।

नबी (सल्ल॰) ने जीवन का जो मार्ग दिखाया है और जिस सीधे मार्ग पर चलकर आप (सल्ल॰) ने हमारा मार्गदर्शन किया है उससे बढ़कर सीधे और सच्चे मार्ग की कल्पना भी हमारे लिए सम्भव नहीं।

उत्तम शासक

(1) हज़रत औफ़-बिन-मालिक अशजई (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तुम्हारे उत्तम हाकिम वे हैं जिनको तुम चाहो और वे तुम्हें चाहें। तुम उन्हें नेक दुआ दो और वे तुम्हें नेक दुआ दें।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : शासक और प्रजा के मध्य क्या सम्बन्ध होना चाहिए इस हदीस में इसे अत्यन्त अच्छे ढंग से बयान किया गया है। प्रजा अपने शासक से प्रसन्न और शासक अपनी प्रजा की ओर से सन्तुष्ट हो। दोनों एक-दूसरे को प्रिय और दोनों एक-दूसरे के लिए दुआ करनेवाले हों। यह वह मानदण्ड है जिसपर इस्लाम चाहता है कि शासक पूरे उतरें।

उत्तम स्थान

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह के निकट उत्तम स्थान मस्जिदें हैं।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : नगर हो या ग्राम, मस्जिदों से बढ़कर किसी उत्तम स्थान का नाम नहीं लिया जा सकता। मस्जिदें सांसारिक जीवन में हमें जगत् के स्रष्टा और अधीश की याद दिलाती हैं। वे यह भी याद दिलाती हैं कि इस जीवन के पश्चात् एक पारलौकिक जीवन भी है और वही वास्तविक और शाश्वत जीवन है।

उत्तम निधि

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"दुनिया की हैसियत निधि (उपभोग्य) की है, और दुनिया की उत्तम निधि नेक स्त्री है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह हदीस इस बात का प्रमाण है कि इस्लाम प्रकृति सम्मत धर्म है। संसार की रचना अल्लाह ने मानवों के लिए की है कि वे इसमें आबाद हों और जो कुछ अल्लाह ने इसमें सामग्री और आजीविका आदि जुटाई है उससे लाभान्वित हों। किन्तु इसके साथ वे यह भी जानें कि उनका कोई पालनकर्ता भी है। उसका उन्हें आभारी होना चाहिए। वे उसके कृतज्ञ और आज्ञाकारी होंगे तो अल्लाह उन्हें परलोक की निधियों और सुखद वस्तुओं से भी सम्पन्न करेगा। नबी (सल्ल॰) सचेत करते हैं कि दुनिया की चीज़ों में बेहतरीन चीज़ स्त्री है। शर्त यह है कि वह नेक हो। इसलिए स्त्री के अपमान से बचना चाहिए। किसी भी पहलू से उसका अपमान नहीं होने देना चाहिए। उसके साथ तुम्हारा व्यवहार अच्छा हो। उसकी सहचरता से जीवन की कठिनाइयाँ सरल हो जाती हैं और मनुष्य को शान्ति का जीवन प्राप्त हो जाता है।

विशेष प्रिय चीज़ें

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"(संसार की चीज़ों में) सुगन्ध और स्त्रियाँ मुझे प्रिय हैं और मेरी आँखों की ठण्डक नमाज़ में है।"

(हदीस : मुसनद अहमद, नसई)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि मनुष्य की अभिरुचि यदि विकृत न हो तो उसके जीवन में अल्लाह ने विभिन्न प्रकार की सुखद चीज़ें उसे दे रखी हैं। सामान्य सांसारिक नेमतों के साथ आध्यात्मिक

नेमत से भी उसने इनसान को वंचित नहीं रखा। सुगन्ध भी हमारे लिए सूक्ष्म नेमतों में से है। स्त्रियाँ भी प्रिय बनाई गई हैं और नबी (सल्ल॰) के कथन से ज्ञात होता है कि आँखों की ठण्डक और शीतलता अल्लाह ने नमाज़ में रखी है। नमाज़ के अतिरिक्त वह शान्ति और आनन्द कहीं और नहीं मिल सकता, जो हमारी आत्मा की सबसे बड़ी ज़रूरत है।

हिकमत (तत्त्वदर्शिता)

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

> "जो बन्दा दुनिया से लगाव न रखे तो अनिवार्यतः अल्लाह उसके दिल में हिकमत उगाएगा और उसकी ज़बान पर हिकमत जारी करेगा और दुनिया का दोष तथा उसकी बीमारियाँ और उनकी दवा-इलाज सब उसे सुझा देगा और दुनिया से सलामती के साथ उसे निकालकर सलामती के घर (जन्नत) में पहुँचा देगा।" (हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : इस हदीस में एक नक़द इनाम और बदला अर्थात् हिकमत का उल्लेख किया गया है। दुनिया में जिसको हिकमत की दौलत मिली उसे बहुत बड़ा नक़द इनाम प्रदान हुआ। लेकिन इसके पात्र वे लोग होंगे जो दुनिया में विशेष रुचि नहीं रखते। अर्थात् दुनिया के महत्व और चाहत को अपने दिलों से निकाल देते हैं। मौलिक रूप से वे अल्लाह की प्रसन्नता और उसकी चाहत में जीते हैं। ऐसे लोगों को अल्लाह हिकमत की दौलत प्रदान करता है। हिकमत वास्तव में एक इल्हामी ज्ञान और प्रकाश है। हिकमत में आदमी को सत्य का ऐसा बोध होता है जिसका सम्बन्ध तर्क से नहीं इल्हाम से होता है। एक हदीस में इसको इल्क़ा या इल्हाम की संज्ञा दी गई है। और कहा गया है कि जिस बन्दे को ख़ुदा यह प्रदान करता है कि उसे दुनिया से विशेष लगाव नहीं रहता और

अल्पभाषिता जिसकी शैली होती है। उसके सामीप्य में आओ, क्योंकि उसपर हिकमत का इल्हाम होता है। इस हिकमत का प्रभाव यह होता है कि आदमी के मुख से हिकमत की बातें निकलती हैं। उसकी बातें ज्ञानपूर्ण होती हैं। वह संसार की सुन्दरता और असुन्दरता से परिचित हो जाता है। दुनिया के ऐबों और रोगों के उपचार को भी वह जान लेता है। अतः संसार के विकार और रोगों से वह सुरक्षित रहता है। वह किसी आपदा का शिकार नहीं होता, यहाँ तक कि उसकी मृत्यु का समय आ जाता है और अल्लाह उसे सलामती के घर अर्थात् जन्नत में स्थान प्रदान करता है।

ख़राबी की सूरत

बुरे लोग

(1) हज़रत अबू-उमामा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"क़ियामत के दिन दर्जे की दृष्टि से सबसे बुरा मनुष्य वह बन्दा होगा जो दूसरे की दुनिया बनाने के लिए अपनी आख़िरत को नष्ट कर दे।" (हदीस : इब्ने-माजा)

व्याख्या : इससे बढ़कर दुर्भाग्य की बात और क्या होगी कि मनुष्य अपनी आख़िरत की तरफ़ से बेपरवाह होकर दूसरों की दुनिया बनाने के लिए ग़लत और ज़ुल्म और ज़्यादती के कामों में उसकी सहायता करे। इस प्रकार दूसरों की दुनिया बन सके या न बन सके लेकिन उसकी अपनी आख़िरत तो अनिवार्यतः तबाह होकर रहती है। दुनिया में उसे इस घाटे का एहसास हो या न हो लेकिन आख़िरत में वह अपने आपको अत्यन्त निकृष्ट लोगों में पाएगा।

(2) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"क्या मैं तुम्हें न बताऊँ कि दर्जे की दृष्टि से सबसे बुरा मनुष्य कौन है?" लोगों ने कहा कि हाँ बताएँ। आप (सल्ल॰) ने कहा, "वह व्यक्ति जो अल्लाह के नाम पर लोगों से माँगे और उसे दिया न जाए।" (हदीस : मुस्नद अहमद)

व्याख्या : उससे बुरा कौन होगा जो अपना विश्वास खो चुका हो। यहाँ तक कि वह अल्लाह के नाम से भी लोगों के आगे हाथ फैलाता है फिर भी कोई ध्यान नहीं देता।

(3) हज़रत आइशा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने

कहा—

"अल्लाह को सबसे अधिक अप्रिय मनुष्य वह है जो अत्यन्त झगड़ालू हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : झगड़ालू लोगों से दुनिया पनाह माँगती है। लोग शान्तिपूर्वक रह सकें इससे उसको कोई दिलचस्पी नहीं होती। ऐसे व्यक्ति का अस्तित्व जीवन रूपी पृष्ठ पर कुरूप दाग़ के सिवा और कुछ नहीं होता। अल्लाह की दृष्टि में तो वह घृणित होता ही है, लोग भी उसे आदर की दृष्टि से नहीं देखते।

(4) हज़रत आइज़-बिन-अम्र (रज़ि॰) बयान करते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना—

"शासकों में सबसे बुराशासक वह है जो ज़ालिम हो।"

(हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : शासक और हाकिम की ज़िम्मेदारी होती है कि वह लोगों के मध्य न्याय और इनसाफ़ से काम ले। अब यदि हाकिम स्वयं ज़ुल्म ढाने लगे तो उसके बुरे हाकिम होने में कोई सन्देह नहीं रहता।

(5) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, "क्या मैं तुम्हारे उत्तम लोगों को तुम्हारे निकृष्ट लोगों से अलग करके तुम्हें उनकी ख़बर दूँ?" यह बात आप (सल्ल॰) ने तीन बार कही। इसपर एक व्यक्ति ने कहा कि हाँ, अवश्य ख़बर दें। नबी (सल्ल॰) ने कहा,

"तुममें उत्तम व्यक्ति वह है जिससे भलाई की आशा रखी जाए और जिसकी बुराई से लोग सुरक्षित हों, और तुममें सबसे बुरा व्यक्ति वह है जिससे भलाई की कोई आशा न की जा सके और जिसकी बुराई से लोग सुरक्षित न हों।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : यह हदीस बड़ी शिक्षाप्रद है। नबी (सल्ल०) ने हमारे हाथों में एक ऐसा दर्पण दे दिया है जिसके द्वारा हम उत्तम और निकृष्ट दोनों प्रकार के लोगों को आसानी से पहचान सकते हैं। काश! इस हदीस की रौशनी में हम अपने सुधार की चिन्ता कर सकें। क्योंकि इसके बिना एक आदर्श समाज की हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

(6) हज़रत अबू-बकरह (रज़ि०) बयान करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) से प्रश्न किया गया कि सबसे अच्छा व्यक्ति कौन है? आप (सल्ल०) ने कहा, "जिसको लम्बी आयु मिली और उसने अच्छे कर्म किए।" पूछा गया कि लोगों में निकृष्ट व्यक्ति कौन है? आप (सल्ल०) ने कहा, "जिसे दीर्घायु मिली लेकिन उसने बुरे कर्म किए।"

(हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : अल्लाह ने एक व्यक्ति को दीर्घायु प्रदान की और उसने उसे अच्छे कामों में लगाया। यह बन्दे की ओर से उत्तम कृतज्ञता है। इसके विपरीत अकृतज्ञता के अतिरिक्त इसे और कुछ नहीं कहा जा सकता कि अल्लाह तो हमें दीर्घायु प्रदान करे और हम उसे उसकी अवज्ञा और दुष्कर्मों में गुज़ार दें।

निकृष्ट कर्म

(1) हज़रत जुबैर-बिन-मुतइम (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"रिश्ते-नातों को काट देनेवाला जन्नत में प्रवेश न करेगा।"

(हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : रिश्ते-नातों ही से परिवार और फिर परिवारों से मिलकर एक समाज का निर्माण होता है। यह परिवार और समाज यदि स्वस्थ और आदर्श हों तो यह दुनिया में जन्नत की प्रतिच्छाया

होते हैं। अब जो कोई रिश्ते-नातों को काटता है उसका जन्नत से क्या सम्बन्ध हो सकता है।

(2) हज़रत मुग़ीरा-बिन-शोअबा (रज़ि०) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल०) को यह कहते हुए सुना कि—

"अल्लाह को तुम्हारे लिए तीन चीज़ें अप्रिय हैं। व्यर्थ वार्ता, माल बरबाद करना और बहुत माँगना।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : ये तीनों ही चीज़ें ऐसी हैं कि जिनको कभी भी पसन्द नहीं किया जा सकता। व्यर्थ बातें करनेवाले की कोई प्रतिष्ठा और सम्मान नहीं होता। माल को बहुत समझ-बूझकर ख़र्च करना चाहिए। उसे अनुचित रूप में ख़र्च करना इसके परिणाम से अनभिज्ञता है। इसका परिणाम परेशानी के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। अत्यधिक प्रश्न करना या माँगना दोनों ही अप्रिय कर्म हैं। जो लोग कर्मठ और काम करनेवाले होते हैं उनके पास अधिक प्रश्न नहीं होते। उनकी अभिरुचि वास्तव में कर्म में होती है। रही बात माँगने की तो इसे कौन अच्छा कह सकता है। और फिर माँगने की आदत डाल लेना तो अत्यन्त अनुचित बात होगी।

(3) हज़रत अब्दुल्लाह (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल०) ने कहा—

"मुसलमान को गाली देना फ़िस्क़ (दुराचार) है और उससे लड़ना कुफ़्र (अधर्म) है।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : किसी को गाली देने और एक-दूसरे पर हमला करने को कोई सभ्य व्यक्ति पसन्द नहीं कर सकता। फिर किसी मुसलमान को गाली देना और उससे लड़ना तो गम्भीर अपराध होगा। एक मुसलमान व्यक्ति अल्लाह की अमान और उसकी सुरक्षा में होता है। अल्लाह की अमान और उसकी सुरक्षा की अवहेलना करके किसी मुसलमान के लिए अपशब्द का प्रयोग या उसकी हत्या के लिए तत्पर होना फ़िस्क़ और कुफ़्र के अतिरिक्त और क्या हो सकता है।

विनाशकारी चीज़ें

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा, "सात विनाशकारी बातों से दूर रहो।" लोगों ने पूछा कि अल्लाह के रसूल! वे बातें कौन-सी हैं? आप (सल्ल॰) ने कहा,

"अल्लाह का सहभागी ठहराना, जादू करना, किसी की अकारण हत्या करना जिसको अल्लाह ने वर्जित ठहराया है, ब्याज खाना, यतीम या अनाथ का माल खाना, जिहाद से पीठ फेरकर भाग जाना और पाकदामन, शरीफ़ एवं भोली-भाली स्त्री पर व्यभिचार का मिथ्यारोपण।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : विनाशकारी चीज़ों में से जिन चीज़ों का उल्लेख किया गया है उनका सम्बन्ध जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से है। धारणा और मनुष्य के सामाजिक और आर्थिक जीवन से लेकर जिहाद के मैदान तक का उल्लेख किया गया है। विनाशकारी चीज़ों में सबसे पहली चीज़ शिर्क या बहुदेववाद है, जिसके तथ्यहीन होने की साक्षी पूर्ण जगत् और उसकी व्यवस्था है। स्वयं मनुष्य की अपनी मानसिकता भी इसकी विरोधी है। जादू-टोना और अन्य बुरी चीज़ें आदमी को कहाँ ले जाकर गिराती हैं इसका साधारणतः अनुमान भी नहीं किया जा सकता। अकारण हत्या और शरीफ़ स्त्रियों पर व्यभिचार का आरोपण किसी स्वस्थ और आदर्श समाज के लक्षण नहीं हो सकते। ब्याज के प्रचलन ने आज सम्पूर्ण समाज को पूरी तरह जकड़ रखा है। इसके कारण आर्थिक असन्तुलन और अत्याचार के जो उदहारण हमारे सामने आते हैं वे हमारी आँखें खोलने के लिए पर्याप्त हैं।

युद्ध क्षेत्र से पीठ फेरकर भागनेवाला एक ऐसा अपराध करता है जिसके कारण न केवल यह कि वह सत्य से दूर जा पड़ता है बल्कि उसकी यह हरकत पूरी सेना को यहाँ तक कि पूरी क़ौम को ख़तरे में

डाल सकती है। इस हदीस में असाधारण चेतावनी दी गई है। इसमें पैग़म्बर की दृष्टि और विवेक स्पष्ट रूप से व्यक्त होता है।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"जान लो कि विनष्ट हुए वे लोग जो बातों और मामलों में अति से काम लेते हैं।" यह बात आप (सल्ल॰) ने तीन बार कही। (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : भाषण हो या बात-चीत, लेखन हो या कोई मामला उसमें अति से काम लेना उचित नहीं। कृत्रिमता से काम लेने से साधारणतः सच्चाई और न्याय का ख़ून होता है और इसके कारण मनुष्य के अपने व्यक्तित्व को भी आघात पहुँचता है।

बड़े गुनाह

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-मसऊद (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने या किसी व्यक्ति ने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से पूछा कि अल्लाह की दृष्टि में सबसे बड़ा गुनाह क्या है? आप (सल्ल॰) ने कहा, "किसी को अल्लाह का प्रतिद्वन्द्वी ठहराना, जबकि उसने तुम्हें पैदा किया।" मैंने कहा कि फिर कौन-सा? आप (सल्ल॰) ने कहा, "औलाद को इस डर से मार डालना कि वह तुम्हारे खाने में शीरक होगी।" मैंने कहा फिर कौन-सा? आप (सल्ल॰) ने कहा, "अपने पड़ोसी की पत्नी से व्यभिचार करना।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में जिन बड़े गुनाहों का उल्लेख किया गया हैं उनकी ख़राबी को हर व्यक्ति अच्छी तरह महसूस कर सकता है। सबसे बड़ा गुनाह तो अल्लाह का प्रतिद्वन्द्वी ठहराना है। सबका स्रष्टा और अधीश अल्लाह है। फिर किसी दूसरे का कृतज्ञ बन्दा बनना और उसे अल्लाह का समकक्ष और प्रतिद्वन्द्वी ठहराना और उसे सजदा करके उसके प्रति बन्दगी का प्रदर्शन करना वह महापाप है जो कभी

भी क्षम्य नहीं हो सकता।

फिर औलाद की हत्या करने को कि वह खाने में शरीक होगी बड़ा गुनाह घोषित किया गया है। यह वास्तव में दोहरा गुनाह है। एक तो हत्या और दूसरे यह भूल जाना कि वास्तव में आजीविका जुटानेवाला अल्लाह ही है, न कि कोई दूसरा। माता-पिता तो मात्र साधन होते हैं। वास्तविक दाता तो सबका अल्लाह ही है।

व्यभिचार और ज़िना स्वयं एक महापाप है, फिर पड़ोस में रहनेवाले पड़ोसी या मित्र की पत्नी से व्यभिचार करना तो ऐसा पाप है जिसमें वही लिप्त हो सकता है जो अपनी नीचता और गिरावट की सीमा को लांघ चुका हो।

(2) हज़रत अबू-बकरा (रज़ि॰) अपने पिता के माध्यम से रिवायत करते हैं कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, "क्या मैं तुम्हें सबसे बड़े गुनाह की ख़बर दूँ?" लोगों ने कहा क्यों नहीं, ऐ अल्लाह के रसूल! आप (सल्ल॰) ने कहा, "अल्लाह का शरीक ठहराना और माता-पिता की अवज्ञा करना।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इस हदीस में शिर्क और बहुदेववाद के अतिरिक्त माता-पिता की अवज्ञा की गणना भी सबसे बड़े गुनाहों में की गई है। इसमें सन्देह नहीं कि अल्लाह के अतिरिक्त जिनके उपकार सबसे अधिक दिखाई देते हैं वे मनुष्य पर उसके माता-पिता के उपकार ही हैं। यही कारण है कि क़ुरआन में बहुदेववाद से दूर रहने की ताकीद के पश्चात जिस चीज़ की विशेष रूप से ताकीद की गई है वह माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार है।

वह हममें से नहीं

(1) हज़रत जुबैर-बिन-मुतइम (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"वह व्यक्ति हममें से नहीं जो पक्षपात की ओर बुलाए। वह भी हममें से नहीं जो पक्षपात की भावना से लड़े। और वह

व्यक्ति भी हममें से नहीं जो पक्षपात पर मरे।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : अर्थात् उसका हमसे कोई सम्बन्ध नहीं जो लोगों को पक्षपात की ओर बुलाता है, इसी के लिए लड़ता और पक्षपात पर ही उसकी मृत्यु होती है। उसकी नीति हमारे लाए हुए दीन और धर्म के बिलकुल विरुद्ध है। इस्लाम अज्ञानपूर्ण पक्षपात को मिटाने आया है न कि उसको बाक़ी रखने और उसके विकास के लिए। नबी (सल्ल॰) से पूछा गया कि पक्षपात क्या है? तो इसके उत्तर में आप (सल्ल॰) ने कहा, "यह कि तुम ज़ुल्म में अपनी क़ौम की सहायता करो।" (हदीस : अबू-दाऊद) अर्थात् तुम्हें सत्य और न्याय का ध्यान न हो। क़ौम ज़ुल्म और अन्याय की नीति अपनाए हुए हो और तुम फिर भी उसे अपना सहयोग देने लगो, यह उस पक्षपात का एक उदाहरण है जिसे इस्लाम समाप्त करने के लिए आया है।

(2) हज़रत मुस्लिमा-बिन-अक़वा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जो व्यक्ति हम (मुसलमानों) पर तलवार उठाए वह हममें से नहीं।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात् जो हमारे साथ लड़ने के लिए तत्पर हो फिर इस विद्रोहात्मक नीति के साथ उसका सम्बन्ध हमारे साथ कैसे रह सकता है।

(3) हज़रत सईद-इब्ने-अबी-सईद (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"वह व्यक्ति हममें से नहीं जो क़ुरआन न गुनगुनाए।"

(हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : क़ुरआन का एक हक़ यह भी है कि उसे ठहर-ठहरकर अच्छी आवाज़ से पढ़ा जाए। उसमें उच्चारण का दोष न पाया जाए। अरब के लोग विशेष रूप से अपनी बैठकों और यात्राओं में तरन्नुम के साथ कविताएँ और छन्द पढ़ा करते थे। क़ुरआन के अवतरण के

पश्चात् मुसलमानों को इसकी आवश्यकता ही नहीं रही। क़ुरआन में वह स्वर-सौन्दर्य, लयबद्धता और आकर्षण मौजूद है कि जिसकी मिसाल नहीं मिलती। अब जो क़ुरआन के इस गुण से वंचित रहे और उसका आनन्द न ले, समझिए कि वह क़ुरआन के एक महत्वपूर्ण हक़ की उपेक्षा कर रहा है। इसलिए आप (सल्ल॰) सचेत कर रहे हैं कि क़ुरआन को अच्छे स्वर के साथ पढ़ा जाए। मुस्लिम समुदाय के पास क़ुरआन को एक प्राणवर्द्धक गान की हैसियत प्राप्त है, जिससे लाभान्वित न होना एक प्रकार से मुस्लिम गरोह से विलग होने का अर्थ रखता है।

इसका ध्यान रहे कि क़ुरआन में लहजा और स्वरसंगति पाई जाती है। क़ुरआन के पाठ में इसका पालन करना चाहिए। उससे हटकर सामान्य गानों की तरह उसे पढ़ना सही न होगा।

(4) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

> "वह व्यक्ति हममें से नहीं जो बड़ों का आदर और छोटों पर दया न करे और भलाई का आदेश देने तथा बुराई से रोकने के कर्तव्य का निर्वाह न करे।" (हदीस : तिरमिज़ी)

व्याख्या : इस हदीस में इस्लाम के एक व्यापक चरित्र का उल्लेख हुआ है। इस्लाम की शिक्षा यह है कि अपने बड़ों की प्रतिष्ठा का आदर किया जाए और अपने छोटों से हमारा व्यवहार दयाभाव और प्रेम का हो। इसी के साथ हमारा यह भी कर्तव्य होता है कि नेकी और भलाई को फैलाने तथा बुराई को मिटाने, लोगों को सीधे मार्ग पर लाने और उन्हें बुराइयों से दूर रखने का भी प्रयास करते रहें। इससे ग़ाफ़िल न हों। नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि धर्म के इन आदेशों और शिक्षाओं की उपेक्षा करके जो व्यक्ति जीवन व्यतीत करता है उसे जान लेना चाहिए कि वह उस मार्ग से हटकर चल रहा है जिस मार्ग पर लोगों को चलाने और जिसकी ओर लोगों को बुलाने के लिए मुझे भेजा गया है।

जिनसे ख़ुदा बात न करेगा

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तीन आदमी ऐसे हैं जिनसे अल्लाह क़ियामत के दिन बात तक नहीं करेगा। एक वह एहसान जतानेवाला जो कुछ देता है तो एहसान अवश्य जताता है, दूसरा झूठी क़सम खाकर अपने माल की निकासी करनेवाला और तीसरा इज़ार (लुंगी, पाजामा वग़ैरह) लटकानेवाला।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : किसी पर कोई एहसान करके उसपर अपना एहसान जताना अत्यन्त गिरा हुआ और अशिष्ट कर्म है। इसी प्रकार अपने सांसारिक लाभ के लिए झूठी क़समें खाकर ख़रीदार को धोखा देनेवाले व्यक्ति की भी यह हैसियत नहीं रहती कि अल्लाह से वार्तालाप का श्रेय उसे प्राप्त हो। इसी तरह अल्लाह उस व्यक्ति से भी बात न करेगा जो घमण्ड से इज़ार (पाजामा या लुंगी इत्यादि) लटकाए चलता हो। नबी (सल्ल॰) के समय में अधिकतर लोग इज़ार पहनते थे। इसलिए इज़ार का ज़िक्र किया गया अन्यथा क़मीस और कुर्ता इत्यादि दूसरे वस्त्र के विषय में भी यही आदेश है। उन्हें टख़नों से नीचे तक लटकाए रखना ठीक नहीं है। इससे घमण्ड प्रकट होता है।

(2) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"तीन व्यक्ति ऐसे हैं जिनसे अल्लाह बात नहीं करेगा, न उनकी ओर देखेगा और न उन्हें उत्तमता और पूर्णता प्रदान करेगा। उनके लिए दुखद यातना है। एक वह व्यक्ति जो जंगल में ज़रूरत से अधिक पानी रखता है फिर भी मुसाफ़िर को पानी से रोकता है। दूसरा वह व्यक्ति जिसने अस्र के बाद किसी के हाथ कोई माल बेचा और अल्लाह की क़सम खाई कि मैंने इसे इतने में ख़रीदा है। ख़रीदार ने उसकी

> बात को सच समझा जबकि उतने में उसने ख़रीदा नहीं था। तीसरा वह व्यक्ति जिसने इमाम (अधिकारी व्यक्ति) से केवल सांसारिक लोभ के लिए बैअत (आदेशानुपालन की प्रतिज्ञा) की। इमाम ने उसे कुछ दुनिया का माल दिया तो उसने बैअत पूरी की और यदि उसने नहीं दिया तो पूरी नहीं की।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में जिन तीन व्यक्तियों का ज़िक्र किया गया है वे इतने पतित और नैतिकता से वंचित लोग हैं कि उन्होंने अपनी प्रतिष्ठा और अपने सम्मान को ही खो दिया जो अल्लाह ने उन्हें प्रदान किया था। अब वे इसके पात्र ही नहीं हो सकते कि अल्लाह उनसे बात-चीत करके उन्हें सम्मानित करे। या उनपर दृष्टिपात करे और उनके व्यक्तित्व को उच्चता प्रदान करे।

भविष्यवाणियाँ

(1) हज़रत जाबिर (रज़ि) बयान करते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) को यह कहते हुए सुना कि–

> "शैतान इस बात से तो निराश हो गया कि प्रायद्वीप अरब में नमाज़ी (मुसलमान) उसे पूजेंगे। किन्तु वह उन्हें परस्पर भड़काएगा और लड़ाएगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : अर्थात अब ऐसा नहीं होगा कि लोग शैतान के अनुसरण में एकेश्वरवाद को त्यागकर अज्ञानकाल की तरह बहुदेववाद में ग्रस्त हो जाएँ। आप (सल्ल॰) की यह भविष्यवाणी असाधारण है। एक सच्चा पैग़म्बर ही भविष्य के बारे में ऐसी बात कह सकता है। नबी (सल्ल॰) को दुनिया से प्रस्थान किए हुए शताब्दियाँ बीत गईं। लेकिन अरब शिर्क और बहुदेववाद में नहीं पड़े। अलबत्ता उनमें परस्पर संघर्ष और लड़ाइयाँ हुईं, जिनकी सूचना इस हदीस में दी गई थी।

(2) हज़रत जाबिर-बिन-समुरह (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी

(सल्ल॰) ने कहा—

"यह दीन (इस्लाम) निरन्तर क़ायम रहेगा। मुसलमानों का एक गरोह इस (सत्य धर्म) पर लड़ता रहेगा, यहाँ तक कि क़ियामत का समय आ जाएगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : यह भविष्यवाणी भी असाधारण है और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के सच्चे होने का प्रमाण है। आप (सल्ल॰) ने सूचना दी कि सत्य धर्म, जिसको लेकर आप (सल्ल॰) आए थे, दुनिया में बाक़ी रहेगा। यह दीन अतीत की कहानी होकर रह जाए ऐसा कभी न होगा। मुसलमानों का एक गरोह इस दीन की सुरक्षा के लिए निरन्तर प्रयासरत रहेगा। न इस्लाम को मिटाया जा सकता है और न ही ऐसा होगा कि पूरा-का-पूरा मुस्लिम समुदाय सत्य से फिरकर रह जाए। जैसा कि यहूदियों और ईसाइयों की मिसाल हमारे समने मौजूद है।

(3) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"मेरे बाद कोई नबी नहीं होगा। अलबत्ता ख़लीफ़ा होंगे और वे बहुत होंगे। " (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) की अन्य कई भविष्यवाणियों की तरह यह भविष्यवाणी भी अक्षरशः पूरी हुई। आप (सल्ल॰) से पहले कितने ही रसूल और नबी दुनिया में आ चुके हैं। लेकिन आप (सल्ल॰) की भविष्यवाणी के अनुसार आपके बाद नबियों के आने का क्रम समाप्त हो गया। यदि किसी ने अपने नबी होने का झूठा दावा भी किया तो वह सफल नहीं हो सका। उसकी मक्कारी को अल्लाह ने खोलकर रख दिया।

इतिहास साक्षी है कि नबी (सल्ल॰) की दी हुई सूचना के अनुसार आप (सल्ल॰) के बाद बहुत-से ख़लीफ़ा और शासनाधिकारी हुए और उनकी ख़िलाफ़तें (हुकूमतें) क़ायम हुईं, जिन्होंने धार्मिक राज्य व्यवस्था को स्थापित रखने और उसके विस्तार के सम्बन्ध में असाधारण कार्य किए।

उपदेश

(1) हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"ऐ अल्लाह, पारलौकिक जीवन ही जीवन है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : नबी (सल्ल॰) के इस वाक्य में हज़ार उपदेश निहित हैं। यदि मनुष्य की समझ में यह बात आ जाए कि आख़िरत का जीवन ही मौलिक और अभीष्ट जीवन है तो फिर उसकी दुनिया बदल जाएगी। उसकी प्रातः और सन्ध्या का रंग कुछ और होगा। ऐसा व्यक्ति परलोक या आख़िरत की तैयारी से असावधान नहीं होगा। और न कभी वह संसार को अपना उद्देश्य बना सकता है। उसका प्रयास होगा कि दायित्वपूर्ण जीवन व्यतीत करे ताकि उसका पारलौकिक जीवन तबाह और विनष्ट न हो।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"सफल हो गया वह व्यक्ति जो मुस्लिम हुआ, उसे आवश्यकतानुसार आजीविका मिली। और अल्लाह ने उसे जितना दिया उसे उसने काफ़ी समझा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : वास्तविक सफलता तो आख़िरत की सफलता है। सांसारिक जीवन की दृष्टि से किसी व्यक्ति के सफल होने के लिए इतना ही पर्याप्त है कि उसे इतनी आजीविका प्राप्त हो कि उसकी आवश्यकताएँ पूरी हो रही हों। अल्लाह ने उसे सन्तोष-धन प्रदान किया हो कि किसी का धन और सम्पत्ति उसके लिए दुख का कारण न बने। सांसारिक जीवन की सफलता धन और अधिक सम्पत्ति पर निर्भर नहीं करती। अलबत्ता जो चीज़ इसके लिए अनिवार्य है, जिसका उल्लेख इस हदीस में स्पष्ट रूप से किया गया है, वह यह है कि मनुष्य मुस्लिम हो। इस्लाम और ईमान की दौलत से वंचित न हो। क्योंकि मोमिन और मुस्लिम न होने की दशा में उसका

पारलौकिक जीवन विनष्ट होकर रहेगा और उसका सांसारिक जीवन भी वास्तव में न अर्थपूर्ण होगा और न उसका कोई उच्च उद्देश्य हो सकता है।

(3) हज़रत सलमान-बिन-आमिर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"मोहताज और असहाय को सदक़ा या दान देना मात्र दान है किन्तु हक़दार नातेदार को सदक़ा देना सदक़ा भी है और नाते-रिश्ते को जोड़े रखना भी है।"

(हदीस : नसई, तिरमिज़ी)

व्याख्या : मनुष्य पर उसके नाते-रिश्तेदारों का विशेष हक़ होता है। इस हदीस में इस बात की ओर ध्यान दिलाया गया है कि यदि मनुष्य सदक़ा देने में अपने मोहताज और असहाय नातेदारों को विशेष रूप से प्राथमिकता देता है और उनपर अपना माल ख़र्च करता है तो उसे सदक़ा के फल से अतिरिक्त नाते-रिश्तों को जोड़े रखने का फल भी प्राप्त होता है। अर्थात् अल्लाह के यहाँ उसे दोहरा पुण्य और फल प्राप्त होगा।

(4) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा, "क्या तुम जानते हो कि निर्धन कौन है?" लोगों ने कहा कि निर्धन वह है कि जिसके पास न दिरहम है और न कोई और उपभोग सामग्री। आप (सल्ल॰) ने कहा—

"मेरे समुदाय में निर्धन वह है जो क़ियामत के दिन इस हाल में हाज़िर होगा कि उसके साथ नमाज़, रोज़ा और ज़कात सब थे किन्तु वह किसी को गाली देकर आया था, किसी पर मिथ्यारोपण करके आया था, किसी का माल मारकर खाया था, किसी का ख़ून बहाया था और किसी को पीटकर आया था। फिर एक-एक पीड़ित को उसकी नेकियाँ

दे दी जाएँगी। और यदि उसकी नेकियाँ बदला चुकाने से पहले ही समाप्त हो गईं तो उत्पीड़ितों की ख़ताएँ उसके हिसाब में डाल दी जाएँगी। अन्ततः वह नरक में डाल दिया जाएगा।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस में उन लोगों के लिए बड़ी चेतावनी है जो नमाज़-रोज़े के तो पाबन्द होते हैं, ज़कात देते हैं किन्तु अल्लाह के बन्दों के साथ उनका व्यवहार अत्याचारपूर्ण होता है। किसी को गाली देने में उन्हें न कोई झिझक होती है और न किसी को पीटने और उसका ख़ून बहाने में उन्हें कोई संकोच होता है। इसका परिणाम यह होगा कि क़ियामत के दिन उनकी सारी नेकियाँ उत्पीड़ितों में बाँट दी जाएँगी। और यदि बदला चुकाने में उनकी नेकियाँ पर्याप्त न हुईं तो उत्पीड़ितों की ख़ताएँ और उनके गुनाह ज़ालिमों के हिसाब में डाल दिए जाएँगे। अब उनके पास कुछ भी न होगा जो उन्हें नरक की आग से बचा सके।

(5) हज़रत इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"दो नेमतें ऐसी हैं कि जिनके सम्बन्ध में अधिकतर लोग धोखे और टोटे में पड़े होते हैं। और वे हैं स्वास्थ्य और अवकाश (फ़ुरसत)।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : ये दोनों ही नेमतें (सुखद चीज़ें) अत्यन्त मूल्यवान हैं। किन्तु अधिकतर लोग इनके मूल्य को नहीं जानते। वे बड़े ही भाग्यशाली हैं जो स्वास्थ्य और अवकाश के महत्व को भलि-भाँति समझते हैं। स्वस्थ अवस्था में और फ़ुरसत और अवकाश के समय जो अधिक-से-अधिक अल्लाह की बन्दगी में लगे होते हैं और अधिक से अधिक सुकर्म करने में लगे रहते हैं। वे इसे जानते हैं कि यह ज़रूरी नहीं है कि यह अवकाश और यह स्वास्थ्य जो उन्हें प्राप्त है देर तक रह सके। इसलिए वे समझते हैं कि समय को बरबाद करना घाटे और भ्रम में पड़े रहने के अतिरिक्त और कुछ नहीं।

(6) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"संसार मोमिन का कारागार है और काफ़िर (अधर्मी) का स्वर्ग है।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : काफ़िर या अधर्मी को जो भी सुख और आराम प्राप्त है वह केवल सांसारिक जीवन तक प्राप्त है। मृत्यु के पश्चात् उसके हिस्से में ईश्वरीय प्रकोप के सिवा और कुछ भी नहीं आएगा। अतः संसार ही उसकी जन्नत और स्वर्ग है। इसके विपरीत मोमिन व्यक्ति को इस जीवन के पश्चात् परलोक में जो सुख और आनन्द प्राप्त होगा उसके मुक़ाबले में यह संसार एक कारागार ही प्रतीत होता है। कारागार से तो हर क़ैदी रिहाई चाहता है। मोमिन भी संसार में संसार के लिए नहीं परलोक के लिए जीते हैं। वे जानते हैं कि हम परलोक के लिए पैदा हुए हैं। अतः हमारा वास्तविक वतन दुनिया नहीं आख़िरत या परलोक ही है। उनके दिल में अपने वतन का शौक़ निरन्तर बना रहता है।

वसीयतें

(1) हज़रत अबू-ज़र (रज़ि॰) कहते हैं कि मैंने अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) से निवेदन किया कि आप मुझे वसीयत करें। आप (सल्ल॰) ने कहा, "मैं तुम्हें अल्लाह का डर रखने की वसीयत करता हूँ। क्योंकि यह डर तुम्हारे हर कर्म को बहुत ही सँवारेगा।" मैंने कहा कि कुछ और मेरे लिए वसीयत करें। आप (सल्ल॰) ने कहा–

"क़ुरआन के पाठ को और प्रतापवान अल्लाह के स्मरण को अपने लिए अनिवार्य कर लो। यह आकाश में तुम्हारी याद का साधन होगा और धरती में तुम्हारे लिए प्रकाश होगा।"

(हदीस : बैहक़ी)

व्याख्या : यह एक लम्बी हदीस का अंश है। इस हदीस में नबी

(सल्ल.) से कई चीज़ों की वसीयत उद्धृत की गई है। पहली वसीयत आप (सल्ल.) ने अल्लाह का डर रखने की की कि इससे सारे ही काम सँवर सकते हैं। मनुष्य किसी न किसी कार्य में लगा रहता है। वह दुनिया का काम हो या दीन का। उसकी यह इच्छा भी रहती है कि उसका कोई काम बिगड़ने न पाए और उसे प्रत्येक कार्य में सफलता प्राप्त हो। आप (सल्ल.) ने बताया कि वास्तव में यदि कोई अल्लाह का डर रखता है तो उसके सभी कार्य ठीक हो जाएँगे।

कुरआन के पाठ और अल्लाह के अधिक-से-अधिक स्मरण के विषय में फ़रमाया कि इससे आकाश अर्थात् फ़रिश्तों में तुम्हारी चर्चा होगी। एक अन्य हदीस में भी आया है कि जब बन्दा संसार में अल्लाह को याद करता है तो अल्लाह उसे फ़रिश्तों की मजलिस में याद करता है। क़ुरआन में भी कहा गया है कि "तुम मुझे याद करो, मैं तुम्हें याद करूँगा।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-152)

कुरआन के पाठ और अल्लाह के स्मरण से दूसरा लाभ यह प्राप्त होगा कि इससे एक प्रकाश मिलेगा जिससे मनुष्य का अन्तर भी प्रकाशमान होगा और वाह्य जीवन में भी उसके लक्षण दिखाई देंगे। अल्लाह के आदेशों और उसकी शिक्षाओं का वह पूरे विश्वास के साथ पालन करेगा। कभी उसे कोई सन्देह नहीं हो सकता।

(2) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि.) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कहा—

> "किसी मुसलमान के लिए, जिसके पास ऐसा माल हो जिसकी वसीयत करनी हो, यह जाइज़ नहीं कि वह दो रातें इसके बिना गुज़ारे कि वसीयत उसके पास लिखी हुई मौजूद न हो।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : अर्थात् जीवन का क्या ठिकाना। कोई नहीं जानता कि जीवन में उसे जो अवकाश प्राप्त है वह कब समाप्त हो जाए। और फिर वसीयत लिखने-लिखाने का अवसर ही हाथ से जाता रहे। केवल वसीयत ही नहीं, जो भी ज़रूरी काम अपने ज़िम्मे हों उनको पूरा

करने में सुस्ती से कभी भी काम नहीं लेना चाहिए। नबी (सल्ल.) की इस वसीयत के इस महत्व का प्रत्येक व्यक्ति को एहसास होना चाहिए।

(3) हज़रत अली-इब्ने-अबू-तालिब (रज़ि.) बयान करते हैं कि अन्तिम बात जो अल्लाह के रसूल (सल्ल.) ने कही वह यह थी— "नमाज़, नमाज़ और अल्लाह से उनके विषय में डरते रहो जो तुम्हारी मिल्क में हों।" (हदीस : अबू-दाऊद)

व्याख्या : नमाज़ की पाबन्दी कितनी ज़रूरी है कि दुनिया से प्रस्थान करते हुए भी नबी (सल्ल.) ज़बान से नमाज़-नमाज़ कह रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि नमाज़ ही वास्तविक जीवन है। नमाज़ न हो तो जीवन निरर्थक होकर रह जाए।

दूसरी चीज़ दुनिया से विदा होते हुए जिसकी नबी (सल्ल.) ने ताकीद की वह यह है कि ग़ुलाम-लौंडी हों या जिन पर भी हमें अधिकर प्राप्त हो और जो भी हमारे अधीन हों उनके साथ हमारा व्यवहार अच्छा होना चाहिए और इस सम्बन्ध में अल्लाह से डरते रहना चाहिए।

हज़रत आइशा (रज़ि.) कहती हैं कि जब नबी (सल्ल.) का अन्तिम समय आ गया तो आप (सल्ल.) थोड़ी देरी के लिए बेहोश रहे। फिर होश में आए और अपनी आँख छत की ओर लगाई और कहा, "ऐ अल्लाह, उच्च साथियों के साथ कर दे।" हज़रत आइशा (रज़ि.) कहती हैं कि यही अन्तिम शब्द थे जो आप (सल्ल.) ने कहे।

(हदीस : मुस्लिम)

मालूम हुआ कि दुनिया से जाते हुए जो अन्तिम वसीयत की वह नमाज़ की पाबन्दी और लौंडी और ग़ुलाम आदि अधीनों के साथ अच्छे व्यवहार की वसीयत थी। और मृत्यु के समय जो अन्तिम शब्द आप (सल्ल.) ने कहे वे ये थे कि "ऐ अल्लाह मुझे उच्च साथियों के साथ कर दे।"

अल्लाह की अमान में

(1) हज़रत जुन्दुब-बिन-सुफ़ियान (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"जिस व्यक्ति ने सुबह की नमाज़ पढ़ी वह अल्लाह की अमान (शरण) में आ गया। अतः ऐ आदम के बेटे! अल्लाह तुझसे अपनी अमान के विषय में कुछ पूछ-गच्छ न करे।" (हदीस : मुस्लिम)

व्याख्या : इस हदीस से नमाज़ के एक विशेष पहलू पर प्रकाश पड़ता है। कोई व्यक्ति नमाज़ पढ़ता है तो अल्लाह का उससे विशेष सम्बन्ध हो जाता है। यही सम्बन्ध है जिसके कारण अल्लाह उसे अपनी अमान में ले लेता है। अब बन्दा इसका हक़दार हो जाता है कि अल्लाह दुनिया और आख़िरत दोनों में उसकी रक्षा करे। अब यदि कोई उसे किसी प्रकार की हानि पहुँचाने की कोशिश करता है तो उसे जानना चाहिए कि वह किसको हानि पहुँचाने जा रहा है। उसे अल्लाह की पकड़ से डरना चाहिए।

सुबह से दिन का आरम्भ होता है इसलिए सुबह की नमाज़ का ज़िक्र किया। मानो दिन आरम्भ होते ही बन्दा अपने रब की अमान में आ गया। जिस व्यक्ति के दिन अल्लाह की अमान में गुज़रें उसकी सफलता और उच्चता में किसे सन्देह हो सकता है।

नाज़ुक स्थिति

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"बन्दा कोई बात अल्लाह की प्रसन्नता और उसकी पसन्द की कहता है उसे इसकी परवाह नहीं होती, अल्लाह उसके कारण उसके दर्जे ऊँचे कर देता है। इसके विपरीत बन्दा कोई बात अल्लाह की नाराज़ी की कहता है, उसे इसकी

परवाह नहीं होती, इसके कारण वह जहन्नम में जा गिरता है।"
(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इससे ज्ञात हुआ कि सांसारिक जीवन में मनुष्य की स्थिति अत्यन्त गम्भीर है। इसका कारण सम्बन्ध की वह नज़ाकत है जो वह अपने रब के साथ रखता है। कोई बात यदि उसके मुख से ऐसी निकलती है जो अल्लाह की प्रसन्नता की है तो अल्लाह प्रसन्न होकर उसके दर्जे बढ़ा देता है, जबकि बात कहनेवाले को अपनी बात के मूल्य का विशेष एहसास भी नहीं होता। इसी प्रकार कभी किसी व्यक्ति की ज़बान पर अल्लाह की नाराज़ी की बात आ जाती है, उसे अपनी बात की ख़राबी का ख़याल भी नहीं होता, हालाँकि उसके कारण वह जहन्नम में जा गिरता है। सच्चे मोमिन वही हैं जिनको अपनी ज़िम्मेदारी का पूरा एहसास होता है और वे जो कुछ भी कहते और करते हैं उसमें अल्लाह की ख़ुशी और प्रसन्नता का पूरा ध्यान रहता है और वे अल्लाह से हर हाल में डरते रहते हैं।

बरज़ख़ (पितर लोक)

अगला चरण (आलमे-बरज़ख़, पितर लोक)

(1) हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा–

"जब तुममें से कोई व्यक्ति मरता है तो प्रातः और संध्या के समय उसे अपना ठिकाना दिखाया जाता है। यदि वह जन्नतवालों में से है तो उसे जन्नत और यदि वह दोज़ख़ी है तो उसे दोज़ख़ दिखाते हैं।" (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : इससे ज्ञात हुआ कि किसी के मरने का अर्थ यह कदापि नहीं होता कि वह बिलकुल विनष्ट हो गया। मरना वास्तव में मनुष्य के एक-दूसरे लोक में प्रविष्ट होने का नाम है, जिसे बरज़ख़ कहते हैं। वहाँ से वह लौटकर दुनिया में नहीं आ सकता। क़ियामत तक उसे उसी लोक में रहना होगा। वहाँ अल्लाह के आज्ञाकारी बन्दों को सुबह और शाम उनका आख़िरी ठिकाना जन्नत दिखाई जाएगी ताकि बरज़ख़ का जीवन उनके लिए नीरस होकर न रहे। इसके विपरीत अल्लाह के अवज्ञाकरी और अधर्मी व्यक्तियों को सुबह और शाम नरक दिखाई जाएगी जो उसका अन्तिम ठिकाना होगा।

सांसारिक जीवन में मनुष्य को यह विश्वास होना चाहिए कि मरने के बाद जीवन अपने दूसरे चरण में प्रवेश करता है। अल्लाह के यहाँ उसके लिए दो ही ठिकाने हैं। या तो उसके हिस्से में जन्नत आएगी या उसको दोज़ख़ में डाल दिया जाएगा। अब यह हमपर निर्भर है कि हम अपने लिए क्या पसन्द करते हैं– जन्नत या दोज़ख़। जन्नत प्राप्त करने के लिए सांसारिक जीवन में हमें ऐसे गुणों

से सुसज्जित होना चाहिए और हमारे कर्म ऐसे होने चाहिएँ जो जन्नत वालों के होते हैं।

फ़िरदौस (स्वर्ग)

(1) हज़रत अबू-हुरैरा (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने कहा—

"अल्लाह कहता है कि मैंने अपने नेक बन्दों के लिए ऐसी नेमतें (सुखद चीज़ें) तैयार कर रखी हैं जो न किसी आँख ने देखीं और न किसी कान ने सुनीं और न किसी मनुष्य के दिल में उनका ख़याल गुज़रा। यदि चाहो तो (क़ुरआन की) यह आयत पढ़ लो : कोई व्यक्ति उसे नहीं जानता आँखों की जो ठंडक उनके लिए छिपाई गई है।" (क़ुरआन, सूरा-32 सजदा, आयत-17) (हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह जन्नत का उत्तम परिचय है। जन्नत में नेक बन्दों के लिए सुख की जो सामग्री और उनके आनन्द के लिए जो चीज़ें मौजूद होंगी उनके मूल्य की आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते। कितने सौभाग्यशाली होंगे अल्लाह के वे बन्दे जो इनके पात्र होंगे।

(2) हज़रत इब्ने-उमर (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा—

"जब जन्नतवाले जन्नत में और दोज़ख़वाले दोज़ख़ में दाख़िल हो जाएँगे तो उनके मध्य एक पुकारनेवाला पुकार कर कहेगा कि ऐ दोज़ख़वालो, यहाँ मृत्यु नहीं। और ऐ जन्नतवालो, यहाँ मृत्यु नहीं। यहाँ सदैव रहना है।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : दोज़ख़ या नरक में किसी को भी मौत न आएगी कि वह अल्लाह की यातना से छुटकारा पा सके। जन्नतवाले भी स्थायी रूप से जन्नत में रहेंगे। वहाँ न उन्हें मृत्यु का भय होगा और न वहाँ

वे शोकाकुल होंगे। अल्लाह से माँगने की चीज़ उसकी जन्नत ही है। दोज़ख़ से अल्लाह हमें बचाए रखे। विनष्ट हुआ वह व्यक्ति जिसका ठिकाना नरक हुआ।

(3.) हज़रत अबू-सईद ख़ुदरी (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि नबी (सल्ल॰) ने कहा–

"अल्लाह जन्नतवालों को आवाज़ देगा कि ऐ जन्नतवालो! वे उत्तर में कहेंगे कि ऐ हमारे रब, हम उपस्थित हैं तेरी सेवा में और भलाई तेरे ही हाथों में है। अल्लाह कहेगा, क्या तुम लोग राज़ी और ख़ुश हो? वे कहेंगे कि ऐ रब, हम क्यों न राज़ी होंगे जबकि तूने हमें वह चीज़ प्रदान की जो अपने स्रष्टजीवों में किसी को प्रदान नहीं की। अल्लाह कहेगा कि क्या मैं उससे भी उत्तम चीज़ न दूँ? वे कहेंगे कि ऐ अल्लाह इससे बढ़कर कौन-सी चीज़ हो सकती है? अल्लाह कहेगा कि मैं तुमसे राज़ी और ख़ुश रहूँगा। अब इसके बाद तुमसे कभी अप्रसन्न नहीं हूँगा।"

(हदीस : बुख़ारी)

व्याख्या : यह हदीस बताती है कि जन्नतवालों के हिस्से में केवल शाश्वत जीवन ही नहीं आएगा बल्कि अल्लाह की प्रसन्नता और ख़ुशी भी सदैव के लिए उनके हिस्से में आएगी। अल्लाह उनसे कभी भी अप्रसन्न न होगा। वे अपने रब से राज़ी होंगे, उनका रब उनसे राज़ी होगा। यही सबसे बड़ी सफलता है। काश दुनिया में लोगों को इसका एहसास हो सकता!

अल्लाह के दर्शन

(1.) हज़रत जरीर-बिन-अब्दुल्लाह (रज़ि॰) से उल्लिखित है वे बयान करते हैं कि हम अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के पास बैठे हुए

थे। आप (सल्ल॰) ने चाँद की ओर देखा जो पूर्णिमा की रात थी। फिर कहा—

"निश्चय ही तुम अपने रब को स्पष्ट रूप से देखोगे, जिस प्रकार इस चाँद को देख रहे हो। उसके देखने में तुम्हें कोई कठिनाई न होगी, यदि तुमसे हो सके तो सूर्य के निकलने और डूबने से पूर्व नमाज़ के मुक़ाबले में कोई चीज़ तुमपर ग़ालिब न आ जाए, तो अवश्य ऐसा करो। फिर आप (सल्ल॰) ने पढ़ा : और अपने रब का गुणगान करो सूर्य निकलने और डूबने से पहले।" (हदीस : बुख़ारी, मुस्लिम)

व्याख्या : अल्लाह के दर्शन और दीदार से बढ़कर किसी सुखद चीज़ और आनन्द की हम कल्पना भी नहीं कर सकते। अल्लाह के दर्शन की कामना प्रत्येक व्यक्ति के दिल में पाई जाती है। नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि तुम्हारी यह कामना पूरी होगी। तुम क़ियामत के दिन बिना किसी कठिनाई और परेशानी के अपने रब के दर्शन कर सकोगे। भौतिक जगत् में आँखों से अल्लाह के दर्शन सम्भव नहीं, लेकिन अल्लाह जन्नतवालों को अन्य विशेषताओं के साथ इसकी क्षमता और शक्ति भी प्रदान करेगा कि वे अपने रब का जलवा और छवि देख सकें। बुख़ारी और मुस्लिम ही की एक हदीस में है कि लोगों और उनके रब की ओर देखने में कोई चीज़ आड़ न बनेगी, सिवाय किबरियाई (महानता) की चादर के। अर्थात् जन्नतवालों और उनके रब के मध्य दर्शन के समय कोई आवरण नहीं होगा। केवल अल्लाह की महानता और उसके प्रताप का परदा होगा। अल्लाह जन्नतवालों को दर्शन की शक्ति प्रदान करेगा।

नबी (सल्ल॰) कहते हैं कि तुम पालनकर्ता प्रभु के दर्शन की कामना करते हो तो सुबह और शाम नमाज़ की पाबन्दी करो। सांसारिक जीवन में नमाज़ ही प्रभु के दर्शन का बदला है। जो

सांसारिक जीवन में प्रातः और संध्या समय अल्लाह की सेवा में उपस्थित होते और उसके गुणगान में व्यस्त होते हैं, अल्लाह अनिवार्यतः उनसे छिपा नहीं रहेगा। वह उन्हें अपने सामीप्य और दर्शन से सम्मानित करेगा। पारलौकिक जीवन वास्तव में सांसारिक जीवन ही का स्वभाविक परिणाम है।

☆☆☆